बाँदा जनपद की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण :
अतर्रा तहसील की चावल मिलों के सन्दर्भ में एक आलोचनात्मक आर्थिक विश्लेषण
(आठवीं पंचवर्षीय योजना से अद्यतन समय तक)

AGRO-BASED INDUSTRAILIZATION OF BANDA :
A CRITICAL ECONOMIC ANALYSIS WITH SPECIAL REFERENCE TO RICE MILL OF ATARRA TEHSIL
[FROM EIGHTH PLAN PERIOD TO DATE]

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ०प्र०)
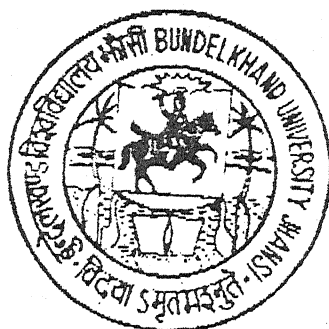
कला संकाय के अन्तर्गत अर्थशास्त्र विषय में
डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

निर्देशक :
डॉ० सतीश कुमार त्रिपाठी
रीडर एवं विभागाध्यक्ष
पं० जवाहर लाल नेहरू पी०जी० कालेज
बाँदा (उ०प्र०)

शोधार्थिनी
अर्चना उपाध्याय
एम०ए०, एम०एड०

शोध केन्द्र
पं० जवाहर लाल नेहरू पी०जी०कालेज, बाँदा

डॉ0 सतीश कुमार त्रिपाठी
एम0ए0 (अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र), पी-एच0डी0
रीडर एवं विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र
पं0 जवाहर लाल नेहरू पी0जी0कालेज
बाँदा - 210001(उ0प्र0)

निवास :
''ज्येति-कलश''
विश्वविहार कॉलोनी
कालू कुआँ, बबेरू रोड
बाँदा (उ0प्र0)
फोन - 05192-220571

दिनांक :......................

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **अर्चना उपाध्याय** द्वारा प्रस्तुत शोध-प्रबंध **''बाँदा जनपद की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण''** मेरे निर्देशन में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी के पत्रांक - **बु0वि0/प्रशा0/शोध/ 2002/ 6537-39 दिनांक** 03/10/2002 के द्वारा अर्थशास्त्र विषय में शोध कार्य के लिए पंजीकृत हुआ। इन्होंने मेरे निर्देशन में आर्डीनेन्स की धारा 7 द्वारा वांछित अवधि तक कार्य किया तथा इस अवधि में शोध-केन्द्र में उपस्थित रहीं। यह इनकी मौलिक कृति है। इन्होंने इस शोध के सभी चरणों को अत्यन्त संतोषजनक रूप में परिश्रम पूर्वक सम्पन्न किया है। मैं इस शोध-प्रबन्ध को प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

Satish Kumar
(डॉ0 सतीश कुमार त्रिपाठी)
शोध निर्देशक
रीडर एवं विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र
पं0 जवाहर लाल नेहरू पी0जी0कालेज
बाँदा

यवनिका

प्राचीन काल से कृषि का महत्त्व भारत में रहा है। कृषि के द्वारा ही मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, हमारे देश में कृषि अर्थव्यवस्था का आधारत स्तम्भ है। देश के आर्थिक विकास में कृषि आधारित बड़े उद्योगों की अहम् भूमिका रही है। देश में कृषि उद्योगों की स्थापना के फलस्वरूप ही देश की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ हो रही है। बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग अर्थव्यवस्था का आधार हैं। कृषि-आधारित उद्योगों के अन्तर्गत यहाँ दाल मिल, चावल मिल, आटा मिल, तेल मिल हैं। इन कृषि-आधारित उद्योगों के पीछे कौन से कारक विद्यमान हैं, इनका उत्पादन क्या है श्रम प्रबंध कैसा है, तथा इन उद्योगों को लाभ हो रहा है या हानि हो रही है। इन्हीं आर्थिक निहितार्थों के उद्घाटन हेतु शोध प्रयास अवदानित है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध ''बाँदा जनपद की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण'' में जो निष्कर्ष सामने आये हैं, वे जहाँ कृषि-आधारित उद्योगों की स्थिति स्पष्ट करते हैं वहीं दूसरी ओर इन उद्योगों की समस्याओं का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। ''बाँदा जनपद की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण'' शोध-प्रबन्ध का विषय चुनने की प्रेरणा मुझे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विशेषज्ञ एवं भारतीय अर्थशास्त्र के आधुनिक चिन्तनशील विद्वान डॉ0 सतीश कुमार त्रिपाठी, जो मेरे शोध-प्रबन्ध के निर्देशक भी हैं से प्राप्त हुई जिनका गहन निर्देशन ही शोध-प्रबन्ध का राज है।

प्रत्येक अध्ययन एक सामूहिक प्रयत्न का प्रतिफल होता है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के प्रणयन में जिन परोपकारी सज्जन एवं विद्वान व्यक्तियों तथा संस्थाओं का सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है मैं उनके प्रति अपना आभार प्रकट करना चाहूँगी।

सर्वप्रथम मैं अपने गुरु एवं निर्देशक डॉ0 सतीश कुमार त्रिपाठी जी, जिनका विराट एवं महान व्यक्तित्व स्वतः ही मेरा निर्देशन करता रहा है के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ उनकी स्नेहिल छाया आगे भी मेरा मार्गदर्शन करती रहे, यही मेरी कामना है। इस क्रम में पं0 जे0एन0कालेज, बाँदा के प्राचार्य डॉ0 नन्दलाल शुक्ल, अर्थशास्त्र विभाग के प्रवक्ता डॉ0 विजय सिंह चौहान जी की भी आभारी हूँ।

डॉ0 डी0एस0श्रीवास्तव संकायाध्यक्ष शिक्षा बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की अत्यन्त आभारी हूँ। जिन्होंने समय-समय पर मेरा मार्ग दर्शन एवं सहयोग प्रदान किया।

मैं पुस्तकालयाध्यक्ष पं0जे0एन0पी0जी कालेज, बाँदा की भी आभारी हूँ जिन्होंने मुझे उन

सभी पुस्तकों को उपलब्ध कराया, जिनका अध्ययन कर मैंने अपने शोध कार्य को पूर्ण किया।

मैं अपने पूज्य श्वसुर श्री राजेन्द्र प्रसाद त्रिपाठी तथा अपनी आदरणीया सास श्रीमती शिवदेवी त्रिपाठी की भी आभारी हूँ जिनके आशीर्वाद से यह कार्य सफल हो सका है। मैं अपने ताऊ श्री चन्द्रिका प्रसाद उपाध्याय के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित कर रही हूँ जिनकी प्रेरणा एवं आशीर्वाद से शोध-प्रबन्ध पूर्ण कर सकी।

मैं अपने पिता डॉ० सी०एल० उपाध्याय तथा पूज्य माता श्रीमती मिथलेश उपाध्याय के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस कार्य को पूर्ण करने में सदा सहयोग प्रदान किया है।

मैं अपने श्रद्धेय पति श्री संजय त्रिपाठी, अपने भाई प्रशान्त, निशान्त, सुधेन्दु, विनय तथा विनीत एवं आशीष की भी आभारी हूँ जिनके सहयोग के बिना यह कार्य पूर्ण नहीं हो सकता था।

अन्त में मुझे विश्वास है कि इस गवेषणात्मक अनुशीलन को अर्थशास्त्र क्षेत्र के अधिकारियों, विद्वानों एवं मौलिक चिन्तकों द्वारा प्रोत्साहन प्राप्त होगा और यह कृति अपनी मूल्यवत्ता से समादृत हो सकेगी। यदि जनपदीय औद्योगिक विकास की नीतियों के सन्दर्भ में यह प्रयास किसी भी प्रकार से उपयोगी सिद्ध होता है तो शोधार्थिनी उसे अपने श्रम का पुरस्कार समझेगी।

अर्चना उपाध्याय

(अर्चना उपाध्याय)

एम०ए०, एम०एड०

शोध केन्द्र

पं० जवाहर लाल नेहरू पी०जी० कालेज

बाँदा (उ०प्र०)

अध्याय अनुक्रमणिका

तालिका अनुक्रमणिका

चित्र कोशिका

मानचित्र

प्रथम अध्याय

प्रथम अनुक्रम

पूर्वपीठिका

1.1 भारतीय अर्थव्यवस्था व कृषि आधारित-उद्योग

(अ) जनपद की भौगोलिक सामाजिक आर्थिक संरचना के विशिष्ट पहलू

(ब) शोध समस्यागत साहित्य-सिंहवलोकन

1.2 शोध समस्या का स्वरूप एवं शोध अभिकल्प

1.3 शोध समस्या की कतिपय संकल्पनायें

1.4 शोध की प्रवर्तमान प्रासंगिकता

1.5 अध्ययनगत सीमाएँ

1.6 अवधारणाएँ

भारत का मानचित्र
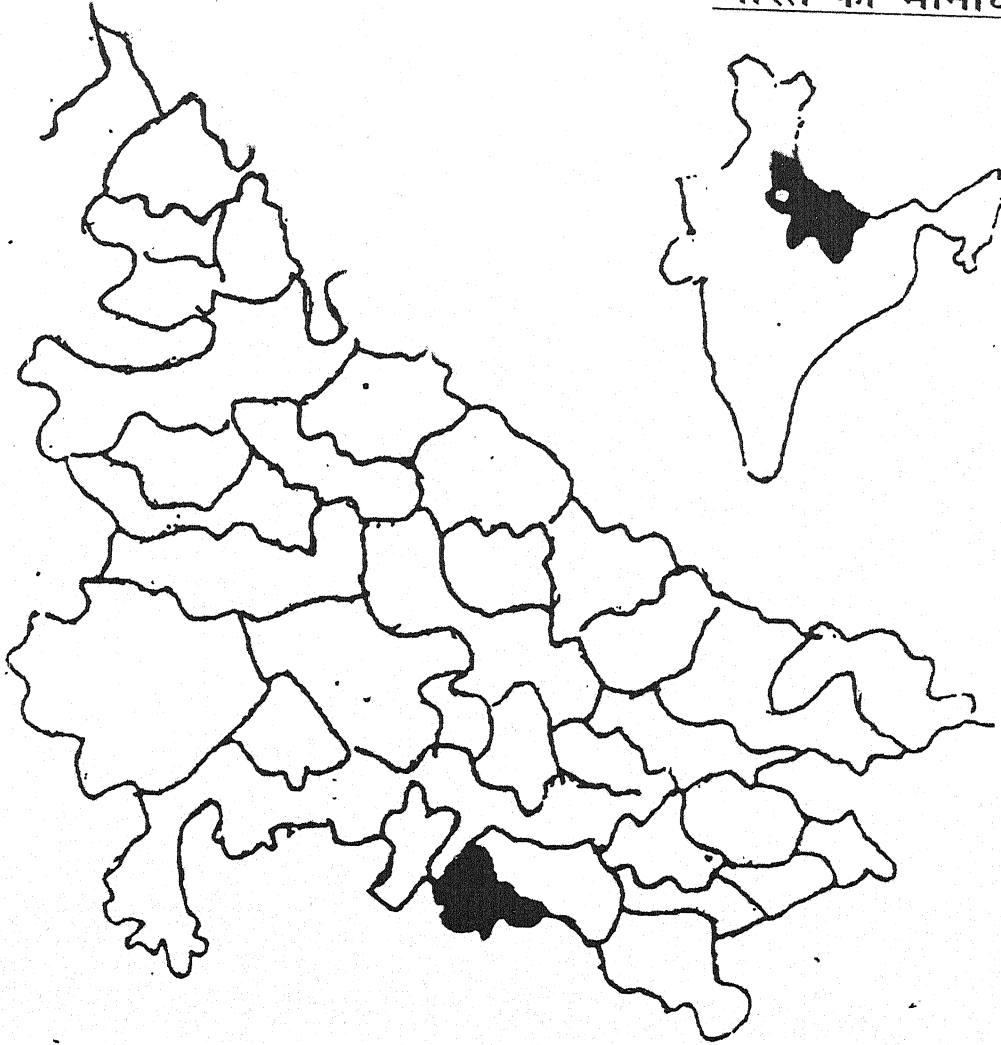
उत्तर प्रदेश का मानचित्र
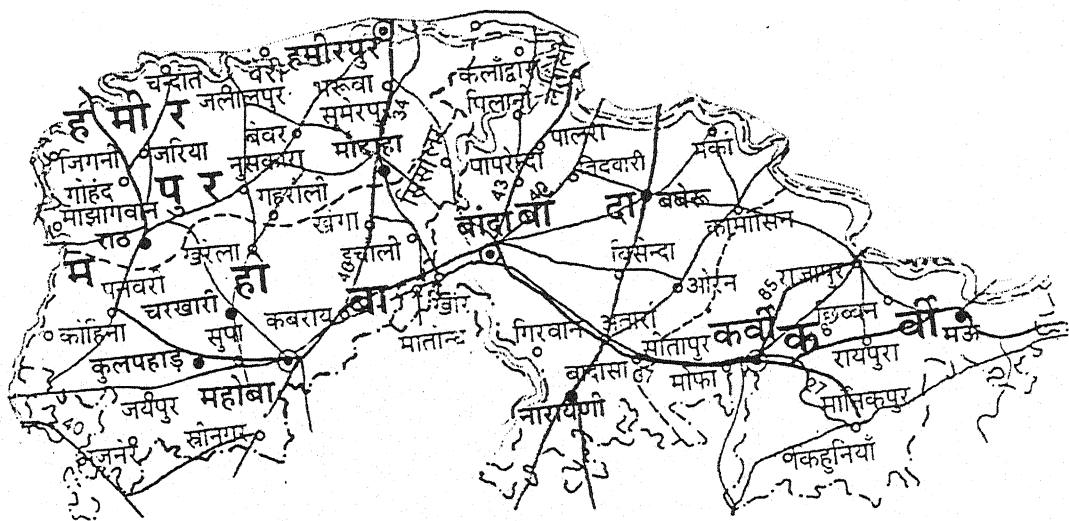
चित्रकूट धाम मण्डल, बाँदा का मानचित्र
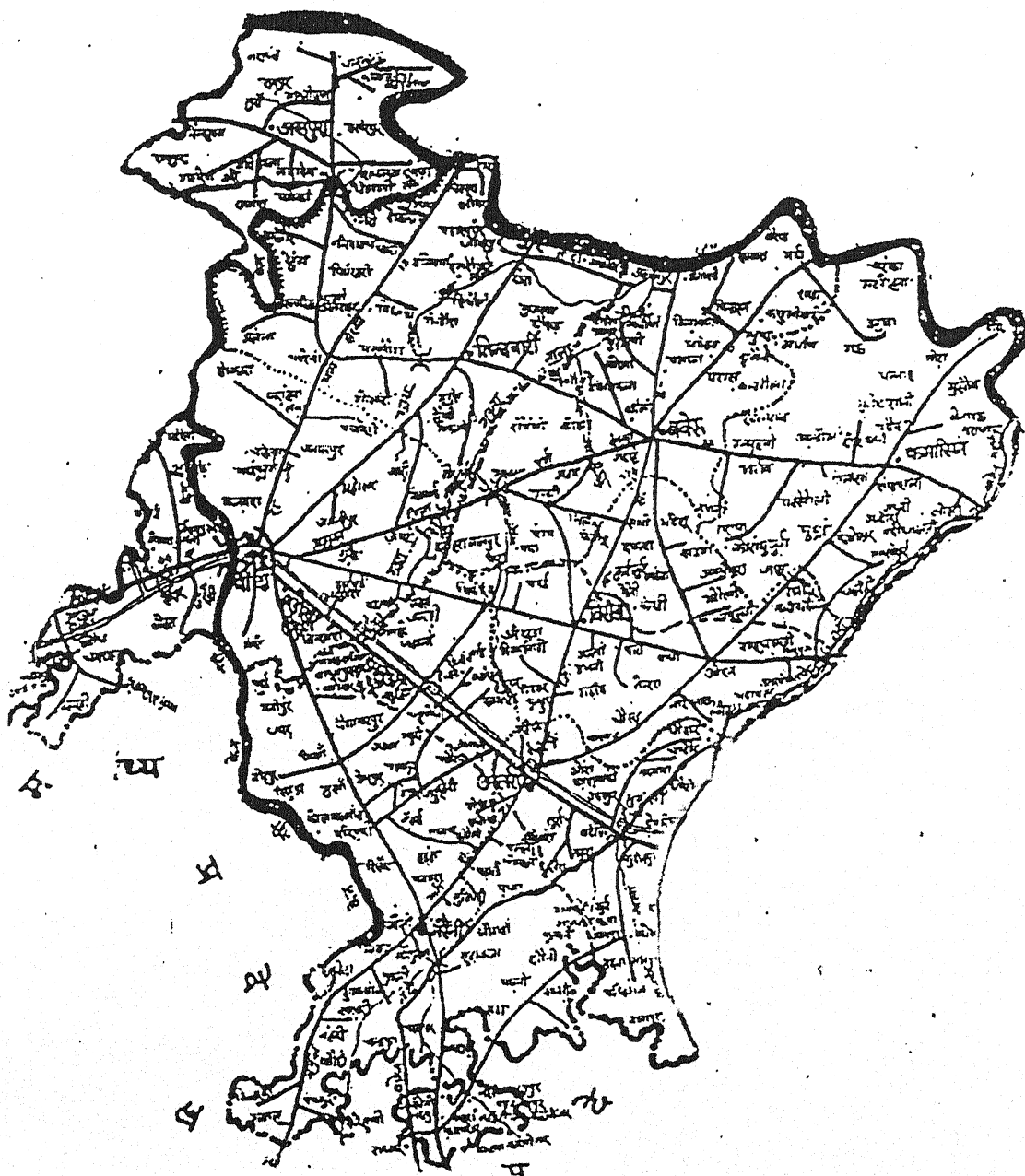
बाँदा जनपद का मानचित्र
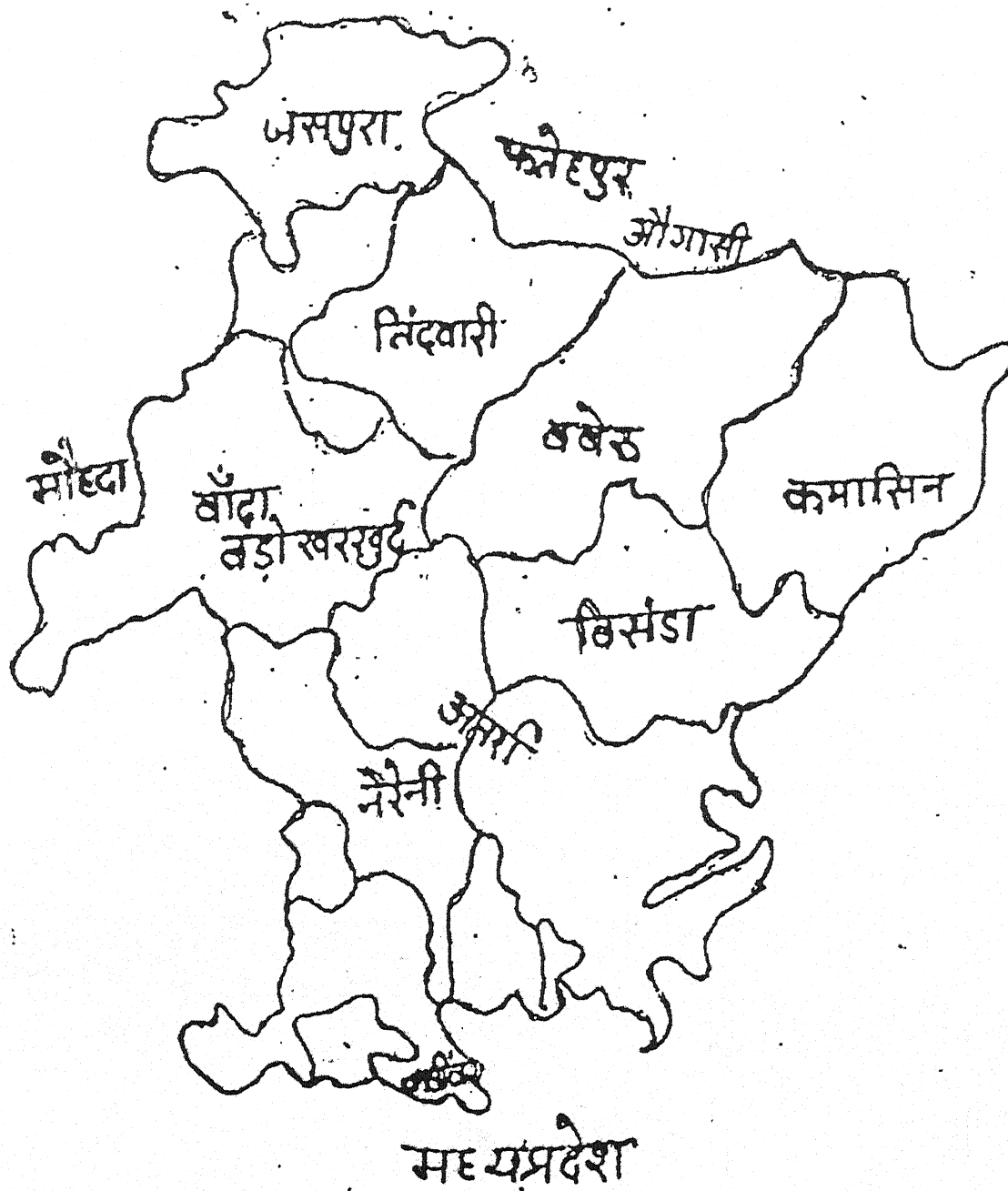
विकास खण्ड वार बाँदा जनपद का मानचित्र

।। श्री गणेशाय नमः।।

प्रथम अनुक्रम

पूर्वपीठिका

"The gep in our economy is between what we have and what we think we ought to have - and this is a moral problem not an economic one."

- PAUL HEYNE

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ की 75 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। कृषि आधारित उद्योग ग्रामीण विकास की योजनाओं का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। देश में गिरती ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को संभालने तथा कृषि में तीव्र विकास के अवरोधों को समाप्त करने के लिए कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास, विस्तार की व्यापक संभावनाएँ है। कृषि उद्योगों की स्थापना से कृषि उपजों को कच्चे माल के रूप में प्रयोग करके व्यपारिक स्तर पर वस्तुओं का निर्माण करने का कार्य किया जाता है। इससे आर्थिक तथा सामाजिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। उत्पादों की उपयोगिता के आधार पर कृषि उद्योगों का विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है- प्रथम उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन करने वले कृषि उद्योग, द्वितीय उत्पादक वस्तुओं का निर्माण करने वाले कृषि उद्योग, तृतीय उपजों को विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजार कर उपयोग योग्य बनाने वाले कृषि उद्योग।

देश में स्वतंत्रता के पश्चात् कृषि उत्पादन में वृद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। आंकड़ों से स्पष्ट होता है जहाँ वर्ष 1984-85 में 14.55 करोड़ टन खाद्यान्नों का उत्पादन होता था, वहीं वर्ष 1995-96 में यह लगभग 19 करोड़ टन है। कृषि क्षेत्र में इस उल्लेखनीय सफलता का श्रेय देश के कृषकों, वैज्ञानिकों तथा कृषि विस्तार कार्यकर्ताओं को जाता है। कृषि उत्पादन वृद्धि के फलस्वरूप शासकीय प्रयासों में कृषकों को उत्कृष्ट किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, सिंचाई सुविधाएं उदारता से उपलब्ध कराई गई। वर्ष 1997-98 के बजट प्रावधान में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास हेतु 29 अरब

69 करोड़ रूपये उपलब्ध कराये गये जिसका उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं के विस्तार तथा कृषि सम्बद्ध क्षेत्रों पर किया जायेगा।

कृषि के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में सदैव इस क्षेत्र को प्राथमिकता प्रदान की है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों पर कुल 22,462 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया था।

ग्रामीण विकास में कृषि उद्योग :-

अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के साथ ग्रामीण विकास प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। भारत में अभी ग्रामीण विकास की गति धीमी है जिसका प्रमुख कारण आधारभूत संसाधनों का पूर्णतः विकसित न हो पाना है। वर्तमान औद्योगीकरण के युग में ग्रामीण विकास में कृषि आधारित उद्योगों का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इन उद्योगों में कम पूंजी की आवश्यकता होती है और इनका संचालन कुशलतापूर्वक किया जा सकता है। कृषि आधारित उद्योगों के साथ ग्रामीण विकास का प्रत्यक्ष संबंध है। देश में अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास कर कृषि पर पूर्णतः आश्रित है और गरीबी की रेखा के नीचे जीवन-यापन करने को बाध्य है। ऐसे में कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से अनेक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। केन्द्र सरकार ने परम्परागत कृषि संरचना में परिवर्तन करने के उद्देश्य से कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना पर विशेष बल दिया है। विश्व के अनेक विकसित देशों ने भी गहन कृषि, नवीन कृषि तकनीक और कृषि अनुसंधान प्रणाली अपनाकर कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना की है। ग्रामीण विकास में कृषि उद्योगों की भूमिका को निम्न तथ्यों से परिलक्षित किया जा सकता है:-

- कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना से ग्रामीण आधारभूत सुविधाओं का विकास होता है।
- इन उद्योगों में स्थानीय लोगों को ही रोजगार में लगाये जाने से जहां एक ओर ग्रामीण पलायन पर रोक लगेगी, वहीं जनसंख्या की समस्या पर नियंत्रण किया

जा सकेगा। इस प्रकार ग्रामीणों में रोजगार की संभावनाएं बढ़ेगी।

- औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप सामाजिक और आर्थिक विकास होगा और ग्रामीणों के जीवन-स्तर पर सुधार होगा।
- ग्रामीण और शहरी अर्थ-व्यवस्था में व्याप्त असंतुलन में कमी आएगी।
- ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगीकरण से कृषि में सहायता मिलेगी तथा नई तकनीकों और उन्नत बीजों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होगी।
- कृषकों को रोजगार मिलने से मानवीय शक्ति का सही सदुपयोग हो सकेगा, जिससे राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी।

उपरोक्त तथ्यों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वास्तव में कृषि आधारित उद्योगों पर समुचित ध्यान दिये बिना ग्रामीण विकास नहीं हो सकता। इस बात को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1996-97 के बजट में इनके विकास का कार्यक्रम बनाया गया है तथा कृषकों एवं ग्रामीणों को आत्मनिर्भरता पर जोर दिया गया है।

कृषि आधारित उद्योगों की संभावनाएँ :-

यद्यपि कृषि उत्पाद विभिन्न उद्योगों के आधार हैं, कच्चे माल की प्राप्ति का स्रोत कृषि से ही संभव हो पाता है। इस दृष्टि से भारत में इन कृषि आधारित उद्योगों के विकास और विस्तार की संभावनाएँ काफी अधिक हैं :-

वनस्पति घी, तेल उद्योग :-

इस उद्योग में सूरजमुखी, मूंगफली, रैपसीड व तिलहन आदि का प्रयोग कर, वनस्पति घी या रिफान्ड खाद्य तेल प्राप्त किया जा सकता है जिसकी मांग देश के अलावा विश्वव्यापी है।

फ्रोजन फल और सब्जी उद्योग :-

इस उद्योग के माध्यम से फलों तथा अन्य खाद्य पदार्थो को अत्यन्त न्यून तापक्रम पर डिब्बों में सील कर दिया जाता है। यह उद्योग पाश्चात्य देशों में अत्यन्त लोकप्रिय है।

आज भारत में इसका उपयोग शाकाहारी वस्तुओं के संरक्षण में हो रहा है।

चीनी, गुड और खाण्डसारी उद्योग :

यह उद्योग उन क्षेत्रों में स्थापित किया जा सकता है जहां पर्याप्त मात्रा में गन्ना पैदा किया जाता हो। इसके अतिरिक्त चीनी उत्पादन में प्रयुक्त कच्चे माल के अवशेषों से बीयर का उत्पादन भी किया जा सकता है।

चावल, गेहूं, दलहन, तिलहन उद्योग :-

इसमें चावल का कोढ़ा (कना) जो निरर्थक होता है, उससे तेल निकालकर विभिन्न प्रकार के साबुनों का निर्माण किया जा सकता है। गेहूं, दलहन और तिलहन के अवशिष्ट पदार्थो से अनेक प्रकार के उत्पाद तैयार किये जा सकते है।

कृषि वानिकी उद्योग :-

कृषि भूमि पर नियमित फसलों के साथ पशुचारा, ईधन, जैविक खाद, फल, औद्योगिक कच्चा माल आदि प्रदान करने वाले उपयुक्त वृक्षों का रोपण किया जा सकता है और उन वृक्षों से प्राप्त कच्चे माल को उद्योगों में प्रयुक्त कर विकेन्द्रित और स्वावलंबी समाज की स्थापना की जा सकती है।

इसके अतिरिक्त कपास, जूट, आम, बबूल आदि के अवशिष्ट पदार्थो से भी ग्रामीण कृषक अपनी आय में वृद्धि कर सकता है। ग्रामीण विकास की समृद्धि के लिए स्वरोजगार तथा ट्राइसेम कार्यक्रमों से रोजगार की संभावनाएं अवश्य है किंतु ग्रामीणों में कृषि उद्योगों का विकास ही बेरोजगारी दूर करने तथा सम्पन्नता का प्रमुख स्रोत है क्योंकि इनके लिए कच्चा माल अर्थात कृषि उत्पाद यहीं पर उपलब्ध हैं। साथ ही इन उद्योगों के उत्पादों के निर्यात की बहुत संभावनाएं है। वर्तमान स्थिति के अनुसार कुल निर्यात व्यापार में कृषि तथा उससे सम्बद्ध वस्तुओं की प्रतिभागिता 70 प्रतिशत है। इस प्रकार निर्यात की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में कृषि आधारित उद्योग महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं। इन उद्योगों को लगाने से ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की प्रत्यक्ष रोजगार की संभावनाओं में वृद्धि

होगी और उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति के लिए कृषि जिन्सों का उत्पादन बढ़ाना होगा। इससे कृषि संबंधित क्रियाओं में रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध हो सकेंगे। इस तरह कृषि आधारित उद्योग बहुउद्देशीय सिद्ध हो सकते हैं। इन उद्योगों की सूची तालिका से स्पष्ट होती है।

तालिका संख्या- अ 1.1

भारत में कृषि आधारित संभावित उद्योग

क्र.सं.	इकाई का नाम	कच्च माल विनियोग	पूंजी संख्या	रोजगार
1.	बेकरी फ्लोर मिल	गेंहू	012.50	15
2.	पोषण आहार	गेंहू, ज्वार,चना	040.00	25
3.	सोया मिल्क	सोयाबीन	025.00	18
4.	पशु आहार व मुर्गी दाना	अनाज व उसके छिलके	007.50	10
5.	सोयाबीन आटा	सोयाबीन	025.00	20
6.	चिप बोर्ड	कृषि अवशेष	125.00	55
7.	दाल मिल	दलहनें	20.50	13
8.	मशरूम उत्पादन	मशरूम स्पार्स	184.00	75
9.	मक्का मिल	मक्का	005.00	07
10.	विभिन्न मसालों से तेल	लहसुन, अदरक	012.00	09

स्रोत : ग्रामीण विकास न्यूज लेटर, ग्रामीण मंत्रालय, मई 1996 नई दिल्ली भारत।

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट संकेत मिलते हैं कि कृषि उत्पादों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की लघु इकाइयां स्थापित की जा सकती हैं। इन उद्योगों में कम पूंजी विनियोजन के साथ ही अत्यधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध हो सकते हैं।

1.1 - भारतीय अर्थव्यवस्था व कृषि आधारित उद्योग :-

भारतीय अर्थव्यवस्था एक कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। देश की रीढ़ की हड्डी के रूप में कृषि ही कार्य कर रही है। भारत वर्ष का आधार स्तम्भ कृषि ही है। इसलिए देश के अधिकांश उद्योग कृषि पर ही आधारित हैं। जैसा कि नेहरू जी ने कहा था कि "कृषि उद्योग से अधिक महत्त्वपूर्ण है, कारण स्पष्ट है, कि हमारे उद्योग कृषि पर ही निर्भर करते हैं।"[1]

अतः कथन स्पष्ट है कि हमारे देश की जनसंख्या 84,63,02,6,88[2] है इसमें ग्रामीण जनसंख्या 62,86,91,6,76[2] है। इस प्रकार 75.7 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। हमारे देश में अनेक प्रकार के खनिज पदार्थो, वनस्पतियों एवं कृषि का उत्पादन होता है। इस प्रकार हमारी अर्थव्यवस्था की अनेक विशेषताएँ हैं :-

भारतवर्ष में प्रति व्यक्ति आय का स्तर बहुत कम है। अर्थात् बहुत नीचा है। इसलिए अधिकः जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। हमारे देश में औद्योगीकरण का अभाव है। बडे व लघु उद्योगों की कमी है तथा यातायात एवं संचार के साधनों की कमी है इसलिए कृषि विणपन में कठिनाई होती है।

इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था होने के कारण, कृषि-आधारित औद्योगिकरण की मूल संकल्पना कृषि है और उसका मूल उद्देश्य ग्राम्य आर्थिक संरचना को ऊर्ध्वमुखी रूप में रूपान्तरित करना है।

भारत में सबसे अधिक जनसंख्या वाला प्रदेश उत्तर प्रदेश है। इस प्रदेश की अर्थत्यवस्था भी कृषि प्रधान है। यहाँ की कुल जनसंख्या 13,91,12,28,73[3] है। इसमें ग्रामीण जनसंख्या 11,15,06,372[3] है। अर्थात् 80 प्रतिशत जनसंख्या गाँव में रहती है। अतः 80 प्रतिशत लोगों की जीविका का साधन कृषि है। यहाँ कृषि आधारित उद्योगों का

---

1. पाटनी आर0एस0- औद्योगिक अर्थशास्त्र
2. प्रतियोगिता दर्पण - अतिरिक्तांक
3. उत्तर प्रदेश वार्षिकी - 1997-98

ही सहारा लिया जा रहा है क्योंकि 1994-95 में 5 लाख व्यक्तियों को इन उद्योगों में रोजगार मिला था जो बढ़कर 8लाख हो गया। उत्तर प्रदेश की मुख्य फसलें-गन्ना, कपास, धान, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, उड़द, अरहर चना है। अतः इस प्रदेश में चीनी उद्योग, सूती उद्योग, जूट उद्योग, चावल मिल, दाल मिल अधिक मात्रा में है।

उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड सम्भाग के चित्रकूट धाम मण्डल का मुख्यालय बाँदा जनपद में स्थित है। बाँदा नगर का नाम बामदेव के नाम पर रखा गया है। इस मण्डल में महोबा, चित्रकूट, हमीरपुर तथा बाँदा जिले आते हैं। मण्डल का अस्तित्व भी पूर्णतः कृषि पर निर्भर है। मण्डल में भी कृषि-आधारित उद्योगों की प्रधानता है।

चित्रकूट धाम मण्डल में बाँदा जनपद जहाँ भौगोलिक दृष्टि से चौथा स्थान रखता है वहीं पठारी होने के कारण आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा जनपद है। इस जनपद की प्रति व्यक्ति आय उत्तर प्रदेश के अन्य जिलों की तुलना में निम्न स्तरीय है यद्यपि बाँदा जनपद कृषि प्रधान क्षेत्र है और यहाँ के कुल उत्पादन का 92.00 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है यहाँ की मुख्य फसलें चावल, तिलहन, गेहूँ, मटर, अरहर, मूँग, जूट, कपास, तम्बाकू है। इनको एक तालिका द्वारा इस प्रकार दृष्टब्य किया जा सकता है:-

तालिका - अ 1.2

बाँदा जनपद में मुख्य फसलों की स्थिति (मेट्रिक टन में)

क्र.सं.	फसल	1980-85	1993-94	1995-96	1997-98
1.	चावल	325839	53545.0	53248.00	5428.00
2.	दालें	167718	59.00	161182.00	171262.00
3.	तिलहन	4511	3815400	6266.00	6364.00
4.	गन्ना	28800	80376.00	27835.00	2880.00
5.	जूट	-	-	-	-
6.	कपास	-	2824.00	-	-

स्रोत :- सांख्यिकीय पत्रिका 1980-85, 1993-94, 1997-98

अतः तालिका से स्पष्ट है कि कृषि बहुत अधिक मात्रा में होती है इसलिए पहले उद्योगों का वर्गीकरण करते हैं कि कृषि आधारित-उद्योग किस क्षेत्र में आते हैं। उद्योग तीन प्रकार के होते हैं :-

1. प्राथमिक क्षेत्र :-प्राथमिक क्षेत्र में कृषि व अन्य औपचारिक क्षेत्र के उद्योग आते हैं।
2. द्वितीयक क्षेत्र :- द्वितीयक क्षेत्र में निर्माण एवं संगठित क्षेत्र के उद्योग आते हैं।
3. तृतीयक क्षेत्र :- परिवहन संचार एवं भण्डारण आदि की सेवाएँ की जाती हैं।

अतः कृषि आधारित उद्योग प्राथमिक क्षेत्र के उद्योग के अन्तर्गत आते हैं। कृषि आधारित उद्योगों में मुख्य रूप से दालमिल, चावल मिल, आटा मिल, तेल मिल, चीनी मिल, कताई मिल, जूट मिल, बीड़ी उद्योग आदि आते हैं।

जनपद में चार तहसीले - 1. बाँदा, 2. बबेरू, 3. नरैनी, 4. अतर्रा तथा 8 विकास खण्ड - 1. बड़ोखर खुर्द, 2. तिन्दवारी, 3. जसपुरा, 4. बबेरू, 5. कमासिन, 6. बिसण्डा, 7. महुआ, 8. नरैनी हैं। इन सभी तहसीलों व विकास खण्डों में कृषि बहुत मात्रा में होती है। इस पूरे जनपद में कृषि उद्योग की बहुल्यता है। यहाँ कुल उद्योगों की संख्या 24705 है।इसमें ग्रामीण व लघु उद्योग 3288 हैं। जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों को एक तालिका द्वारा दिखाया जा सकता है।

तालिका - (अ) 1.3

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों की स्थिति

क्र.सं.	उद्योगों का नाम	1985-86	1993-94	1998-99
1.	चावल मिल	40	45	38
2.	आटा मिल	-	-	-
3.	दाल मिल	8	10	-
4.	तेल मिल	12	18	75
5.	गुड़ बनाने की इकाई	-	-	5

6.	बीड़ी बनाने की इकाई	10	21	28
7.	कताई मिल	-	1	2
8.	कालीन उद्योग	-	2	5
9.	दोना पत्तल निर्माण इकाई	10	22	26
10.	सुतली बनाने की इकाई	8	10	18

स्रोत - औद्योगिक निर्देशिका-जिला उद्योग केन्द्र - बाँदा 2000

अतः तालिका से स्पष्ट है कि जनपद में कृषि आधारित लघु उद्योग अधिक मात्रा में हैं। इन उद्योगों में अधिक व्यक्तियों को रोजगार मिला इस स्थिति को तालिका द्वारा इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं -

तालिका - (अ)1.4

बाँदा जनपद में लघु व ग्रामीण उद्योगों में लगे व्यक्तियों की संख्या

उद्योग	1985-86	1993-94	1996-97	1998-99
लघु उद्योग इकाईयों में कार्यरत व्यक्ति	380	388	1767	1792
ग्रामीण एवं लघु उद्योग इकाईयों में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या	911	921	3534	3665

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद बाँदा - 1985-86, 1993-94, 1996-97, 1997-98,

इस तालिका से स्पष्ट है कि कृषि-आधारित उद्योगों में जनपद के 65 प्रतिशत व्यक्ति लगे हैं। अर्थात् आधे से अधिक व्यक्तियों की जीविका का अधार कृषि ही है। यहाँ केवल इन उद्योगों से बेरोजगार व्यक्तियों को ही रोजगार नहीं मिला बल्कि जनपद में उपलब्ध स्थानीय संसाधनों के उपयोग हेतु अवसर भी प्रदान किए जा रहे हैं। इससे जनपद

में व्यक्तियों की प्रति व्यक्ति आय बढ़ेगी और जनपद विकास की ओर उन्मुख होगा।

इस प्रकार देश व प्रदेश की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर ही निर्भर है। कृषि ही पूरे देश की अर्थव्यवस्था का आधार स्तम्भ है। आज देश में, कृषि रूपी स्तम्भों पर ही अर्थव्यवस्था रूपी छत खड़ी है। जिस दिन इन स्तम्भों का सहारा नहीं मिलेगा तो छत गिर जाएगी। कृषि आधारित उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं का निर्यात करके अधिक मात्रा में विदेश मुद्रा प्राप्त कर सकते हैं।

(अ) जनपद बाँदा की भौगोलिक, सामाजिक-आर्थिक संरचना

भौगोलिक संरचना :-

भारत 25 राज्यों में बाँटा गया है। जिसमें एक राज्य उत्तर प्रदेश है। जिसका क्षेत्रफल 2,94,411 वर्ग किमी. है। जनसंख्या 13,91,12,287 है जिसमें 73,743,994 पुरूष तथा 6,53,68,293 स्त्रियाँ है। उत्तर प्रदेश में 63 जिले हैं। जिसमें बाँदा भी एक जिला है। चित्रकूट धाम मण्डल का मुख्यालय भी बाँदा में स्थित है। इस मण्डल में बाँदा, चित्रकूट, हमीरपुर, महोबा चार जिले शामिल किए गये हैं। बाँदा का नाम वामदेव ऋषि के नाम पर रखा गया है जो कर्णवती (केन नदी) के तट पर स्थित है। बाँदा जनपद का भौगोलिक दृष्टि से प्रदेश में चौथा स्थान है। परन्तु पठारी क्षेत्र होने के कारण आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा जनपद है। इधर कुछ वर्षो से कृषि-आधारित उद्योग इसके विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

बाँदा जनपद ऐतिहासिक स्थानों और सांस्कृतिक प्रतीकों के लिए चिरकाल से प्रसिद्ध है। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम सेनानी नवाब अली बहादुर के पुराने शाही महल, भूरागढ़ के भग्नावेशष, सुविशाल नवाब टैंक और बाम्बेश्वर पर्वत (महादेव) प्रभृति इसके अतीत की गौरव-गाथा मूक रूप से मुखरित कर रहे हैं। यहाँ की भूमि को ऋषि-मुनियों की तपोभूमि होने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। वाल्मीकि, जावालि, वामदेव, अत्रि इत्यादि ऋषि-मुनियों के प्रसिद्ध आश्रम तृषित आत्मा को आज भी शान्ति प्रदान करते हैं। नल, पाण्डव और विराट्

नृपति शान्ति की उपलब्धि हेतु इसी भूखण्ड में आकर बसे हैं।

ज्ञान-विज्ञान और समन्वयवाद की मर्यादाओं को सीमित करने वाले मानवता के देवदूत संत कवि तुलसीदास की जन्मभूमि होने का गौरव भी इसी जनपद को प्राप्त है। तुलसी के राम ने महर्षि वाल्मीकि के परामर्श से अपने वनवास का अधिकांश समय यहीं व्यतीत किया । यहाँ प्रति वर्ष सहस्रों यात्री, पर्यटक और दर्शनार्थी आते रहते हैं।

बाँदा जनपद की पावन भूमि को भगवान रामचन्द्र जी ने अपना बनवास स्थल बनाया था। संत शिरोमणि श्री तुलसीदास की तपस्थली होने का गौरव भी इसे प्राप्त है। कालिंजर किला तथा अन्य किलों के भग्नावशेष प्राचीन वैभव कला तथा संस्कृति के प्रतीक हैं। कालिंजर बाँदा से 56 कि0मी0 दूर स्थित है, बस के द्वारा यात्रा करने पर कालिंजर पहुँचते हैं। कालिंजर बाँदा जनपद का एक ऐतिहासिक स्थान है। यह अभेद्य दुर्ग था, जिसके निर्माण काल के सम्बन्ध में इतिहास मौन है। सम्भवतः यह पौराणिक काल से ही प्रसिद्ध है। इसकी गणना नौ ऊखलों में की गई है :-

रेणुका शूकरा काशी कली काल बटेश्वरा।
कालींजर महाकालः ऊखला नव मोक्षदा।।

श्री शंकर जी ने समुद्र-मंथन से निकले हुए गरल को पान करके यहीं पर विष की ज्वाला शमन की थी। इसी के स्मृति स्वरूप नीलकण्ठ महादेव की प्रतिमा आज यहाँ स्थापित है। सतयुग में इसका नाम कीर्तनगिरि, त्रेता में महागढ़, द्वापर में पिंगलगढ़ और कलियुग में कालिंजर प्रख्यात हुआ। चन्देल-वंश के संस्थापक चन्द्रवर्मा ने इस किले को तीसरी सदी में बनवाया था। इसकी नींव 25 फुट मोटी है। उत्तर की ओर से किले में जाने के सात फाटक हैं। दरवाजे के बाहर चौथी सदी के अक्षरों का शिलालेख मिला है। सन् 1203 ई0 में मोहम्मद गौरी के राज्य-प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ने कालिंजर को ले लिया और कई मन्दिरों के स्थान पर मसजिदें बनवा दीं। सन् 1530 ई0 से सन् 1542 तक समय-समय पर मुगल बादशाह हुमायूं इस पर आक्रमण करता रहा। सन् 1545 में

शेरशाह सूरी की यहीं युद्ध में घायल होकर मृत्यु हुई। तदनन्तर सन् 1673 ई0 में औरंगजेब ने इस दुर्ग का जीर्णोद्धार करवाया जैसा कि दुर्ग के आलम द्वार पर अंकित शिला-लेख से स्पष्ट है।

सन् 1803 ई0 में बेसीन की संधि के अनुसार यह किला भी अंग्रेजों को दिया गया। सन् 1857 ई0 के विप्लव में कर्नल रेनिंग्टन दुर्ग पर अधिकार जमाए हुए था। सन् 1866 में यह किला कई स्थानों से तोड़ दिया गया और अंग्रेजी फौज इसे खाली करके चली गई। अब कालिंजर केवल तीर्थ है। इसमें कई दर्शनीय मूर्तियाँ, जलाशय और धार्मिक स्थान हैं। स्वतंत्रता संग्राम में इस जनपद का महान योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

बाँदा जनपद उत्तर प्रदेश की दक्षिणी सीमा पर स्थित है यह जनपद 24.520 और 25.250 उत्तरी अक्षांश तथा 84.40 से 81.34 पूर्वी देशान्तर में स्थित है। जनपद के पूर्व में इलाहाबाद पश्चिम में हमीरपुर, उत्तर में फतेहपुर तथा दक्षिण में मध्यप्रदेश की सीमाएँ इसे स्पर्श करती हैं। इस प्रकार बाँदा जनपद का विस्तार पूर्व से पश्चिम 147 कि0मी0 तथा उत्तर से दक्षिण 104 कि0मी0 है। जनपद का क्षेत्रफल 7624 वर्ग कि0मी0 है।

जनपद की जलवायु कर्क रेखा के समीप होने के कारण, बीहड़, पहाड़, चट्टाने एवं पथरीली भूमि होने के कारण अधिक शुष्क रहती है। यहाँ ग्रीष्म ऋतु शीघ्र प्रारम्भ हो जाती है तथा देर तक रहती है। वार्षिक औसत उच्चतम् ताप 50.40 तथा न्यूनतम 19.90 सेल्सियस रहता है।

प्रशासनिक दृष्टिकोण से बाँदा जनपद 4 तहसीलों (बाँदा, बबेरू, नरैनी तथा अतर्रा) तथा 8 विकास खण्डों (जसपुरा, तिन्दवारी, बड़ोखर, महुआ, बिसण्डा, बबेरू, कमासिन तथा नरैनी) और पुलिस चौकी (करतल, खुरहण्ड तथा ओरन एवं बाँदा) पुलिस थाना (मर्का, जसपुरा, पैलानी, चिल्ला, तिन्दवारी, कोतवाली देहात, कमासिन, बबेरू, बिसण्डा, बदौसा, अतर्रा, नरैनी, गिरवाँ, बाँदा कोतवाली, फतेहगंज, कालिंजर, मटौंध में विभक्त है।

जनपद के मैदानी क्षेत्र में बबूल तथा कँटीदार झाँडियाँ पाई जाती हैं जिसमें करौंदा, करील, खैर, चमरौल, महुआ, ईगोटक तथा सहजन आदि हैं। जनपद के पाठा क्षेत्र में ढ़ाक, सेम, तेंदू, अचार, चिरौंजी, हरदू, साज, बाँस के जंगल पाये जाते हैं।

इस जनपद में केन, यमुना, बागै नदियाँ बहती हैं। केन जनपद की सबसे लम्बी नदी है।

जनपद की जनसंख्या 1991 में 18,51,044 है। इसमें ग्रामीण जनसंख्या 16,51,224 है तथा नगरीय जनसंख्या 1,64,779 हैं जहाँ जनसंख्या घनत्व 232 प्रतिवर्ग कि0मी0 है इसमें 5,28000 व्यक्ति साक्षर हैं। यहाँ पुरुष जनसंख्या 10,05,000 है तथा स्त्रियों की जनसंख्या 1991 में 8,46,044 तथा जनपद में कुल साक्षर पुरुष 1991 में 5,28,000 तथा जनपद में कुल साक्षर स्त्रियों की संख्या 1991 में 1,10,000 थी।[1]

प्राकृतिक संरचना के अनुसार बाँदा जनपद दो उप सम्भागों में बाँटा गया है। प्रथम सम्भाग में 1203 आबाद ग्राम हैं तथा 138 गैर आबाद ग्राम। कुल 1341 ग्राम हैं। द्वितीय सम्भाग में 677 आबाद ग्राम तथा 44 गैर आबाद ग्राम हैं।

जनपद में कृषि उत्पादन का कुल क्षेत्रफल 580909 हेक्टेयर है शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 144 हेक्टेयर हैं। यहाँ खाद्यान्न उत्पादन 541.57 मी0टन है। गन्ना 29.78 मी0 टन उत्पादन होता है।[2]

बाँदा जनपद में मुख्य रूप से धान, अरहर, मसूर, चना, गेंहूँ, ज्वार, जौ, बाजरा, तम्बाकू, जूट, कपास, सनई, हल्दी, तिलहन, की खेती होती है। इस प्रकार जनपद के 5,80,900 हेक्टेयर क्षेत्रफल में कृषि की जाती है।

---

1. गजेटियर, बाँदा।

2. सांख्यिकीय पत्रिका 1994-95- (कार्यालय अर्थ एवं संख्या विभाग, बाँदा)

तालिका संख्या - (ब) 1.1

बाँदा जनपद में मुख्य फसलों की स्थिति (मीटरी टन में)

फसल	1980-85	1985-90	1990-91	1991-95	1995-96
मसूर	12,948	1,04,136	1,25,199	80,003	16,653.88
धान	91,342	48,568	81,335	53,530	92,948.00
बाजरा	10,541	8,337	10,432	7,896	25.00
गेहूँ	2,03,766	1,97,259	2,20,656	2,06,408	78,154.0
ज्वार	77,843	58,995	64,964	41,851	8,314.00
तम्बाकू	1,40,417	11,345	13,597	13,624	15.00
जूट	-	-	-	-	-
सनई	-	526.00	538.00	437.00	46.00
कपास	-	11,434.00	2,824.00	-	-

स्रोत : सांख्यकीय पत्रिका, जनपद बाँदा - 1991,1992,1996

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपद में मुख्य रूप से मसूर, धान, बाजरा, गेंहूँ, ज्वार, तम्बाकू, जूट, सनई की फसल होती है।

सामाजिक संरचना :-

समाज मुख्यतः दो वर्गो में बाँटा गया है सवर्ण एवं निम्नवर्ग, प्रभावकारी वर्ग में ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य लोग सम्मिलित हैं।

जबकि शोषित वर्ग के अन्तर्गत डोमार, धानुक, लोधी, चमार, मेहतर आदि सम्मिलित हैं। शेष जातियों की भूमिका कहीं उदासीनता की तथा कहीं स्वार्थीपन की है। यही कारण है कि इस जिले में वर्ग संघर्ष की स्थिति दिखाई पड़ती है। अतः समाज की स्थिति अच्छी नहीं है। जाति, पाँति एवं पारस्परिक वैमनस्यता के कारण ग्रामीण समाज के अधिकांश लोग पारिवारिक कलह के शिकार हैं। समाज सामान्यतया प्रतिक्रियावादी है। अन्य

स्थानों की भाँति समाज में हत्या, लूट, कत्ल, चोरी, डकैती, बलात्कार आदि सामाजिक अपराध चरम सीमा पर हैं। जहाँ एक ओर राजनीतिक अव्यवस्था, अशिक्षा, रूढ़िवादिता, धार्मिक ढ़ोंग, श्रम का निरादर, असम्मान इस समाज में देखने को मिलता हैं वहीं दूसरी ओर धार्मिक प्रकृति का पाया जाना देश के प्रति निष्ठा की भावना है। कुल मिलाकर समाज की दशा सोचनीय है।

आर्थिक संरचना :-

बाँदा जनपद आर्थिक दृष्टिकोंण से अत्यन्त पिछड़ा है। जनपद की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। इस जनपद की प्रति व्यक्ति आय उ0प्र0 के अन्य जिलों की तुलना में निम्नस्तरीय है। यहाँ के कुल उत्पादन का 92 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है। किन्तु बाँदा जनपद की कृषि क्षेत्र की दशा थोड़ी सोचनीय है। अतः कृषि प्रधान क्षेत्र भी बाँदा के आर्थिक पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी हैं। यहाँ का औद्योगिक पिछड़ापन भी जनपद के आर्थिक विकास की दर को कम करने में सहायक है। इस जनपद में कृषि की बाहुल्यता होने के कारण कृषि आधारित उद्योग अधिक संख्या में हैं। यहाँ कुल श्रम शक्ति का केवल 8 प्रतिशत भाग ही जीवकोपार्जन हेतु औद्योगिक क्रिया कलापों में संलग्न है। यहाँ उद्योगों की कुल संख्या 24705 है। जनपद में उद्योगों की स्थिति एक तालिका द्वारा नीचे स्पष्ट की गई है जिन उद्योगों पर जनपद की आर्थिक स्थिति निर्भर है।

तालिका संख्या - (ब) 1.2

जनपद में औद्योगिकरण की प्रगति

क्र.स.	मद	94-95	95-96	96-97
1	पंजीकृत कारखाने	-	28	28
2.	कार्यरत कारखाने	-	31	31
3.	औसत दैनिक कार्यरत श्रमिक व कर्मचारियों की संख्या	-	-	1,28,51285
4.	उत्पादन मूल्य	-	1,32,832	1,33,832

1. सांख्यकीय पत्रिका - अर्थ एवं सांख्यिकीय कार्यालय, बाँदा, उ0प्र0-1997

अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपद में उद्योगों की संख्या बहुत कम है इस कारण आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा है। इस जनपद में लघु व ग्रामीण उद्योगों की स्थिति इस प्रकार है -

तालिका संख्या - (ब) 1.3

क्र.सं.	उद्योग का नाम	योग
1.	खादी ग्रामोद्योग	1368
2.	खादी ग्रामोद्योग तथा प्रवर्तित ग्रामीण उद्योग	96
3.	लघु उद्योग इकाई	113
	3.1 इन्जीनियरिंग	54
	3.2 रासायनिक	6
	3.3 विधारान	6
	3.4 हथकरघा	8
	3.5 रेशम	994
	3.6 नारियल की जटा	
	3.7 हस्तशिल्प	
	3.8 अन्य	
	योग	3288

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका : 1994-95, 1995-97 जिला उद्योग केन्द्र, बाँदा।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपद बाँदा में लघु व ग्रामीण उद्योग दोनों हैं जनपद में एक बडी कताई मिल थी जो वर्तमान में बन्द चल रही है। अतः जनपद आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा होने पर धीरे-धीरे आर्थिक प्रगति की ओर अग्रसर है।

(ब) शोध समस्यागत साहित्य-सिंहावलोकन :-

किसी भी शोध कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व सम्बन्धित साहित्य का सिंहावलोकन व सर्वेक्षण आवश्यक होता है, क्योंकि सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन के अभाव में शोध कार्य पुनरावृत्ति दोष से प्रभावित हो सकता है।

प्रस्तुत शोध से सम्बन्धित अध्ययन सामाग्री का अभाव है जो अध्ययन सामाग्री है वह लघु उद्योगों के सम्बन्ध में ही उपलब्ध है। इसमें डॉ0 आर0ए0 चौरसिया की पुस्तक "Agro Industrial Development - A Study" योजना मासिका पत्रिका प्रत्येक वर्ष प्रकाशित होने वाली सांख्यिकीय पत्रिका (अर्थ एवं संख्या विभाग द्वारा प्रकाशित) बृजेन्द्र नाथ बनर्जी की किताब Industry Agriculture and rural development जिला उद्योग द्वारा प्रकाशित "औद्योगिक निर्देशिका" - कुरुक्षेत्र, खादी ग्रामोद्योग पत्रिका।

उपरोक्त सामग्री भी पूर्णतया कृषि-आधारित उद्योगों से सम्बन्धित नहीं है जो सामग्री है भी वह आसानी से उपलब्ध नहीं होती है। इस शोध विषय से सम्बन्धित आँकड़े भी समय से कार्यालय से उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

निष्कर्षतः ये कहा जा सकता है कि शोध समस्या से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध नहीं है जो सामग्री है उसमें भी लघु व कुटीर उद्योगों से पूर्णतः सम्बन्धित साहित्य का अभाव है।

1.2 शोध समस्या का स्वरूप एवं शोध-अभिकल्प :-

प्रस्तुत शोध समस्या के पीछे सबसे तात्कालिक एवं सशक्त प्रेरणा आज देश में व्याप्त आर्थिक समस्या है। आज देश को आर्थिक संकट से निपटने के लिए कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा दिया जाये। यही कृषि-आधारित उद्योग ही देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करते हैं तथा देश में बड़ी संख्या में लोगों की जीविका प्राप्त हो रही है। देश में कृषि आधारित उद्योगों से तैयार सामान का विदेशों में निर्यात किया जाता है। जिससे देश को भारी मात्र में विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। अतः देश के आर्थिक विकास में कृषि आधारित

उद्योगों का गौरव पूर्ण स्थान है। अनेक बड़े देशों में यह उद्योग अपनी चरम सीमा में पहुँच चुके हैं, लेकिन बुन्देलखण्ड क्षेत्र का बाँदा जनपद इस क्षेत्र में सबसे पीछे है। आज भी यह जनपद औद्योगिक उपेक्षा का शिकार है। आज बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योग जीर्ण-शीर्ण अवस्था में मन्दगति से विकास की ओर अग्रसर हो रहा है। आज कृषि-आधारित उद्योगों की ओर न व्यक्ति, न सरकार कोई ध्यान नहीं दे रही है जबकि इन उद्योगों का अपना अलग महत्व है। क्योंकि आज देश के निम्न वर्ग से लेकर उच्च वर्ग के लोग इस उद्योग से किसी न किसी प्रकार से सम्बन्धित हैं। आज देश की आधे से अधिक जनसंख्या की जीविका का साधन कृषि है। बाँदा नगर में कृषि आधारित उद्योगों के विकास एवं ह्रास की अपनी विशिष्ट आर्थिक एवं तन्त्रगत समस्याएँ हैं। राजकीय उपेक्षा एवं वित्तीय तथा तकनीकी कुपोषण से पुष्ट इस उद्योग की समस्याएँ एवं भविष्यगत सम्भावनाओं की जानकारी ही मेरे शोध समस्या के चयन का कारण है अर्थात् बाँदा जनपद के विशेष सन्दर्भ में बाँदा जनपद के आर्थिक विकास में कृषि आधारित औद्योगिकरण की अवस्थिति, निष्पादन समस्याओं एवं सम्भावनाओं का एक सर्वेक्षणात्मक अध्ययन (आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं से अद्यतन समय तक) प्रस्तुत शोध का विषय है।

शोध समस्या का कथन :-

जनपद की दी हुई सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थिति के अन्तर्गत आर्थिक विश्लेषण के सापेक्ष प्रस्तुत शोध समस्या का मुख्य कथन यह है। "बाँदा जनपद के आर्थिक विकास में बा्दा जनपद की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण" अतर्रा तहसील की चावल मिलों के सन्दर्भ में एक आलोचनात्मक आर्थिक विश्लेषण (आठवीं पंचवर्षी योजना से अद्यतन समय तक) इस शोध के द्वारा कृषि-आधारित उद्योग से सम्बन्धित अन्य उद्योगों के विकास की सम्भावनाओं के लिए नये आयाम प्रस्तुत किये जा सकते हैं। स्पष्ट है कि इन सभी आयामों के अनुशीलन का जनपदीय परिप्रेक्ष्य में अनुभवगम्य एवं विकासात्मक महत्व है।

इन उद्योगों के द्वारा बाँदा जनपद का आर्थिक विकास उच्च शीर्ष तक कर सकते

हैं।

शोध अभिकल्प :-

शोध अध्ययन वह प्रक्रिया है जिसमें वैज्ञानिक विधियों द्वारा किसी भी क्षेत्र में ज्ञान सम्वर्धन के प्रयास किये जाते हैं। शोध प्रक्रिया का सार तत्व मुख्यतः दो बातों पर निहित है- प्रथम शोध अध्ययन के उद्देश्य तथा द्वितीय अनुसंधान अभिकल्प। जहाँ तक शोध अध्ययन के उद्देश्य का सवाल है वह चयनित शोध समस्या की प्रक्रिया एवं उसकी प्रासंगिकता से अनुशासित होता है वास्तव में नवीन एवं प्राचीन तथ्यों के सम्बन्ध में अनुशीलन करके तथा पुराने तथ्यों के पुनर्परीक्षा करके सामाजिक आर्थिक घटनाओं के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान को प्रगतिशील बनाये रखना अनुसंधान का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इस प्रकार शोध अध्ययन के उद्देश्यों में चयनित शोध समस्या के स्वरूप का समावेश होता है, इस सन्दर्भ में अग्रगामी विवरण से पूर्व इस तथ्य पर विचार कर लेना उचित होगा कि शोध अभिकल्प क्या है ?

शोध अभिकल्प की अवधारणा :-

शोध अध्ययन की पूर्व योजना बनाना ही शोध अभिकल्प तैयार करना है। शोध अध्ययन के आधार पर अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को उद्घाटित करने के लिए पहले से ही बनाई गई योजना की रूप रेखा को शोध अभिकल्प कहते हैं। फरलिंगर के अनुसार अनुसंधान अभिकल्प को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है। "अनुसंधान अभिकल्प नियोजित अन्वेषण की एक ऐसी योजना, संरचना तथा व्यूह संरचना होती है, जिसके आधार पर शोध-प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते हैं और प्रसरण पर शोध प्रश्नों के उत्तर प्रापत किए जाते हैं और प्रसरण पर नियन्त्रण स्थापित किया जाता है।"[1]

ऐकॉफ के अनुसार "To design is to plain that is, & design is the process of making decisions before the situation arises in which the decisian has to be carried out it is a process of deliberate amticipation directed to word bringing an excepted situation under control."[2]

---

1. Kerlinger : F.N. Foundation of Beharioural research (Hot) 1964, 9-275
2. Achoff : The Design of Social Research, Chicago Press, P-5

संक्षेप में शोध अभिकल्प को सरलतम शब्दों में निम्नवत् परिभाषित किया जा सकता है :-

Research design as mapping startregy. It is essentially a statement of the object of the inquiry and the starkgies and reporting in the finding.[1]

स्पष्ट शोध अभिकल्प वैज्ञानिक अनुसंधान प्रक्रम का एक अभिन्न अंग है। अभिकल्प रचना शोधकर्त्ताओं को एक विशिष्ट सांख्यिकीय परिकल्पना की रचना आँकड़ों के संकलन तथा उनके विश्लेषण के प्रति अति महत्वपूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत करती है तथा इसके आधार पर सम्भावित निष्कर्षो को जानने में अत्यधिक मार्गदर्शन करती है।

व्यापक रूप में शोध अभिकल्प के अन्तर्गत अध्ययन की समस्या का निरूपण आँकड़े संकलन की विधि समग्र और निदर्शन आदि निश्चित किये जाते हैं।

प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त अभिकल्प का प्रकार - अध्ययन के उद्देश्य के अनुसार शोध ा अभिकल्प को तैयार किया जाता है अनुसंधान के प्रकार के अनुसार अभिकल्प बनता है अभिकल्प के प्रकार निम्नवत हैं :-

1. प्रयोगगम्य शोध अभिकल्प
2. सांख्यिकीय शोध अभिकल्प
3. सैद्धान्तिक शोध अभिकल्प
4. विवरणात्मक शोध अभिकल्प
5. क्षीण शोध अभिकल्प

प्रस्तुत अध्ययन में विवरणात्मक या वर्णनात्मक शोध अभिकल्प प्रस्तुत किया गया है। यह शोध अभिकल्प बहुत ही सरल अध्ययन के लिए बनाया जाता है इसके अन्तर्गत कारण, कार्य की स्थापना नहीं होती है। साधारण सर्वेक्षण किया जाता है। श्री ए0काम्पबेल ए0 एण्ड करोना जी के अनुसार "Survey research is considered to be approach of social

---

1. शर्मा आर0ए0 द्वारा उद्धरित फण्डामेन्टल्स आफ एजूकेशन इन रिसर्च पृ0 16

scientific research which immediatly distinguiesh surveys research from the status survey.[1] जैसे प्रतिशम एवं माध्य आदि का प्रयोग किया जायेगा।

किसी भी शोध अध्ययन को क्रमबद्ध एवं दिशात्मक बनाने के लिए तर्कों का सत्यापित करने में अनुसंधानपद्धतियों का अत्यधिक महत्व है। ये अनुसंधान पद्धतियाँ निम्नलिखित हैं :-

1. प्रयोगिक अनुसंधान
2. क्षेत्र अनुसंधान
3. सर्वेक्षण अनुसंधान
4. मूल्यांकन अनुसंधान
5. क्रियापरक अनुसंधान
6. एक्स-पोस्ट फैक्टो रिसर्च।

सर्वेक्षण पद्धति में अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय के सीधे सम्पर्क में आता है ऐसा इसलिए होता है कि इस विधि के अन्तर्गत सर्वेक्षणकर्त्री को अपने विषय से सम्बन्धित परिस्थितियों तथा व्यक्तियों से सीधे तौर पर तथ्यों को सम्मिलित करना पड़ता है और उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनुसंधानकर्ता को उनके निकट या घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना पड़ता है। सर्वेक्षण की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय से सम्बन्धित परिस्थितियों तथा व्यक्तियों से सीधे सम्पर्क स्थापित करने में कितना सफल हो सकता है।

समंक संकलन के उपकरण :-

अनुसंधान की समस्या के अनुसार आँकड़ा संकलन के लिए उपयुक्त उपकरण का चुनाव करना होता है। शोध अध्ययन के व्यवहारार्थ अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण निम्न होते हैं :-

---

1. कम्पबेल, ए0 एण्ड कटोना जी, दि सेम्पल सर्वे ए टेक्नीक फॉर सोसल साइंस रिसर्च।

1. प्रश्नावली

2. साक्षात्कार अनुसूची

3. पैमाने की दर

4. जाँच या सत्यापनशीलता

1. प्रश्नावली :-

आधुनिक शोधों में प्रश्नावली का उद्देश्य अध्ययन विषय से सम्बन्धित प्राथमिक तथ्य-सामाग्री को एकत्र करना है। प्रश्नावली का अर्थ उस सुव्यवस्थित तालिका से है जो विषय के सम्बन्ध में सूचनाएँ प्राप्त करने में सहयोग देती है।

गुड़े तथा हैट के शब्दों में In general the word questionnaire refers to a device for securing on swexs to questions by using a form which the respondant file in himself."[1]

2. साक्षात्कार अनुसूची :-

समंक संकलन का एक अति प्रचलित उपकरण अनुसूची – एक अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित तर्क संगत प्रश्नों की ऐसी सूची होती है जिसके आधार पर अनुसंधानकर्ता उत्तरदाताओं से प्रायः पूर्व निर्धारित सम्पर्क के अनुसार सम्बन्धित प्रश्नों के रूप से उत्तर प्राप्त करता है एवं सूची को स्वयं अपने आपसे भरता है। स्पष्टतः " अनुसूची का तात्पर्य अनुसंधानकर्ता द्वारा सूचनाओं से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके प्रत्यक्ष या औपचारिक रूप से पूछे जाने वाले प्रश्नों के आयोजित एवं व्यवस्थित प्रपत्र से है"[2]

प्रस्तुत शोध प्रबंध में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है जब शोध करने वाला कुछ प्रश्न लिखकर स्वयं सूचनाओं के पास जाता है और उनसे पूँछ-ताँछ कर प्रश्नों का उत्तर स्वयं लिखता है इस प्रकार की अनुसूची को साक्षात्कार अनुसूची कहते हैं। सम्बन्धित अनुसंधान समस्या के गहन अध्ययन का भी समुचित अवसर प्राप्त होता है।

---

1. Good & Halt - Methods in social research

2. गुप्ता, आर0बी0 एवं गुप्ता मीरा, सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण सामाजिक विज्ञान प्रकाशन, कानपुर उ0प्र0

इससे प्राप्त आँकड़ों के वर्गीकरण तथा सारणीयन में भी विशेष सुविधा रहती है। सहायक सूचनाओं की प्राप्ति के लिए संकलित सूचना की परीक्षा के लिए भी यह अनुसूची उपयोगी है व्यक्तिगत रूप में सूचना दाता से मिलकर सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना ही इस प्रकार की अनुसूची का प्रमुख उद्देश्य है।

3. पैमाने की दर :-

पैमाना एक प्रमापन उपकरण है जिसके आधार पर तथ्यों का मूल्यांकन क्रमिक ढ़ंग से किया जाता है।

गुडे एवं हॉट के अनुसार :-

"स्केलिंग प्रविधि द्वारा मदों का किसी श्रृंखला को क्रम के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है। दूसरे शब्दों में स्केलिंग प्रविधियों गुणात्मक तथ्यों की श्रंखला को मात्रात्मक श्रंखला में बदलने की विधियाँ हैं।

4. जाँच या सत्यापनशीलता :-

किसी भी अध्ययन की प्रमाणिकता के लिए यह आवश्यक होता है कि अनुसंधानकर्ता द्वारा संकलित तथ्यों की पुनः परीक्षा या सत्यापन किया जाये।

अतः स्पष्ट है कि इस शोध प्रबंध में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया जाता है।

समंको के आधार पर :-

वास्तविक आँकड़ों के बिना कोई भी शोध या अनुसंधान वास्तव में अपंग प्राणी की भाँति है" शोध की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि शोधकर्ता अपने अध्ययन विषय के सम्बन्ध में कितने वास्तविक सूचनाओं एवं तथ्यों अथवा आँकड़ों को एकत्रित करने में सफल होता है। अतः अनुसंधान पद्धति में समंको के संकलन की दृष्टि से समंक दो प्रकार के होते हैं :-

1. प्राथमिक समंक

2. द्वितीयक समंक

1. प्राथमिक समंक :-

प्राथमिक समंक वे समंक होते हैं जिन्हें अनुसंधानकर्ता नए सिरे से एकत्र करता है। प्राथमिक समंक अनुसंधानकर्ता द्वारा वास्तविक अध्ययन स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अनुसूची या प्रश्नावली की सहायता से संकलित किये जाते हैं।

2. द्वितीयक समंक :-

द्वितीयक समंक वे आँकड़े हैं जो शोधनार्थी को प्रकाशित व अप्रकाशित प्रलेखों, सांख्यिकीय आँकड़ो, पाण्डुलिपि, पत्र, डायरी आदि से प्राप्त होते हैं।

संक्षेपतः किसी भी शोध अध्ययन की प्रकृति एवं निष्कर्ष समंक संकलन की विधि से बहुत प्रभावित हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन में साक्षात्कार सूची द्वारा प्राथमिक समंक एकत्रित किए जायेंगे क्योंकि प्राथमिक समंको के उद्देश्य अनुसंधान के अनुकूल होते हैं और प्रस्तुत शोध सर्वेक्षणात्मक है।

संकलित समंको के विश्लेषण में प्रयुक्त साख्यिकी विधियाँ प्रस्तुत शोध अध्ययन में समंको के विश्लेषण में प्रयुक्त साख्यिकी विधियाँ निम्नवत् हैं।

1. औसत प्रतिशत एवं गणितीय माध्य
2. रेखाचित्र
3. समंको का चित्रमय प्रदर्शन

इसके अतिरिक्त आँकड़ों का विश्लेषण करने के लिए विभिन्न सूत्रों द्वारा केन्द्रीय प्रवृत्ति विचलन सह सम्बन्ध आदि ज्ञात करते हैं।

प्रस्तुत शोध में शोधनार्थी के द्वारा 50 मिलों का सर्वेक्षण कार्य साक्षात्कार अनुसूची द्वारा किया गया। इसमें जिन 50 मिलों को लाया गया है उनके नाम इस प्रकार हैं :-
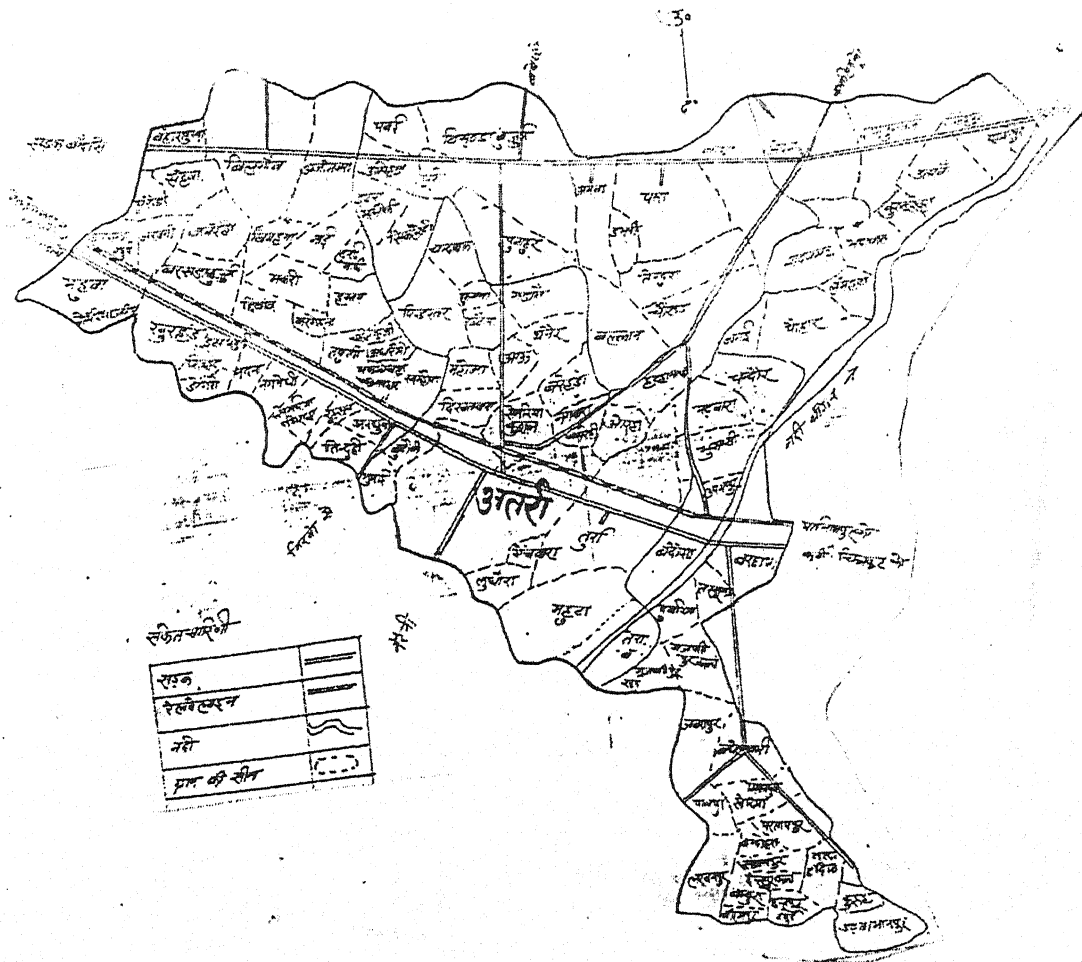
<u>मानचित्र तहसील अतर्रा, जनपद बाँदा</u>

तालिका संख्या - (ब) 1.4 बाँदा जनपद में कृषि-आधारित औद्योगिक इकाइयाँ

मिलों के नाम	पता	सन् (स्थापना वर्ष)
1. रामदास राजकुमार दाल मिल	गूलरनाका, बाँदा	1950
2. श्री राम राइस मिल	बदौसा रोड, अतर्रा	1970
3. श्री शिवम् राइस मिल	बदौसा रोड, अतर्रा	1970
4. श्री नारायन मार्डन राइस मिल	बदोसा रोड, अतर्रा	1970
5. श्री जे0के0 इण्डस्ट्रीज	बदौसा रोड, अतर्रा	1971
6. श्री ओम राइस एण्ड दाल मिल	नरैनी रोड, अतर्रा	1971
7. श्री अन्नपूर्णा राइस मिल	खुरहण्ड- बाँदा	1976
8. नवल किशोर आयल मिल	सब्जी मण्डी बाँदा	1976
9. भूतेश्वर राइस मिल	खुरहण्ड-बाँदा	1978
10. ईश्वर चन्द तेल मिल	खुट्ला-बाँदा	1980
11. श्री रामफल कुशवाहा राइस मिल	बिसण्डा, बाँदा	1980
12. वैश्य आयल उद्योग	बाँदा	1982
13. पाण्डेय राइस मिल	बिसण्डा, बाँदा	1982
14. अन्नपूर्णा दाल प्लान्ट	खुरहण्ड-बाँदा	1983
15. सीताराम राइस मिल	नरैनी-बाँदा	1985
16. रस्तोगी दाल मिल	बबेरू-बाँदा	1985
17. मिश्र आयल उद्योग	कनवारा-बाँदा	1986
18. मंसूरी चावल उद्योग	नरैनी-बाँदा	1987
19. कुशवाहा आयल उद्योग	बाँदा	1987
20. महेश मसाला उद्योग	अतर्रा-बाँदा	1987

21. श्री नारायण राइस मिल	बबेरू-बाँदा	1988
22. दिनेश तेल उद्योग	छोटी बाजार, बाँदा	1988
23. श्री आन्जनेय लघु उद्योग	नरैनी रोड, अतर्रा	1989
24. श्री चन्द्रा मिनी राइस प्लान्ट	बाँदा रोड, अतर्रा	1989
25. श्री रमेश मिनी मार्डन राइस प्लान्ट	बाँदा रोड	1989
26. श्री हरीशंकर गुप्त ग्रेन डीलर	स्टेशन रोड, अतर्रा	1990
27. श्री कुमार ट्रेडर्स	बिसण्डा रोड, अतर्रा	1990
28. श्री अमित ट्रेडिंग कम्पनी	बदौसा रोड, अतर्रा	1990
29. श्री राम राइस मिल	नरैनी, बाँदा	1990
30. श्री शिवहरे मिनी राइस प्लान्ट	बदौसा रोड, अतर्रा	1991
31. श्री अखिल भुवन मिनी राइस प्लान्ट	नरैनी रोड, अतर्रा	1991
32. श्री गुरूमुखदासवायसमल राइस प्लाण्ट	बदौसा रोड, अतर्रा	1992
33. श्री रामलखन मिनी मार्डन राइस मिल	बाँदा रोड, अतर्रा	1992
34. श्री अमर इण्टरप्राइजेज	लखन कालोनी	1992
35. श्री चुन्ना प्रसाद कुशवाहा	बिसण्डा रोड, अतर्रा	1993
36. भागवत प्रसाद चावल उद्योग	नरैनी, बाँदा	1993
37. श्री रामदास गोपाल दास	बदौसा रोड, अतर्रा	1994
38. श्री जय माँदुर्गे मिनी राइस प्लान्ट	नरैनी रोड	1997
39. श्री तरूण इण्टरप्राइजेज	स्टेशन रोड, अतर्रा	1998
40. श्री राज मिनी मा0रा0मिल	बाँदा रोड, अतर्रा	1998
41. श्री रोशन मिनी मार्डन राइस प्लान्ट	नरैनी रोड, अतर्रा	1998
42. श्री किसान लघु उद्योग	नरैनी रोड, अतर्रा	1998
43. श्री कुमार मिनी राइस प्लान्ट	नरैनी रोड, अतर्रा	1998

44. श्री सम्राट मिनी राइस प्लान्ट	नरैनी रोड, अतर्रा	1998
45. श्री वी0के0गुप्ता, राइस प्लाण्ट	नरैनी रोड, अतर्रा	1999
46. श्री शिवमिनी राइस मिल	बिसण्डा रोड,अतर्रा	1999
47. श्री गायत्री ट्रेडर्स	नरैनी रोड, अतर्रा	1999
48. श्री बुन्देलखण्ड मिनी राइस प्लान्ट	बदौसा रोड, अतर्रा	2001
49. श्री महाराजा ट्रेडर्स	बाँदा रोड, अतर्रा	2000
50. श्री शिवप्रसाद कुशवाहा मिनी राइस	बिसण्डा रोड, अतर्रा	2000

स्रोत : स्व–सर्वेक्षण

उपरोक्त मिलों के सर्वेक्षण करने पर महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त हुई जिनको सारिणी संख्या (ब)1.5 में दर्शाया जा रहा है।

तालिका संख्या (ब) 1.5

बाँदा जनपद में संचालित कृषि–आधारित उद्योग के अन्तर्गत कार्यरत मिलों द्वारा उत्पादन प्रारम्भ करने में व्यय की गयी पूँजी का परिणाम

क्र.सं.	व्यय की गयी पूँजी (रू0में)	मिलों की संख्या
1	2	3
1.	10,000-1,00,000	34 (68.00 प्रतिशत)
2.	1,00,000-2,00,000	10 (20.00 प्रतिशत)
3.	2,00,000-3,00,000	2(4.00 प्रतिशत)
4.	3,00,000-4,00,000	3 (6.00 प्रतिशत)
5.	4,00,000-5,00,000	1(2.00 प्रतिशत)
	समग्र योग	50 (100 प्रतिशत)

स्रोत : साक्षात्कार सूची

टिप्पणी : लघुकोष्ठक में प्रदर्शित संख्या सम्बन्धित कालम संख्या का प्रतिशतांश है।

अतः उपर्युक्त सारिणी संख्या (ब)1.5 में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सर्वाधिक (68.00 प्रतिशत) मिलों में 10,000-1,00,000 रू0 की पूँजी उत्पादन प्रारम्भ करने में व्यय की गई।

1.3 शोध समस्या की कतिपय संकल्पनाएँ :-

संकल्पना एक कल्पना है, मान्यताओं का एक संग्रह या समूह है, वह अर्थ कथन है, जिसे अभी सम्पूर्ण होना है, संकल्पना तथ्यों का वह कच्चा घड़ा है, जिसका पकना विशेष है। यह संकल्पना बोध बढ़ाने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तथ्यों एवं अनुभवों से परे प्रक्षेपण करने वाले वास्तविक एवं अवधारणात्मक तथ्यों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में स्थायी कथन सही नहीं है जिसकी मान्यताओं की या निष्कर्षो की जाँच न कर ली जाये, उक्त संकल्पनायें अर्ध सत्य रहती हैं और अन्तिम विश्लेषण में तथ्यों के सापेक्ष व्यवहारिक सत्यता के आधार पर व्युत्पन्न संकल्पनायें या तो स्वीकृत होती हैं या तिरस्कृत होती हैं। स्थूल रूप से वैज्ञानिक अध्ययन में दो प्रकार की संकल्पनाएँ प्रयुक्त होती हैं - यथा

1. तात्विक संकल्पना
2. सांख्यिकीय संकल्पना

1. तात्विक संकल्पना :-

तात्विक संकल्पना के अन्तर्गत दो या दो से अधिक चरों के बीच अनुमान पर आधारित सम्बन्धों को व्यक्त किया जाता है। एक तात्विक संकल्पना परीक्षण योग्य नहीं होती है। पहले इसे परिचालनात्क एवं प्रयोगात्मक शब्दों में अनूदित करना पड़ता है। तात्विक संकल्पनाओं के परीक्षण का एक लाभपूर्ण विवेचन सांख्यिकीय सकंल्पनाओं द्वारा किया जाता है।

2. सांख्यिकीय संकल्पना :-

सांख्यिकीय संकल्पना को निम्न भाँति कथात्मक रूप दिया जा सकता है। यथा :

"एक ऐसी परिकल्पना जिसका प्रतिपादन आशान्वित परिणामों की भविष्यवाणी करने के लिए उस समय किया जाता है जबकि आदर्श प्रचना के अपनाएँ जाने पर सांख्यिकीय ढँगों को सभी प्राप्त समंक पर लागू नहीं किया जा सकता है। सांख्यिकीय परिकल्पना कहलाती हैं।"[1]

एक सांख्यिकीय संकल्पना के अनेक विकल्प हो सकते हैं किन्तु प्रायः विकल्प के रूप में चुनी गयी संकल्पना जिसका प्रतिपादन रोयनाल्ड पिशर द्वारा किया गया है। पिशर के अनुसार "शून्य परिकल्पना को अप्रमाणित सिद्ध करने के लिए ही प्रत्येक प्रयोग को वर्तमान का कछुआ कहा जा सकता है।"

शून्य संकल्पना का नकारात्मक संकल्पना संयोग की आशा की पृष्ठभूमि में प्राप्ति के लिए आँकड़ों के परीक्षण को व्यक्त करने का एक दृश्य ढ़ंग है। शून्य संकल्पना संयोग पर आधारित आशा है। इसे हम शून्य संकल्पना के नाम से इसलिए पुकारते हैं क्योंकि परीक्षण कार्य रीतिकी सहायता से हमें इसे ही गलत अथवा सही सिद्ध करना चाहते हैं।

उक्त वर्णन से स्पष्ट है कि किसी सफल अनुसंधान के लिए संकल्पनाओं का निर्माण अनिवार्य शर्त हैं। प्रस्तुत शोध से सम्बन्धित निम्नांकित शून्य संकल्पनाएँ है :-

1. बाँदा जनपद के आर्थिक विकास में कृषि-आधारित उद्योगों की विशिष्ट भूमिका है।
2. कृषि-आधारित उद्योगों की लाभदायकता के लिए विवेकपूर्ण नियोजन आवश्यक है।
3. कृषि-आधारित उद्योगों के लिए यातायात के लिए आवश्यक साधन नहीं है।
4. कृषि-आधारित उद्योगों के स्वरूप व संरचना में निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं।
5. कृषि-आधारित औद्योगिकरण की मूल संकल्पना कृषि प्रधान अर्थ व्यवस्था से सम्बद्ध है।
6. इसका मूल उद्देश्य ग्राम्य आर्थिक संरचना को उर्ध्वमुखी रूप में रूपान्तरित करना

---

1. आर०ए०पिशर - दि डिजाइन आफ एक्सपेरीमेन्ट्स, हैफनर, न्यूयार्क 951 पृ० 16, संदर्भित सामाजिक अनुसंधान, सुरेन्द्र सिंह, पृ० 156

है। वस्तुतः यह बड़े पैमाने के गहन पूंजी विनियोजन वाले वृहत औद्योगिकरण का एक विकल्प भी है।

7. कृषि उत्पादन, विधायन आधारित औद्योगिकरण कृषि क्षेत्र को उद्योग का मानक प्रदान करता है।

8. यह लघु पैमाने वांछित, तकनीक, तुलनात्मक लागत अंतर, क्षेत्रीय लाभकारिता, क्षेत्रीय संसाधन और क्षेत्रीय विणपन व्यवस्था को आधार मानकर निर्गत उत्पन्न करने का वह ढ़ाँचा है जो कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था को आय प्रदान करता है।

9. इससे 70.00 प्रतिशत जनसंख्या को रोजगार का सृजन होता है।

10. कृषि-आधारित उद्योगों की प्रवृति-ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधोमुखी है।

11. यदि कृषि-आधारित उद्योग की लाभदायकता के लिए आदेश समस्या का स्थायी हल ढूढ़ लिया जाये तो यह उद्योग बड़ी मात्रा में पूँजी पैदा कर सकते हैं।

12. इस उद्योग के लिए कच्चा माल एवं मशीनें अन्य नगरों से प्राप्त नहीं हो पाती हैं।

13. इन उद्योगों के विकास में मुख्य समस्या वित्त की है।

हम कह सकते हैं कि कृषि आधारित उद्योगों को ऐसा रूप देने की परिकल्पना की गई है जो स्थानीय रूप से आधारित हो ग्राम उन्मुखी हो तथा वाणिज्यिक सिद्धान्तों पर संगठित हो।

इस प्रकार उपुर्यक्त संकल्पनाओं द्वारा शोधार्थी शोध अध्ययन के निष्कर्षो को प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा।

1.4 शोध की प्रवर्तमान प्रासंगिकता :-

अपने आर्थिक एवं सामाजिक पिछड़ेपन तथा निम्नस्तर के कारण बाँदा जनपद लगभग प्रत्येक क्षेत्र में शोध के बहुमुखी आयाम प्रस्तुत करता है। ज्ञातब्य है कि बाँदा जनपद के विकास के अवरोधों को समझने एवं समस्याओं का हल खोजने के दृष्टिकोंण से विभिन्न पक्षों जैसे ग्राम्य एवं नगर नियोजन कृषि एवं सिचाई साधनों कृषि उत्पादों की

क्रय विक्रय की समस्याओं लघु उद्योगों तथा बैंकिंग से सम्बन्धित विषयों पर औपचारिक एवं अनौपचारिक रूप से अध्ययन हो चुके हैं या फिर हो रहे हैं। किन्तु जनपद में कृषि आधारित उद्योगों की बढ़ती हुई लोकप्रियता एवं आवश्यकता के बावजूद भी इन उद्योगों पर विचार नहीं किया गया। अतः यह उद्योग अनेक समस्याओं से घिरे होने के कारण जनपद में स्थैतिक रूप में उत्पादन एवं विक्रय का परम्परागत निष्पादन कर रहा है। आज यह अन्वेषण एवं तर्क वितर्क का विषय होना चाहिए कि जनपद में किस प्रकार कृषि-आधारित उद्योगों का विकास करके किस सीमा तक आय एवं रोजगार अर्जित कर गरीबी भुखमरी एवं कुपोषण को दूर किया जा सकता है।

अतः चयनित शोध-समस्या निम्न प्रकार से प्रासंगिक योगदानात्मक रचनात्मक एवं कल्याणकारी अर्थशास्त्र से सम्बन्धित है।

1. इस विषय का अध्ययन ही यह है कि जनपदीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में कृषि आधारित उद्योग महत्वपूर्ण घटक साबित हो सकते हैं। इस तथ्य को अभी तक शोध का विषय बनाया गया है। अतः प्रस्तुत शोध प्रबन्ध जनपद के आर्थिक विकास में कृषि उत्पाद आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण का अध्ययन जो कि प्रस्तुत अध्ययन की प्रासंगिकता को सुस्पष्ट कर देता है।
2. प्रस्तुत शोध समस्या वर्तमान ही नहीं वरन् भविष्यगत प्रासंगिक समस्या है। क्योंकि इससे निश्चित ही भविष्य में योगदान की सम्भावनाएँ है।
3. प्रस्तुत शोध समस्या इस अर्थ में और भी अधिक प्रासंगिक है कि कृषि उत्पादन आधारित उद्योगों का अध्ययन स्वरोजगार तथा निम्न वर्ग एवं निम्न आय वर्ग से अधिक सम्बन्धित है।
4. प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का इस अर्थ में और भी अधिक महत्व हो जाता है कि किस तरह कृषि उद्योग रोजगार पक्ष से सम्बन्धित है एवं सामाजिक

उपयोगिता के रूप में यह किस प्रकार कल्याणगत अर्थशास्त्र से सम्बन्धित है। निःसन्देह इन विभिन्न समस्याओं के स्पष्टीकरण हेतु शोध समस्या का अध्ययन प्रांसगिक है।

निष्कर्षतः अपनी परम्परागत स्थिति, समस्याओं, सम्भावनाओं एवं जनपद नियोजन कार्यक्रम के दृष्टिकोंण से यह अध्ययन प्रासंगिक है।

1.5 अध्ययनगत सीमाएँ :-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का अध्ययन वैसे न तो किसी मान्य अर्थव्यवस्था सिद्धान्त पर आधारित है और न ही इस शोध प्रबन्ध के माध्यम से बाँदा जनपद के कृषि आधारित उद्योग से सम्बन्धित किन्हीं विशिष्ट संकल्पनाओं का कोई विशेष रूप से सत्यापन किया जा रहा है। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि इस शोध प्रबन्ध की परिसीमाएँ उल्लेख कर दी जाएँ। वह निम्नलिखित हैं :-

1. यह शोध प्रयत्न वस्तुतः बाँदा जनपद के आर्थिक विकास में कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण की समस्याओं का ही अध्ययन करेगा। अतः यह समष्टिभावी अध्ययन नहीं है।
2. यह शोध प्रयत्न किसी सैद्धान्तिक निष्कर्ष की प्राप्ति हेतु नहीं किया जा रहा है।
3. यह शोध प्रयत्न संकलित समंक की विश्वसनीयता के अंश एवं सांख्यिकीय विश्लेषण की तकनीक की परिसीमाओं से प्रभावित होगा।
4. यह शोध प्रयत्न आठवीं योजना से अद्यतन समय तक समय बद्ध होगा।
5. यह शोध प्रबन्ध जनपद के सभी उद्योगों पर केन्द्रित नहीं होगा वरन् कृषि उत्पादन आधारित औद्योगिकरण और चावल मिलों की अवस्थिति पर आधारित होगा।
6. साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा एकत्रित समंक उस सीमा तक ही सत्य है जिस

सीमा तक उत्तरदाताओं ने सत्य उत्तर दिए हैं अतः निष्कर्षो की जाँच इस तथ्य को ध्यान में रखकर ही की जानी चाहिए।

7. प्रस्तुत शोध में बाँदा जनपद में संचालित अन्य उद्योगों से कृषि-आधारित उद्योग का कोई सांख्यिकीय अन्तर्सम्बन्ध स्थापित नहीं किया गया है।

8. प्रतिशत एवं माध्य के दोष इस अध्ययन की सांख्यिकीय परिसीमा को शासित करेंगे।

9. सांख्यिकीय निर्वचन हेतु प्रयुक्त सारिणी एवं उन पर आधारित चित्रमय प्रदर्शन भी इन विधियों की सांख्यिकीय अवकलनों के दोषों से शासित होंगे।

10. प्रस्तुत शोध में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक प्रयुक्त किए जायेंगे। इस सन्दर्भ में द्वितीय समंकों पर उस सीमा तक ही विश्वास किया जा सकता है। जिस सीमा तक उनके प्राप्ति स्रोत विश्वासप्रद हैं।

11. यह शोध प्रयत्न एक निश्चित समय अवधि आठवीं योजना समय तक समयबद्ध रहेगा।

12. यह शोध प्रबन्ध सैम्पलिंग पर आधारित होगा। अतः "केस टू केस स्टडी" करके चयनित शाखाओं के आधार पर ही अध्ययन एवं निष्कर्ष ज्ञापित करेगा।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि हर एक चीज की परिसीमाएँ होती हैं उसी को ध्यान में रखते हुए ही अध्ययन किया जाता है। इसी प्रकार इस विषय की परिसीमाओं को ध्यान में रखते हुए अध्यन किया जायेगा।

1.6 अवधारणाएँ :-

किसी भी क्षेत्र में ज्ञान प्राप्ति के लिए उसकी अवधारणाओं की गहन जानकारी आवश्यक है। अन्यथा शोधकर्ता को गलत निष्कर्षो पर पहुँचने की सम्भावना रहती है। अवधारणाओं द्वारा ही संकल्पनाओं का परीक्षण एवं सिद्धान्तों का निर्माण होता है।

किसी शोधकर्ता द्वारा शोध अध्ययन के लिए प्रयुक्त प्राकृतिक और जरूरी तथ्य ही उस अध्ययन की अवधारणाएँ हैं। अतः निरीक्षण, वस्तुओं और घटनाओं की जानकारी ही अवधारणा है।

पी0वी0यंग :- "सामाजिक विश्लेषण की प्रक्रिया में अन्य तथ्यों से अलग किये गये नये वर्ग को एक अवधारणा का नाम दिया जाता है।"[1]

अतः स्पष्ट है कि शोध समस्या सूचीबद्ध तथा सुलझाने के लिए अवधारणाएँ आवश्यक होती है। इसलिए प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रयुक्त अवधारणाओं का वर्णन करना प्रासंगिक होगा जो निम्नवत् है :-

1. कृषि पर आधारित उद्योग :-

ये वे उद्योग होते हैं जो विशेष रूप से कृषि पदार्थो पर आधारित होते हैं।

2. कृषि :-

कृषि उसे कहते हैं जो भूमि पर कृषक द्वारा अनाजें (दाल, चावल, तिलहन, गेहूँ, बाजरा, मूँग आदि) का उत्पादन किया जाता है।

3. कच्चा माल :-

इन उद्योगों के लिए कच्चा माल मूल रूप से कृषि से ही प्राप्त होता है, जैसे - तिलहन, चावल, कपास, सनई, दाल आदि।

4. वित्तीय सहायता :-

इन उद्योगों को सरकार पूँजी पतियों बैंकों, व्यवसायिक संगठनों आदि से ब्याज सहित या ब्याज रहित वित्त प्राप्त होता है। प्रदत्त वित्त को वित्तीय सहायता कहा जा सकता है।

5. ऋण साख :-

इन उद्योगों को जो ग्रामीण व व्यावसायिक बैंकों द्वारा उधार पूँजी ब्याज सहित दी जाती है उसे ऋण साख कहते हैं।

---

1. यंग पी0वी0 - साइन्टिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च

6- रोजगार सृजन -

किसी क्षेत्र में उत्पाद के वितरण के प्रारम्भ होने से रोजगार प्राप्ति के साधन में होने वाली वृद्धि को रोजगार श्रृजन कहते है।

7- लागत :-

इन उद्योगों में लागत बहुत कम आती है।

8- साधन-

कृषि आधारित उद्योगों में फर्मो को प्राप्त होने वाले उत्पादन हेतु आवश्यक वस्तुओं जैसे-- कृषि सामाग्री , वित्तीय सहायता आदि , को साधन कहते हैं।

9- लाभ :-

इन उद्योगों में मालिकों को बहुत लाभ प्राप्त होता हैं।

10- जीवन स्तर :-

दी हुई परिस्थितियों के अन्तर्गत सामान्य जीवन यापन हेतु आर्थिक ढ़ाचे को जीवन स्तर कहेगें।

11- प्रबन्धकीय कौशल :-

प्रबन्धकीय कौशल वह है जो उत्पादन को उचित रूप से संगठित करता है।

12- उत्पादन फलन :-

एक उत्पादन फलन, एक दिये हुये समय के लिए उत्पादन की मात्रा तथा उत्पत्ति के साधनों में भौतिक संबध को बताता हैं।

13- उत्पादन निष्पादन :-

उत्पादन का अर्थ है- मूल्यों का सृजन करना, और आर्थिक उपयोगिता की वृद्धि करना। निष्पादन का अर्थ लगातार उत्पादन का होना है।

14-शोध अभिकल्प :-

शोध के उद्देश्य के आधार पर अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को उद्घटित करने

के लिए पहले से बनाई गई योजना की रुपरेखा को शोध अभिकल्प कहते है।

15- आगम

किसी भी उद्योगों को उत्पादित वस्तुओं की बिक्री से जिसआय की प्राप्ति होती है उसे आगम कहते हैं।

16- उत्पादन का पैमानाः-

उत्पादन के पैमाने से तात्पर्य उत्पादन करने वाली इकाई के आकार से तथा उत्पादन किस मात्रा में किया जाता है। इस दृष्टि से उत्पादन दो प्रकार का होता है।

1- छोटे पैमाने पर

2-बड़े पैमाने पर

निष्कर्षत प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की एक निश्चित शोध प्रविधि है जिसके आधार पर बाँदा जनपद के कृषि आधारित उद्योगो के बारे में ज्ञान संम्बर्धन के प्रयास किये गये है।

1.5 अध्यायगत -प्रारूप :-

प्रस्तुत शोध अध्ययन की अध्ययन परियोजना निम्नवत रखी जा सकती है।

प्रथम अनुक्रम -

प्रथम अनुक्रम के अन्तर्गत पूर्व पीठिका में भारतीय अर्थ व्यवस्था व कृषि आधारित उद्योगों के साथ - साथ जनपद की भौगोलिक सामाजिक आर्थिक सरंचना के विशष्ट पहलू की प्रस्तावना पर प्रकाश डालते हुए शोध समस्यागत साहित्य सिंहावलोकन दिया गया है तत्पश्चात शोध समस्या स्वरूप एवं शोध अभिकल्प शोध समस्या की कतिपय संकल्पनाए शोध की प्रवर्तमान प्रासंगिकता सीमायें एवं अवधारणाओं का स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अनुक्रम -

इस अनुक्रम में कृषि एवं उद्योग का आर्थिक विकास की प्रक्रिया में योगदान तथा कृषि एवं उद्योग में अन्तर्सम्बन्ध , अन्तर्सम्बन्धगत सैद्धान्तिक परिकल्पनायें ,बाँदा जनपद

में कृषि आधारित अर्थ व्यवस्था के औद्योगिकरण हेतु अवस्थापनायें स्पष्ट की गई है।

तृतीय अनुक्रम -

इस अनुक्रम का सम्बन्ध कृषि का विकास खण्डवार स्थानीय करण, उत्पादन के प्रकार व गुण, उत्पादन विधायन की प्रस्थिति, कृषि- आधारित उद्योगो का निष्पादन, विशिष्ट प्रवृत्तियों से है।

चतुर्थ अनुक्रम-

इस अनुक्रम का सम्बन्ध कृषि पर आधारित उद्योगों का प्रबन्धन एवं वित्तीय पक्ष से है।

पंचम अनुक्रम -

इस अनुक्रम का संबध कृषि आधारित उद्योगो का रोजगार सृजन एवं आय सम्वृद्धि पक्ष से है।

षष्टम् अनुक्रम -

इस अनुक्रम का संबध कृषि आधारित उद्योगो का लागत पक्ष व कृषि आधारित उद्योगों का मूल्य निर्धारण पक्ष, कृषि आधारित उद्योगो के विक्रय पक्ष, कृषि आधारित उद्योगो का आगम पक्ष, कृषि आधारित उद्योगो के प्रतिफल पक्ष से है।

सप्तम अनुक्रम :-

इस अनुक्रम का सम्बन्ध वित्त पोषण पक्ष, प्रशासनिक पक्ष, कच्चा माल एवं श्रम आपूर्ति पक्ष, शक्ति के साधन, प्रबन्धकीय समस्यायें आदि से संबन्धित है।

अष्टम अनुक्रम :-

इस अनुक्रम का संबन्ध निष्पादन एवं समस्याओं का मूल्याकंन, अध्ययनगत निष्कर्ष-बिन्दु, कतिपय संभावित कृषि -आधारित उद्योगों के नियोजन हेतु सुझाव, प्रवर्तमान स्थिति हेतु सुझाव से सम्बन्धित है।

द्वितीय अध्याय

द्वितीय अनुक्रम

कृषि एवं उद्योग की आर्थिक अर्न्तनिर्भरता : सैद्धान्तिक पक्ष

2.1 कृषि एवं उद्योग का आर्थिक विकास की प्रक्रिया में योगदान

2.2 कृषि एवं उद्योग में अर्न्तसम्बन्ध

2.3 अर्न्तसम्बन्धगत सैद्धान्तिक परिकल्पनाएँ

2.4 बाँदा जनपद की विकास प्रक्रिया एवं कृषि उद्योग अर्न्तसम्बन्ध

2.5 बाँदा जनपद में कृषि-आधारित औद्योगिकरण हेतु अवस्थापनायें

द्वितीय अनुक्रम

कृषि एवं उद्योग की आर्थिक अन्तर्निर्भरता : सैद्धान्तिक पक्ष

"We may utilize the gifts of nature we choose but in her books the debits are always equal to the credits."

- Mahtma Gandhi

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का आशय कृषि उत्पाद से सम्बन्धित कच्चा माल जिसमें भूमि के अन्दर एवं भूमि के ऊपर कन्दों एवं वृक्षों से सम्बन्धित फसलों के साथ-2 पशुओं एवं मत्स्य पालन से निर्मित उत्पादों का निर्यात साथ ही उनके पोषक तत्वों का सम्वर्धन तथा अन्य उपयोगों हेतु उनकें विभिन्न कारकों तथा रसायनों का विलगन करना है।

चूँकि कृषि उद्योग, वृद्धि एवं विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रमुख स्रोत हैं अतएव न केवल क्षेत्रीय औद्योगिक विकास को गति प्रदान करते हैं, अपितु नई फसल एवं पशु पालन हेतु किसानों का मार्ग प्रशस्त करते हैं और उनकों उच्च उत्पादकता एवं विविध सम्मिलित फसलों के उत्पादन हेतु प्रेरित भी करते हैं, उत्पादन के पश्चात् फसलों को होने वाली हानियों को कम करना या हानि से बचना, साथ ही गुणवत्ता सम्वर्धन तथा उनसें और अधिक लाभ प्राप्त कराना है। न केवल इसके माध्यम से क्षेत्रीय असंतुलन एवं असमानता को दूर करना है, अपितु ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के सुअवसर बढाना है। औद्योगिक संरचना विक्रेन्द्रीयकरण सम्मिलित है। ग्रामीण तकनीकी दक्षता तथा प्रबन्धकीय क्षमता का विकास एवं नवीन कृषि क्रिया कलापों के माध्यम से सम्बन्धों को सुदृढ करना है। भारतीय आर्थिक सर्वेक्षण 1983-84 की तालिका विश्लेषण करनें पर ज्ञात होता है कि कृषि-प्रसंस्करण उद्योग रोजगार उत्पन्न करनें एवं अर्थ को बढ़ाने में पर्याप्त प्रभावशाली है। दूसरे उद्योगों की तुलना में अन्तर्राष्ट्रीयकरण में यह भी अपना योगदान करनें में सक्षम है। आगे यह भी देखनें में आया कि कृषि उत्पाद के निर्यात

में लगें लोगों नें अच्छा लाभ अर्जित किया और यही कारण है कि कृषि प्रसंस्करण एवं कृषि व्यापार के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। यह वास्तविक तथ्य है कि वर्ष 1994-95 में कृषि प्रसंस्करण उद्योगों से घरेलू उत्पाद कुल निर्यात का 61.4 प्रतिशत था।

श्रम उद्योग सांख्यिकीय कार्यालय के आंकडे बताते हैं कि समस्त कारखानों के श्रमिकों का 43.87 प्रतिशत कृषि-प्रसंस्करण उद्योगों में कार्यरत् है। यह आंकडे प्रकट करते हैं कि कृषि प्रसंस्करण उद्योग भारतीय अर्थव्यव्स्था में निर्णायक भूमिका निभातें हैं।

वर्ष 1974-75 से 1993-94 तक के 20 वर्ष के अन्तराल में पंजीकृत उद्योगों के वार्षिक सर्वेक्षण पर आधारित अध्ययन तालिका नं0 1 से अन्य उद्योगों की अपेक्षा कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के प्रदर्शन का विश्लेषण करनें से ज्ञात होता है कि सकल चुने हुए विशिष्ट उद्योगों में कृषि प्रसंकरण की अपेक्षा अन्य उद्योगों का प्रदर्शन उत्तम रहा है। अन्य उद्योगों नें न केवल उच्च वृद्धि दरों को प्राप्त किया, अपितु विशिष्ट उद्योगों में अपनी भागीदारी को भी बढ़ाया।

तालिका संख्या 2.1

विशिष्ट उद्योगों में कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की भागीदारी एवं वृद्धि दर

क्र.सं.	श्रेणी	कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की भागीदारी		वृद्धि दर प्रतिशत में		
		1974-75	1993-94	कृषि प्रसंस्करण उद्योग	अन्य उद्योग	सकल उद्योग
1.	उद्योगों की संख्या	51.5	46.6	2.72	3.75	3.24
2.	स्थिर पूँजी	15.5	14.8	7.74	8.04	8.01
3.	कर्मचारी	50.2	43.6	1.19	2.55	1.91
4.	लाभ	37.8	30.2	7.36	9.19	8.57
5.	नेट वैल्यू एडेड	33.7	26.0	5.43	7.39	6.81

स्रोत : सम्बन्धित वर्षो का वार्षिक औद्योगिक सर्वेक्षण, भारत सरकार।

आश्चर्यजनक रूप से कृषि प्रसंस्करण उद्योगों में रोजगार वृद्धि में न केवल अन्य

उद्योगों की वृद्धि दर के आधे से भी ज्यादा कमी आयी है। अपितु वर्ष 1974-75 और 1993-94 के मध्य में कृषि प्रसंस्करण उद्योगों में रोजगार की भागीदारी सकल उद्योगों के रोजगार के 50प्रतिशत से 44 प्रतिशत मे कमी आयी। श्रम का बढा हुआ मूल्य जैसा की लाभ की वृद्धि से प्रतिबिम्बित होता है। श्रम की पूँजी को स्थानापन्न हेतु प्रेरित करता है।

स्थायी पूँजी का उपयोग उद्योग के सभी क्षेत्रों में बढ़ा है। परिणाम स्वरूप कुल पूँजीगत मूल्य की वृद्धि हुई है। किन्तु कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की अंश धारिता न्यून होकर 1/3से1/4 अध्ययन अवधि में पाया गया। इसकी वृद्धि दर अन्य उद्योगों की तुलना में 1/3 से भी कम है इसका मुख्य कारण कृषि प्रसंस्करण उद्योग धन्धों की क्षमता का उपयोग सामान्य से कम किया जाना है परिणामस्वरूप कच्चा माल की आपूर्ति में बाधा, माँग की कमी तथा अवस्थापना सुविधाओं की संकीर्णता मुख्यकारक रही।

इस प्रकार इस अवधारण को बल मिलता है कि उद्योगीकरण के प्रथम चरण में देशों के प्राकृतिक/ कृषि प्राभूतों एवं बाद में अखाद्य एवं रेसारहित उत्पाद में विविधता हो जाती है। इंगल्स के नियम के अनुसार आय की वृद्धि होनें पर कृषि प्रसंस्कृत उत्पादों की माँग नीचे की ओर जाती है। जिससे कृषि प्रसंस्कृत उद्योगों की कार्यक्षमता निर्बल नजर आती है।

परिवर्तनशील संरचना :-

सन् 1974-75 में पंजीकृत क्षेत्र का निर्माण कुल मूल्य का 56.8 प्रतिशत था। जो 1989-90 में बढ़कर 61.2 हो गया। कृषि प्रसंस्कृत उद्योग भी निबन्धित क्षेत्रों में थे। इनका इस अवधि में कुल मूल्य 45.5 प्रतिशत से बढ़कर 58.8 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार क्षेत्र में तीव्र गति से वृद्धि अन्य उद्योग धन्धों की अपेक्षा अंकित की गयी।

निम्न तालिका में कृषि घटकों एवं उनकी वृद्धि की दर 1993-94 तक दो अकों में वर्गीकृत की की गयी है। आंकडे दर्शातें हैं, कि परम्परागत वस्त्र एवं खाद्य प्रसंसकरण

उद्योगों नें कृषि औद्योगिक संरचना पर अपना आधिपत्य जमाया है। जो आज भी जारी है। जैसे भी हो कपास एवं जूट वस्त्र उद्योग काष्ठ उत्पाद एव कागज उद्योग की वृद्धि कम हुई है। और इनकी हिस्सेदारी भी अन्य कृषि प्रसंस्कृत उद्योग धन्धों की अपेक्षा न्यून वृद्धि की अनुभूति कराती है। विशेष तौर पर रोजगार के सम्बन्ध में कपास एवं जूट उद्योग काष्ठ एवं काष्ठ उत्पाद उद्योग की वृद्धि नकारात्मक रिकार्ड की गई है।

तालिका संख्या 2.2

भारत में कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के घटक एवं वृद्धि (दो अंकीय वर्गीकरण)

1974-75 से 1993-94 तक

क्र.सं.	उद्योग	फैक्ट्रियों की संख्या			फिक्सड कैप्टल			एम्पल्वायी			नेट वैल्यू एडेड		
		1	2	3	1	2	3	1	2	3	1	2	3
1.	फूड प्रोसेसिंग (20-21)	40.7	37.9	2.37	29.9	29.4	7.65	30.4	31.6	1.38	21.5	29.3	7.08
2.	वेवरेजएण्ड टोबैका (22)	6.3	10.2	5.23	3.9	4.5	8.51	7.2	13.5	4.39	8.6	7.2	4.53
3.	टेक्सटाइल	30.0	31.8	3.04	45.4	46.8	7.91	50.3	42.0	0.29	51.4	49.1	5.19
3.1	काटन टेक्सटाइल	16.8	15.1	2.17	30.1	19.7	5.50	34.8	21.3	1.27	36.1	15.8	1.16
3.2	वूल सिल्क (सिन्थेटिक टेक्सटाइल(24)	7.2	6.6	2.28	10.1	21.1	11.80	5.1	8.9	4.06	8.1	19.0	10.02
3.3	जूट टेक्सटाइल(25)	1.0	0.7	1.36	3.7	1.5	2.98	8.0	4.5	1.64	5.1	1.9	0.32
3.4	टेक्सटाइल प्रोडक्ट्स	5.0	9.4	6.03	1.5	4.5	13.65	2.4	7.3	7.05	2.1	12.4	15.15
4.	वुड प्रोडक्ट्स-(27)	9.5	6.3	0.58	1.7	1.5	7.10	2.6	1.9	0.35	2.2	0.8	0.15
5.	पेपर प्रोडक्ट्स	11.5	10.3	2.17	18.1	15.7	6.99	8.0	7.9	1.15	14.0	9.2	3.23
6.	लेदर प्रोडक्ट्स(29)	2.0	3.4	5.51	1.1	2.1	11.53	1.5	3.1	4.96	2.2	4.4	9.20
7.	समस्त कृ0प्र0 उद्योग	100	100	2.72	100	100	7.74	100	100	1.19	100	100	5.43

स्रोत - सम्बन्धित वर्षो का वार्षिक सर्वेक्षण, भारत सरकार।

आलोक :-

1. कालम नं. 1 व 2 उद्योग अनुसार हिस्सेदारी का प्रतिशत प्रदर्शित करते हैं।

2. कालम नं. 3 वृद्धि दर प्रदर्शित करता है।

3. कोष्ठ के अन्दर की संख्याएँ NIC कोड हैं।

अधिकांशतः पूँजी के सापेक्ष सूती वस्त्र उद्योग में एकाकी मूल वृद्धि रिकार्ड की गई है। शेष खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में सभी कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की तुलना में अधिकांशतः वृद्धि अंकित की गई है। और इन उद्योगों ने रोजगार की भागीदारी एवं पूँजी में उन्नयन किया है। पेय पदार्थ और तम्बाकू उद्योगों नें अन्य कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की तुलना में अच्छा प्रदर्शन किया है। जबकि ऊन, सिल्क. सिन्थेटिक वस्त्र, वस्त्र उत्पाद, चमड़ा एवं चमड़ा उत्पाद उद्योगों नें उच्च वृद्धि दर एवं भगीदारी के साथ उत्तम प्रदर्शन किया है। समस्त वस्त्र उद्योग समूह नें जो भागीदारी बनाये रखी है वह प्रमुख रूप से वस्त्र उत्पाद और ऊन, सिल्क, सिन्थेटिक वस्त्र उद्योगों के कारण हैं। इस प्रकार यह पाया गया कि उच्चस्तरीय प्रसंस्करण से सम्बन्धित उद्योग अधिक प्रभावशली हैं।

भारत वर्ष में कृषि प्रसंस्करण उद्योगों का वर्तमान दृष्ट ढाँचा ऐसा है कि अपंजीकृत क्षेत्रों की निरन्तरता भी महत्वपूर्ण है। लेकिन इसमें लगातार गिरावट आ रही है। और कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के अर्न्तगत प्रसंस्करण का उच्च स्तर एवं उच्च पूंजी वाले उद्योग समस्त कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की वृद्धि के सापेक्ष अधिक महत्वपूर्ण है।

कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की न्यून वृद्धि : एक विवेचन :-

एक विवेचना जैसा कि पूर्व में प्रस्तुत किया जा चुका है, कि अन्य उद्योगों में सामान्यतया चुनिन्दा उद्योगों की विशेषताओं की न्यून वृद्धि अनुभव की गई है। कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के अर्न्तगत छोटे उद्योग समूहों में जैसे सूती वस्त्र उद्योग, जूट टेक्सटाइल्स, लकड़ी, एवं लकड़ी के उद्योग, कागज एवं कागज उत्पाद उद्योगों में नगन्य प्रदर्शन अंकित किया गया है। किसी उद्योग की वृद्धि आपूर्ति एवं माँग जैसे सहयोगी

कारकों पर निर्भर करती है। कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के लिए आवश्यक मात्रा में कच्चे माल की उपलब्धता में कमी आपूर्ति विभाग का एक प्रमुख कारक है। क्या कृषि प्रसंस्करण की न्यून वृद्धि कच्चे माल की कमी के कारण है? जैसा कि निम्न सारणी में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या - 2.3

भारतीय कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की माँग

क्र.सं.	उद्योग	कच्चेमाल का आधार		सम्बन्धित फसलों के उत्पाद की वृद्धि दर
1	2	1974-75	1993-94	1967-94
1.	खाद्य प्रसंस्करण	75.0	68.4	2.80
2.	शक्कर (गन्ना)	1.7	2.0	2.91
3.	खाद्य तैल	10.1	14.3	2.37
4.	वस्त्र उद्योग	4.5	4.2	2.27
5.	जूट उद्योग	0.6	0.5	2.23
6.	तम्बाकू उद्योग	0.2	0.2	1.63
7.	पशुधन आधारित उद्योग	47	48	-
8.	वन आधारित उद्योग	21.6	22.0	-

स्रोत : भारत सरकार, 1994

आलोक :-

क्रम सं0 1 से6 तक सम्बन्धित फसलों के क्षेत्रफल का प्रतिशत तथा क्रम सं07 में प्रत्येक 100 व्यक्तियों पर पशुओं की संख्या तथा क्रम सं0 8 पर भौगोलिक क्षेत्र में वनों का प्रतिशत दर्शाया गया है।

तम्बाकू, कपास, जूट, का उत्पादन इनकें कृषि क्षेत्रों के सन्दर्भ में स्थिर है या न्यून हुआ है वनों के कटान पर रोक के कारण वन आधारित उद्योगों की न्यून गति से

कुछ प्रतिशत वृद्धि हुई है यद्यपि खाद्यान्न उत्पादन का कृषि क्षेत्र कम हुआ है तथापि खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के कारण खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों में वृद्धि हुई है। चीनी मिलों एवं तैल मिलों का प्रदर्शन बेहतर हुआ है। यद्यपि कपास एवं जूट के उत्पादन में वृद्धि हुई है फिर भी इन पर आधारित उद्योगों के प्रदर्शन में न्यूनता पाई गयी है। जबकि तम्बाकू का उत्पादन कम होनें के बावजूद भी इनकें उद्योग में वृद्धि दर्ज की गई है। अतः उपर्युक्त परस्पर विरोधी तथ्यों से यह स्पष्ट होता हैं कि कि किसी भी उद्योग की वृद्धि, न्यूनता के लिए कच्चा माल एक मात्र कारक नहीं है। कपास जूट एवं काष्ठ आधारित उत्पादों के विकल्प आ जानें के कारण इन उत्पादों की माँग में न्यूनता के कारण इनकें उद्योगों में गिरावट आयी है। प्रसंसकारित खाद्य पदार्थो, खाद्य तैलों तथा शर्करा एवं पशुओं के उत्पादों के विकल्प न होनें के कारण इनकी माँग स्थिर है। इसलिए अन्य कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की तुलना में इनका प्रदर्शन उत्तम हैं कृषि प्रसंस्करण उद्योगों के अर्न्तभूत ढांचा में न्यूनता के कारण पूर्ण क्षमता के अनुरूप उपयोग नहीं होनें के कारण वृद्धि बाधित हो रही है।

अतः अर्न्तभूत ढांचा कच्चे माल की आपूर्ति एवं उत्पादों की मांग कृषि प्रसंस्करण उद्योगों की वृद्धि को प्रभावित करनें वाला कारक है। जो भी हो उच्च मूल्य आधरित उद्योग धन्धों की वृद्धि मांग को प्रभावित करती है। मांग बढ़नें के फलस्वरूप आय में परिवर्तन होता है। कृषि प्रसंस्कृत उद्योग धन्धे आय रोजगार एवं विदेशी मुद्रा का जनन करते हैं। यह उपरोक्त बातों से स्पष्ट होता है। विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग धन्धों की गति कृषि प्रसंस्करण उद्योग धन्धों के सापेक्ष निम्न है। जबकि कृषि प्रसंस्करण उद्योग धन्धे अपनी प्रभुता बढ़ानें में सक्षम हो रहें हैं। वह न केवल उद्योग धन्धों में अपनें अंश को बढ़ा रहें हैं अपितु वृद्धि की दर भी सकारात्मक और उच्च है। अभी तक अन्य उद्योग धन्धों का अनुपात ज्यादा था किंतु अब यह स्थित

परिवर्तित होकर कृषि प्रसंस्करण उद्योग धन्धों की ओर बढ़ती हुई प्रतीत होती है। यद्यपि सूती, ऊनी, रेशमी, कृत्रिम वस्त्र एवं चर्म उद्योगों को उच्च वृद्धि दर वाला चिन्हित किया गया है। किंतु सामान्यतया यह वर्ग नीचे की ओर जाता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। कृषि प्रसंस्करण उद्योग धन्धें भी तमाम समस्याओं का सामना कर रहें हैं जैसे क्षमता से कम उपयोग, कच्चे माल की अनिश्चित आपूर्ति समिति माँग और अवस्थपाना सुविधाओं की संकीर्णता और कई बार उच्च कराधान इसके विकास में बाधा डालतें हैं। अतएव भारत में इन उद्योग धन्धों के तुलनात्मक हानि लाभ का आकलन करते हुए उचित नीतियों का निर्धारण कर इनकी क्षमताओं का दोहन किया जाना चाहिए।

2.1 कृषि एवं उद्योग का आर्थिक विकास प्रक्रिया में योगदान :-

भारत में कृषि क्षेत्र राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा महत्वपूर्ण अंग है। परन्तु भारत एक कृषि प्रधान देश है, कृषि ही देश के अधिंकाश जनसंख्या के लिए आजीविका का साधन है। इसी प्रकार उद्योग देश के आधारभूत स्तम्भ है जिस पर हमारी अर्थव्यवस्था टिकी है। आज जो देश औद्योगिकरण में जितना आगे है वह देश उतना ही उन्नतशील माना जाता है जैसा कि शाही औद्योगिक आयोग ने कहा भी है कि "उद्योग सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए अत्यन्त लाभदायक होगा क्योंकि यह पूंजी के नये साधनों को उत्पन्न करेगा पूंजी की बचत को बढावा देगा, सरकार की आय में वृद्धि करेगा श्रमिकों को रोजगार प्रदान कर सकेगा और राष्ट्रीय जीवन के लिए प्रेरणा प्रदान करेगा।"[1]

इस प्रकार हमें दोनों के महत्व को स्पष्ट करनें के लिए पहले दोनों के अर्थ को स्पष्ट करना आवश्यक है।

उद्योग का अर्थ:-

उद्योग वह प्रक्रिया है जिस पर देश की व्यापक प्रक्रिया का विचार निहित है। और इसके द्वारा किसी भी देश का सम्पूर्ण आर्थिक ढाँचा परिवर्तित किया जा सकता है। जैसा

---

1. पाटली आर०एल० – Industrial Economics P. No. 5

कि पी कांग चांग ने कहा भी है कि औद्योगिकरण वह प्रक्रिया है, जिसमें आधारभूत उत्पादन कार्यों में परिवर्तन हो रहे हों। ये आधारभूत परिवर्तन जिनका संबध किसी औद्योगिक उपक्रम के यन्त्रीकरण, नवीन उद्योगों के निर्माण, नये बाजार की स्थापना से है।

कृषि का अर्थः-

पृथ्वी के स्रोतों का इष्टतम् प्रयोग करनें के लिए मनुष्य द्वारा प्रारम्भिक उद्देश्य भोजन्न, कपड़ा, ईधन आदि की पूर्ति के लिए जो क्रियाऐं की जाती हैं उन्हें कषि कहते हैं। जैसे फसलोत्पादन, पशु पालन, मधुमक्खी पालन, मछ्ली पालन, एवं रेशम कीट पालन आदि।

"An activity of man primarily aimed at the production of food, fibre and fuel etc. by optimum use of terrestrail resources is called of Agriculture."[1]

इस प्रकार दोनों के अर्थ से स्पष्ट हो जाता है कि देश के आर्थिक विकास करनें के लिए उद्योग व कृषि दोनों जरूरी है। कृषि हमारें देश का आधारभूत स्तम्भ है अतः इसी पर हमारे देश का अर्थव्यवस्था रूपी भवन खड़ा है। इसके महत्व को इस प्रकार स्पष्ट करते हैं। -

1. राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 1950-51 में 59 प्रतिशत था जो 1997-98 में 71 प्रतिशत हो गया है।
2. रोजगार में कृषि का महत्व स्पष्ट है क्योंकि देश की 70.6 प्रतिशत जनसंख्या कृषि से अपनी जीविका चला रही है।
3. विदेशों से आय अर्जित करनें में अधिकतर निर्यात कृषि उत्पाद का ही किया जाता है। अर्थात् 40प्रतिशत निर्यात कृषि पर आधारित वस्तुओं का किया जाता है।
4. उद्योग का आधार भी कृषि को ही माना जाता है क्योंकि उद्योग के लिए

---

1. डॉ0 अहलावत आई0बी0ए0 व डॉ0 ओम प्रकाश - शस्य विज्ञान के सिद्धान्त पृ0 -1

75प्रतिशत कच्चा माल कृषि से ही मिलता है।

आज हमारे देश में जो महत्व कृषि का है वही महत्व उद्योग का भी है। आज देश की उन्नति उद्योग पर आधारित है आज जो देश जितना औद्योगिकरण में आगे है वही देश अधिक उन्नति शील माना जाता है। आज देश में आधे से अधिक निर्यात उद्योगों द्वारा उत्पादित सामानों का ही होता है। चाहे वे चीनी उद्योग व सूती उद्योग हो। अतः स्पष्ट होता है कि कृषि का महत्व आर्थिक नहीं है फिर भी अधिकांश उद्योग धन्धें जो विदेश से आय अर्जित कर रहे हैं उनकें लिए कच्चा माल कृषि से प्राप्त होता है। उद्योगके महत्व को इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं-

1. विदेशों से आय अर्जित करनें में उद्योग का सर्वप्रथम स्थान है। आज सूती उद्योगों की देश में 216 मिले हैं जिससे 11.18 लाख टन उत्पादन होता है और 1998 में 0.59 मि0 टन चीनी का निर्यातकिया गया है। तथा जूट उद्योग में 1998 में 379.51 करोड़ रू0 की आय अर्जित हुई है। रेशम उद्योग के निर्यात को तालिका द्वारा स्पष्ट करते हैं।

तालिका संख्या - 2.4

क्र.सं.	वर्ष	निर्यात (रू0में)
1	2	3
1.	1987-88	264.96
2.	1990-91	440.00
3.	1992-93	900.00
4.	1997-98	1020.00
5.	1998-99	1413.00

स्रोत : प्रतियोगिता दर्पणः अतिरिक्तांक भारतीय अर्थव्यवस्था, 1999

2. राष्ट्रीय आय में उद्योग का योगदान भी कम नहीं है। 1996-97 में उद्योग का

योगदान 6.1प्रतिशत था।

3. उद्योग देश मे बेरोजगारी दूर करनें में भी सहायक होते हैं आज देश की 60प्रतिशत जनसंख्या उद्योग से ही अपना जीवनयापन कर रही है।

4. पूंजी निर्माण में वृद्धि भी उद्योग से ही सम्भव होती है।

अतः स्पष्ट होता है कि कृषि व उद्योगों का देश के आर्थिक विकास की प्रक्रिया में अपना अलग-2 महत्व है इन्हीं दोनों के सहारे देश की अर्थव्यवस्था चल रही है यही देश की अर्थव्यवस्था को चलानें के दो पहिए हैं। आज कृषि का उतना महत्व नही जितना महत्व उद्योग का है क्योंकि आज का युग औद्योगिकरण का युग है। औद्योगिकरण की उन्नति के द्वारा ही देश की उन्नति आंकी जाती हैं। परन्तु इन उद्योगों का आधार स्तम्भ कृषि ही है क्योंकि इनकों कच्चा माल कृषि के द्वारा प्राप्त होता है। अगर कृषि की उन्नति नहीं होगी तो उद्योग धन्धे नहीं पनप सकते हैं। जैसा कि सुकरात ने कहा है कि "जब खेती फलती फूलती है तब सब धन्धे पनपते हैं, किन्तु जब भूमि को बंजर छोड़ दिया जाता है तब अन्य सभी धन्धे नष्ट हो जाते है।"[1]

2.2 कृषि एवं उद्योग में अन्र्तसम्बंध-

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था का आधार कृषि और उद्योग धन्धे जिस देश में पनपते रहते हैं वही देश उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है जैसे अमेरीका, जापान, जर्मनी आदि देश।

अतः स्पष्ट है कि कृषि और उद्योग एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। कृषि और उद्योग एक दूसरे के लिए परस्पर सहायक होते हैं। औद्योगिकरण की सफलता कृषि पर अवलम्बित है और कृषि का विकास औद्योगिकरण पर औद्योगिकरण की सफलता पर्याप्त सीमा तक कृषि पर निर्भर होती है। कृषि में सुधार एवं विकास किए बिना औद्योगिकरण सम्भव नहीं है। उद्योग धन्धों का प्रमुख भोजन कच्चा माल होता है कच्चा माल हमको

---

1. पाटली आर0एल0 – Industrial Economics P. No. 5

उन्नत कृषि से ही उपलब्ध होता है। इसलिए सुकरात ने कहा है " जब खेती फलती फूलती है तब सब धन्धे पनपते हैं किन्तु जब भूमि को बंजर छोड़ दिया जाता है तब अन्य सभी धन्धे नष्ट हो जाते हैं।"

वास्तव में कृषि ही देश के आर्थिक ढाँचे की रीढ़ की हड्डी है। अर्थात् स्पष्ट है कि कृषि व उद्योग एक सिक्के के दो पहलू हैं एक के बिना अर्थव्यवस्था की गाड़ी चल नहीं सकती है।

अतः यह भी स्पष्ट कर देना उचित है कि कृषि और उद्योग एक दूसरे के ऊपर कैसे निर्भर हैं-

कृषि निर्भर करती है उद्योगों पर-

कृषि पूर्णतः उद्योग धन्धों पर ही आधारित है कृषि का विकास पूर्णतः उद्योग धन्धों पर ही आधारित है। क्योंकि तकनीकी प्रगति उद्योग धन्धों के द्वारा ही होती है उद्योग द्वारा ही नये-नयें कृषि सम्बन्धी यन्त्र तैयार किए जाते हैं तथा नये प्रकार के उन्नत किस्म के बीजों का निर्माण भी उद्योग द्वारा किया जाता है अच्छे किस्म की खादें भी उद्योग द्वारा ही कृषि को प्राप्त होती हैं। सिचाई के लिए नये साधन प्रदान करनें में जिन मशीनोंका प्रयोग किया जाता है वो भी उद्योग के द्वारा ही तैयार की जाती है। उद्योगों के द्वारा कषि को प्राप्त सहायता इस प्रकार है जिसको तालिका द्वारा स्पष्ट कर सकतें हैं।

तालिका संख्या 2.5 (अ)
जनपदों में कृषि विकास में सहायक यन्त्रीकरण
खाद व बीजों की स्थिति (जो उद्योगों द्वारा प्राप्त होता है) 1998-99 में

क्र.सं.	यंत्रीकरण	खाद	बीज	कीटनाशक दवायें
1	2	3	4	5
1	24620	11779	4858	1630

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका- 1998-99

अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपदों में उन्नत बीज, यन्त्रीकरण, खाद एवं कीटनाशक दवाईयों की सुविधा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। ये सब सुविधायें उद्योग धन्धों के कारण ही उपलब्ध हैं।

उद्योग पूर्णतया निर्भर है कृषि परः-

"उद्योग पूर्णतः कृषि पर आधारित है। क्योंकि आज उद्योग को कच्चा माल कृषि से ही मिलता है"।[1] अतः विभिन्न उद्योग धन्धें कृषि के कारण ही पनप रहे हैं विभिन्न उद्योग प्रधान देशों के आर्थिक विकास के ऐतहासिक अवलोकन से ज्ञात होता है कि कृषि के सुधार के द्वारा ही वहाँ के उद्योगों का विकास एवं उननति सम्भव हो सकी है। कृषि क्षेत्र औद्योगिकरण को अनेंक प्रकार से सहायता देता है जो कि निम्नलिखित है-

1. कृषि के द्वारा ही उद्योगों को कच्चा माल प्राप्त होता है।
2. कृषि विदेशी मुद्रा अर्जित करनें का एक साधन है कृषि उत्पादन का निर्यात करके विदेशों से औद्योगिकरण के लिए आवश्यक पूंजीगत वस्तुएं मगाई जास कती हैं।
3. वह उद्योगों के लिए निजी बचतों से पूंजी उपलब्ध कराता है।
4. वह विनिमय अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक होता है और इससे आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था का संचालन सम्भव होता है।

इसी सम्बन्ध में पी0टी0 बौरं तथा बी0एस0 यामें नें भी कहा भी है-

" आज के अग्रणी औद्योगिक देश भी किसी समय कृषि प्रधान देश थे आर्थिक इतिहासकारों ने इन उपायों का पता लगाया है जिनका अवलम्बन करते हुए समृद्ध एवं विकासशील कृषि नें समवर्ती या उत्तरवर्ती औद्योगिकरण के लिए आधार प्रस्तुत किया"

अतः स्पष्ट होता है उद्योग पूर्णतः कृषि पर निर्भर है। एक सारिणी द्वारा स्पष्ट कर रहें हैं कि जनपद में कितना कच्चा माल कृषि द्वारा उद्योगों को प्राप्त होता है-

---

1. शर्मा टी0आर0 – औद्योगिक अर्थशास्त्र पृ0 148

तालिका संख्या- 2.5 (ब)
जनपद में कृषि से उद्योगों को प्राप्त कच्चा माल
उत्पादन मैट्रिक टन में

क्र.सं.	फसल	1995	1996	1999
1	2	3	4	5
1.	चावल	53554500	5324800	5424600
2.	गेहूँ	--	--	--
3.	दालें	59.00	93573.00	161182.00
4.	कपास	282400	6759900	8749.00
5.	जूट	--	--	--
6.	सनई	53800	437.00	5438900

स्रोत :- सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद - बाँदा, 1999-2000

उपरोक्त सारिणी से स्पष्ट है कि कृषि आधारित उद्योगों को पूर्णतः कच्चा माल कृषि से प्राप्त होता है।

अतः कृषि और औद्योगिकरण में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी घनिष्ट सम्बन्ध के विषय में प्रो० स्टेले नें अपनें विचार प्रस्तुत किये है'- "कृषि की उत्पादकता में वृद्धि औद्योगिकरण को प्रोत्साहित करनें का सबसे ठोस साधन है।"

2.3 अर्न्तसम्बंधगत सैद्धान्तिक परिकल्पनायें -

कृषि और उद्योग में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जैसा कि पीछे के अध्यायों से स्पष्ट है। अतः कृषि और उद्योग को सैद्धान्तिक रूप में इस प्रकार स्पष्ट करते हैं।

किसी भी उद्योग में जिस वस्तु का उत्पादन किया जाता है उसे अर्थशास्त्र में उत्पाद या Output कहते हैं तथा जिन साधनों द्वारा उत्पादन किया जाता है उसे आदान व Input कहते हैं। यहाँ कृषि को आदान माना है और उद्योग को प्रदान माना है क्योंकि कृषि से आदान प्राप्त होता है और उद्योगों द्वारा उत्पादन प्राप्त किया जाता है इन दोनों के सम्बन्धों को गणितीय रूप में भी व्यक्त किया जा सकता है। क्योंकि Input और Output के बीच गणितीय सम्बन्ध है जैसा बीसप नें कहा है - **The production function**

is a mathametical relationship deseciping the way in which the quantity of particular product depend up on the quantities of particular input used.[1]

अतः किसी फार्म के उत्पाद तथा पड़त के सम्बन्धों को उत्पादन प्रकार्य या फलन कहते हैं।

उत्पादन फलन में दो घटक होते हैं एक निर्धारक होता है और दूसरा निर्धारण साधन जो उत्पादन के कार्य में लगे रहते हैं वे निर्धारक तत्व होते हैं और उत्पादन की मात्रा उन पर निर्धारण तत्व होते हैं। जैसे

XF (n,k,a)

X = उत्पादन (उद्योग)

F = फलनात्मक सम्बंध

N = श्रमिकों की संख्या

K = पूंजी

A = कृषि से प्राप्त साधन

अतः Input, Output सम्बंध को सैद्धान्तिक रूप से इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं अतः अधिकतम कुशल तकनीकी का प्रयोग करके उत्पादन को अधिकतम करते हैं इस फलनात्मक सम्बंध को दो प्रकार से स्पष्ट कर सकते हैं

1. अल्पकालीन उत्पादन फलन
2. दीर्घ कालीन उत्पादन फलन

1. यदि एक आदान को स्थिर रखा जाए और कुछ में परिवर्तन किया जाए तो इसे अल्पकालीन उत्पादन फलन कहते हैं। इस स्थिति को उत्पत्ति ह्रास नियम अथवा परिवर्तनशील अनुपातों का नियम कहते हैं।

2. जब सभी परिवर्तनशील हो तो उस विवेचना को दीर्घकालीन उत्पादन फलन कहते

---

1. डॉ0 सिंह आर0पी0 व डॉ0 सिंह बी0 : प्रक्षेत्र प्रबन्ध एवं उत्पादन अर्थशास्त्र – पृ0 255

हैं। इस स्थिति को पैमानें के प्रतिफल के नाम से भी व्यक्त कर सकते हैं।

अतः कृषि उद्योग के फलनात्मक सम्बंध को निम्न सिद्धान्तों के द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं–

1. उत्पत्ति ह्रास नियमः-

जब एक आदान को स्थिर रखा जाए और दूसरे को बढा दिया जाये या उनमें परिवर्तन किया जाये तो कुल उत्पादन बढेगा तथा सीमान्त उत्पादन घटेगा।

2. पैमानें का स्थिर प्रतिफलः-

यदि साधनों को स्थिर नही रखा जाये बल्कि साधनों को समान अनुपात में बढ़ाते रहे, तो कुल उत्पादन भी उसी अनुपात में बढ़ता है।

3. प्रतिस्थापन का प्रतिफल :-

यदि उत्पत्ति के साधनों को समान अनुपात में न बढ़ाकर भिन्न अनुपातों में बढ़ाया जाता है तो ऐसी दशा में जो कुल उत्पादन में वृद्धि होती है उसे प्रतिस्थापन प्रतिफल कहते हैं।

अतः स्पष्ट होता है कि कृषि और उद्योग के सम्बंध को सैद्धान्तिक रूप से इन सिद्धान्तों द्वारा स्पष्ट करते हैं। इन सिद्धान्तों के माध्यम से कृषि और उद्योग का फलनात्मक सम्बंध स्पष्ट हो जाता है।

2.4 बाँदा जनपद की विकास प्रक्रिया एवं कृषि उद्योग अर्न्तसम्बंध :-

उ0प्र0 के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बाँदा जनपद कृषि प्रधान क्षेत्र है। जनपद में 87 प्रतिशत व्यक्तियों की जीविका का आधार कृषि है। यहाँ की मुख्य फसलें - मक्का, बाजरा, गेहूँ, चावल, कपास, मटर, चना, तिलहन, जूट, सनई हैं। यहाँ की मुख्य फसलों को तालिका द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं।

तालिका संख्या - 2.6 (अ)

फसलों का उत्पादन (मी0टन में)

क्र.सं.	फसल	1993-94	1994-95	1995-96	1998-99
1.	चावल	53544500	7312200	5324800	5424600
2.	गेहूँ	- -	- -	- -	- -
3.	जौ	1328700	8128100	781500	771400
4.	ज्वार	59676900	714000	88900	895000
5.	जूट	- -	- -	- -	- -
6.	कपास	282400	6759900	884900	874900
7.	सनई	53800	43700	5338900	5438900
8.	तम्बाकू	--	58.00	- -	- -

स्रोत :- सांख्यिकीय पत्रिका - 1993-94 से 1998-99

अतः उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि यहाँ कृषि उत्पादन की बाहुल्यता है। कुल धान्यं 1995-96 में 283451.00 मी0टन कुल तिलहन 6256.00 मी0टन कुल दालें 16118.00 मी0टन है।

अतः इस जनपद की विकास की प्रगति पूर्णतः कृषि पर निर्भर है। इस जनपद में कृषि आधारित उद्योग अधिक संख्या में हैं वर्तमान में जनपद में उद्योग की संख्या 3288 हो गयी है।

जनपद की आर्थिक प्रगति में उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान है। उद्योगो के माध्यम से ही जनपद की प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है और अधिक से अधिक व्यक्तियों को रोजगार भी प्राप्त होता है जनपद की व्यवसायिक संरचना इस प्रकार है।

(अ) प्रथमिक क्षेत्र

(ब) द्वितीय क्षेत्र

(स) तृतीय क्षेत्र

कृषि आधारित उद्योग हमारे प्राथमिक क्षेत्र के अन्तर्गत आतें हैं। जनपद में उद्योगो की स्थिति को एक तालिका द्वारा दृष्टव्य कर सकते हैं।

तालिका संख्या 2.6 (ब)

उद्योगों की स्थिति

क्र.सं.	उद्योगों का प्रकार	वर्षवार उद्योगों की संख्या			
		1993	1997	1998	1999
1.	कृषि	404	1054	1065	1087
2.	अकृषि	504	23651	24661	27651

स्रोतः- सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद बाँदा,1993-94 एवं 1997-98

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपद के आधे से अधिक उद्योग कृषि पर आधारित हैं। और इन उद्योगों में जनपद के आधे से अधिक व्यक्ति कार्यरत हैं। जनपद में कृषि-आधारित उद्योगो में रोजगार में लगे व्यक्तियों की स्थिति को इस प्रकार दृष्टव्य कर सकते हैं।

तालिका संख्या 2.6(स)

तालिका- रोजगार में लगे व्यक्तियों की संख्या

क्र.सं.	उद्योग	1993-94	1996-97	1998-99
1.	कार्यरत व्यक्तियों की संख्या	1067	1767	1784
2.	लघु उद्योगों इकाइयों में	997	1767	1789
3.	ग्रामीण एवं लघु उद्योगों इकाइयों में	2224	3534	3664

सोत-- उद्योग निदेशालय पत्रिका, 1993-94, 1996-97, 1998-99

अतः उपरोक्त तालिका से सपष्ट है कि जनपद में 3534 व्यक्ति कृषि आधारित उद्योगो में कार्यरत हैं।

इस प्रकार जनपद के विकास के आधार स्तम्भ कृषि- आधारित उद्योग ही नजर

आते हैं जिनमें प्रति वर्ष उत्पादन में बढोत्तरी हो रही है। जनपद में प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि कृषि उद्योगो के कारण ही हो रही है जनपद के 55 प्रतिशत व्यक्ति कृषि आधारित उद्योगो में कार्यरत है। अतः पूर्णतः स्पष्ट होता है कि कृषि आधारित उद्योग ही जनपद की प्रगति के आधार स्तम्भ है।

2.5 बाँदा जनपद में कृषि- आधारित औद्योगिकरण हेतु अवस्थापनायें -

प्रस्तुत अध्याय में जनपद में संचालित कृषि- आधारित उद्योगों हेतु अवस्थापनाओं अथवा सुविधाओं पर प्रकाश डालेगें किसी भी उद्योग के अध्ययन के लिए उस उद्योग से सम्बिन्धित अवश्यकताओं विशेषकर कच्चे माल एवं उस उद्योग से सम्बन्धित यंत्रों तथा प्रबंधकीय स्थिति के बारे में विस्तृत विवेचना पर विचार किया जायेगा ।

कृषि- आधारित उद्योगों के लिये अवस्थापनायें -

बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों हेतु सभी उपयुक्त अवस्थापनायें विद्यमान है क्योंकि बाँदा जनपद कानपुर एवं इलाहाबाद जैसे प्रमुख शहरों से सीधा जुड़ा हुआ है। इन उद्योगों के लिये कच्चा माल जनपद के अन्दर से तथा आसपास के इन नगरो से मिल मालिक प्राप्त करते हैं। इन उद्योगो हेतु श्रमिक जनपद में ही मिल जाते हैं। इस उद्योग में प्रयुक्त होने वाली मशीनें जनपद में उपलब्ध न होने से मिल मालिक दूसरे नगरों से क्रय कर लेते हैं। क्योकि यहाँ यातायात की कोई परेशानी नही होती है जनपद में इस उद्योग के लिये निम्न अवस्थापनायें या सुविधायें उपलब्ध हैं।

1-कच्चा माल -

बाँदा जनपद में खरीफ,रबी जायद, तीन फसलें अधिक मात्रा में होती हैं जिसमें तिलहन,जूट कपास,सनई आदि फसलें बहुत अधिक मात्रा में होती हैं। इस लिये यहाँ पर कृषि आधारित उद्योग अधिक मात्रा में लगाये जाते हैं। जनपद में प्रतिवर्ष फसलों के उत्पादन की स्थिति इस प्रकार है जो कच्चे माल के रूप में इन उद्योगो में प्रयोग की जाती हैं।

तालिका संख्या 2.7(अ)

जनपद में फसलों की औसत उपज(कुन्टल प्रति हेक्टेयर)

क्र.सं.	फसलों का नाम	वर्ष		
		1993-94	1994-95	1998-99
1.	चावल	9.01	10.60	7.25
2.	गेंहूँ	14.44	14.77	14.99
3.	ज्वार	8.57	9.14	7.29
4.	जौ	17.18	8.89	12.44
5.	कुल दालें	59.42	6.72	7.41
6.	कुल तिलहन	44.02	4.63	39.80
7.	गन्ना	482.29	474.65	313.81
8.	सनई	4.89	4.03	4.42
9.	कपास	1.84	4.03	4.45
10.	जूट	--	--	--

स्रोत- साख्यिकीय पत्रिका, जनपद-बाँदा, 1993-94, 1995-96

उपरोक्त तालिका संख्या 2.7 से स्पष्ट है कि जनपद में दाल, चावल, तिलहन, कपास, सनई का उत्पादन अधिक मात्रा में होता है अतः कृषि- आधारित उद्योगों के लिये कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में है।

2. वित्तीय सहायता-

बाँदा जनपद में संचालित कृषि - आधारित उद्योगों से उत्पादन कार्य मिल मालिकों द्वारा स्वयं निजी साधनों एवं सम्पत्ति पर किया जाता है,वैसे इन उद्योगों में से कुछ इकाईयाँ बैंको तथा जिला उद्योग कार्यालय से ऋण लेकर उत्पादन कार्य कर रहीं हैं लेकिन अधिकांश फर्म स्वयं की निजी पूँजी पर आधारित हैं। इसके अतिरिक्त निम्न स्रोत से भी कृषि आधारित उद्योगों को वित्तीय सहायता प्राप्त होती है।

1- व्यक्तिगत पूंजी

2- मित्र एवं सम्बन्धी

3- महाजन एवं साहूकार

4-राजकीय सहायता

1- व्यक्तिगत पूँजी :-

कृषि आधारित उद्योगो में अधिकतर ईकाईयों के मालिक अपने निजी साधनो से पूंजी लगातें है, अर्थात इस उद्योग में अधिकांश पूंजी मिल मालिको को ही लगाना पड़ता है।

2. मित्र एवं सम्बन्धी :-

कृषि आधारित उद्योगों के मालिक मित्र एवं सम्बन्धियों से नाम मात्र को पूंजी प्राप्त करते हैं क्योंकि यह आवश्यक नहीं है कि फर्म मालिको के मित्र एवंसंबन्धी इतने अधिक धनी हो कि वह उनकी सहायता कर सकें फिर भी कुछ मिलों को मित्र या संबन्धियों से भी वित्त प्राप्त हो जाता है।

3. महाजन एवं साहूकार-

कृषि- आधारित उद्योगों के मालिक अधिकतर अशिक्षित हैं या फिर अर्द्ध शिक्षित हैं जिससे वे सरकार द्वारा प्रदत्त वित्तीय सुविधाओं का पूर्ण रूप से लाभ नहीं उठा पाते हैं। इस लिये अधिकांश उत्पादक मिल के स्वामी महाजनों एवंसाहूकारों से वित्त प्राप्त करते हैं। इनकी ब्याज दर भी बहुत अधिक ऊंची होती है किन्तु फिर भी अधिकतर मिल मालिकों को इनसे वित्त प्राप्त करना पड़ता है।

4. राजकीय सहायता -

इस उद्योग की तरफ वैसे सरकार कोई विशेष ध्यान नही दे रही है। किन्तु फिर भी कुछ मिल मालिकों ने बैंकों से ऋण प्राप्त करके तथा जिला उद्योग क्रेन्द्र के माध यम से ऋण प्राप्त करके वित्तीय सहायता प्राप्त की है।

3. श्रम सुविधा -

कृषि आधारित उद्योगों हेतु श्रम की पूर्ति जनपद में ही हो जाती है लेकिन

अधिकांश श्रमिक अशिक्षित रहते हैं जिस कारण वह कार्य ठीक से नहीं कर पाते हैं। लेकिन फिर भी श्रम शक्ति प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। जनपद में श्रम की मात्रा को एक सारिणी द्वारा स्पष्ट कर सकते है-

तालिका संख्या 2.7(ब)

जनपद में श्रम की मात्रा

क्र.सं.	वर्ष	श्रमिकों की संख्या
1	1994	28365
2	1996	28365
3	1997	30460
4	1999	36540

स्रोत :- सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद-बाँदा 1994,1996,1999

4. विपणन की सुविधायें -

जनपद में विपणन की सभी सुविधायें उपलब्ध हैं । यहाँ मिल मालिक उत्पादित माल को जनपद के अन्दर ही मण्डियों में बेचते हैं। अगर जनपद मे विपणन नही होता है तो आसपास के नगरों की मण्डियों में बेचते है।

5. बाजारी सुविधायें -

इन उद्योगो के लिये बाजारी सुविधायें जनपद में ही उपलब्ध हो जातीहैं नहीं तो मशीनें आदि आसपास के नगरों से उपलब्ध हो जाती हैं।

6- परिवहन की सुविधा-

इन उद्योगो से उत्पादित माल को मण्डियों तक ले जाने के लिये पर्याप्त सुविधायों है। टैक्ट्रकर,ट्रक, बैलगाड़ी, बस रेल इत्यादि।

उपरोक्त सभी साधनों के आसानी से उपलब्ध होने के साथ - साथ अन्य कई सुविधायें एवं इन उद्योगो के लिये उचित वातावरण तथा प्रबंधकीय दशायें भी बाँदा जनपद में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

तृतीय अध्याय

तृतीय अनुक्रम

बाँदा जनपद में समग्र औद्योगिक संरचना के सापेक्ष कृषि-आधारित उद्योगों की अवस्थिति एवं निष्पादन पक्ष

तृतीय अनुक्रम

बाँदा जनपद में समग्र औद्योगिक संरचना के सापेक्ष कृषि आधारित उद्योगों की अवस्थिति एवं निष्पादन

"Sustainable development is development that meets the need of the present without compromising the ability of future generations meet their own needs."

- World Commission, 1983

कृषि की धीमी प्रगति की तुलना में निरन्तर तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या ने ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी तथा प्रच्छन्न बेरोजगारी को जन्म दिया। कार्य की कमी से यहाँ अधिकांश व्यक्तियों की प्रति व्यक्ति आय नगरीय क्षेत्रों की तुलना में अत्यन्त कम है। आज भी लगभग 50 प्रतिशत लोग निर्धनता की रेखा के नीचे निवास करते हैं। कृषि क्षेत्र में संलग्न सम्पन्न कृषकों के अतिरिक्त, कृषि शेष ग्रामीण जनों को न्यून जीवन प्रदान करने में भी असमर्थ है। प्रचुर मात्रा में उपलब्ध श्रम संसाधनों के बावजूद ग्राम नगरों की तुलना में सामाजिक व आर्थिक रूप से काफी पिछड़े हुए हैं।

निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या ने केवल बेरोजगारी व निर्धनता को ही जन्म नहीं दिया है वरन् इसने कृषि विकास के अपेक्षित लाभों को भी कम करके कृषि क्षेत्र से प्राप्त होने वाली आय को विपरीत रूप से प्रभावित किया है।

रोजगार, उच्च आय प्राप्ति तथा नगरीय सुख सुविधा से आकर्षित होकर ग्रामीण श्रम नगरों की ओर स्थानान्तरित होता रहा है पर बढ़ती हुई भीड़ ने नगरों में बेरोजगारी व मंहगाई को बढ़ाया है और मंहगाई ने नगरों में जीवन निर्वाह लागत को ऊँचा कर दिया है। इतना ही नहीं नगरीय स्थानान्तरण ने अनेक आर्थिक व सामाजिक समस्याओं यथा निवास समस्या, प्रदूषण, पारिवारिक विघटन, अराजकता आदि को जन्म दिया है। अतः ग्रामीण जन जो उच्च आय प्राप्ति की आकांक्षा से नगरों में आते हैं वह अपनी आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी असफल रहते हैं। इन सबके अतिरिक्त युवा शक्ति के

कृषि क्षेत्र से स्थानान्तरण ने भी कृषि उत्पादकता को विपरीत रूप से प्रभावित किया है।

ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादक रोजगार, आय वृद्धि, उच्च रहन सहन के स्तर की प्राप्ति के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्र के समन्वित विकास हेतु कृषि के अतिरिक्त जीवन निर्वाह के वैकल्पिक साधन के रूप में ग्रामीण औद्योगिकरण को स्वीकार किया गया है।

स्थान निर्धारण की दृष्टि से ग्रामीण औद्योगिकरण, वृहद शहरी औद्योगिकीकरण की अपेक्षा संकुचित विचार है। औद्योगिकरण जहाँ व्यापक रूप से उद्योग स्थापना की प्रक्रिया का द्योतक है, वहीं ग्रामीण औद्योगिकरण का आशय ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग स्थापना से है।

इस प्रकार सभी उद्योग चाहे वह वृहद आकार के हों, मध्यम आकार के अथवा लघु आकार के, यदि ग्रामीण क्षेत्र में स्थित हैं, तो ग्रामीण उद्योग कहलायेंगे और इनके विस्तार की प्रक्रिया ग्रामीण औद्योगिकरण कहलायेगी।

पर क्या ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र उद्योग स्थापना ही ग्रामीण औद्योगिकरण है? यह सत्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना नगरों में बढ़ते हुए केन्द्रीकरण की समस्या को हल प्रदान करेगी पर इस प्रकार से उद्योगों का विस्तार ग्रामीण परिवेश को सुरक्षित रखते हुए क्षेत्र का विकास करने में समर्थ न होगा और इस स्थिति में ग्रामों के नगरों में परिवर्तित होने की अधिक संभावना होगी।

ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त बेरोजगारी, निर्धनता, निम्न रहन-सहन का स्तर, ग्रामीण जनसंख्या का नगरों की ओर स्थानान्तरण आदि के परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण क्षेत्र में किसी भी प्रकार के उद्योगों की स्थापना ही ग्रामीण औद्योगिकरण नहीं माना जा सकता। इस सन्दर्भ में ग्रामीण औद्योगिकरण की उद्देश्य के आधार पर व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। इसके अन्तर्गत ऐसे उद्योगों के विस्तार को ग्रामीण औद्योगिकीकरण के रूप में स्वीकार किया गया है जो ग्रामीण समाज के व्यावसायिक संगठन में परिवर्तन ला सकें।

इस रूप में ग्रामीण औद्योगिकरण को ग्रामीण बेरोजगारी के समाधान, उत्पादक रोजगार सृजन के माध्यम, ग्रामीण निर्धनता व नगरीय स्थानान्तरण की समाप्ति के साधन

तथा कृषि के सहायक के रूप में स्वीकार किया गया है।

चीन में हुए ग्रामीण औद्योगिकरण के आधार पर John Sigurdson, Ashok Mehta, S.D. Thappar आदि विचारकों ने ग्रामीण औद्योगिकीकरण के स्वरूप की व्याख्या "मध्यवर्ती कस्बों" अथवा "केन्द्रीय क्षेत्रों" अथवा "मध्यवर्ती स्टेशन" के रूप में की है जहाँ उद्योग के विकास हेतु संकुलन (Agglomeration) की सुविधा प्राप्त होने के साथ-साथ ग्रामीण श्रमिकों का सरलतापूर्वक आवागमन हो सके। ऐसे केन्द्र जहाँ एक ओर ग्रामीण श्रमिकों को रोजगार प्रदान करेंगे, वहीं कृषि विकास पर विपरीत प्रभाव नहीं डालेंगे।

उपरोक्त विश्लेषणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि - "ग्रामीण औद्योगिकरण ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों के विस्तार की ऐसा प्रक्रिया है जो अर्थव्यवस्था में उपलब्ध मानवीय व प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग करके क्षेत्र के विकास को तीव्र गति प्रदान कर सके।"

इस प्रकार ग्रामीण औद्योगिकरण के प्रमुख कारकों का विवेचन निम्नांकित रूप में किया जा सकता है।

1. ग्रामीण क्षेत्रों में अशोषित संसाधनों को प्रयुक्त करने की दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग विस्तार की प्रक्रिया।
2. ऐसे उद्योगों का विस्तार जो रोजगार के साथ-साथ उत्पादकता में भी वृद्धि लायें।
3. ऐसे उद्योगों का विस्तार जो कृषि क्षेत्र के विकास में सहायक हों।
4. सामान्यतः परम्परागत उद्योगों का विस्तार लाभप्रद व उपयोगी होता है पर ऐसे परम्परागत उद्यम, जो परिवर्तित माँग के अनुरूप उत्पादित वस्तुओं को परिवर्तित करने में सक्षम नहीं है तथा जहाँ उत्पादन प्रक्रिया में बहुत अधिक मात्रा में कच्चा माल नष्ट होता है, का विकास उपयुक्त न होगा।
5. आधुनिक तकनीक प्रयोग करने वाले ऐसे लघु व कुटीर उद्योग का विस्तार जिनका कृषि क्षेत्र पर विपरीत प्रभाव न पड़े।

6. अन्त में ऐसे सभी उद्योगों का विस्तार जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था की विशेषताओं को नष्ट न करते हों।

3.1 कृषि आधारित उद्योगों का विकास खण्डवार स्थानीयकरण :-

बाँदा जनपद उत्तर प्रदेश में स्थित है। बाँदा जनपद में चार तहसीले हैं - 1. बाँदा 2. बबेरू 3. नरैनी 4. अतर्रा और बाँदा जनपद में 8 विकासखण्ड हैं। 1. बड़ोखर खुर्द 2. तिंदवारी 3. जसपुरा 4. बबेरू 5. कमासिन 6. बिसण्डा 7. महुआ 8. नरैनी।

बाँदा जनपद में कृषि उपज की अधिकता है इसलिए जनपद के अन्दर कृषि आधारित उद्योगों की संख्या बढ़ रही है। बाँदा जनपद में प्रत्येक विकास खण्डों में कृषि आधारित उद्योगों की संख्या अधिक है। प्रत्येक विकासखण्ड में कितने कृषि-आधारित उद्योग हैं इस स्थिति को तालिका संख्या 3.1 द्वारा दर्शाया जा रहा है -

तालिका संख्या 3.1

कृषि-आधारित उद्योगों का विकासखण्डवार स्थानीयकरण

क्रम सं.	विकास खण्ड	मिलों की संख्या
1	बड़ोखर खुर्द	03
2.	तिन्दवारी	02
3.	जसपुरा	08
4.	बबेरू	10
5.	कमासिन	03
6.	बिसण्डा	13
7.	महुआ	08
8.	नरैनी	10

स्रोत : जिला उद्योग केन्द्र, बाँदा।

उपरोक्त तालिका संख्या 3.1 से स्पष्ट है कि बड़ोखर खुर्द विकास खण्ड में 3 मिलें, तिन्दवारी विकासखण्ड में 2 मिलें, जसपुरा विकास खण्ड में 8 मिलें, बबेरू में 10 मिलें,
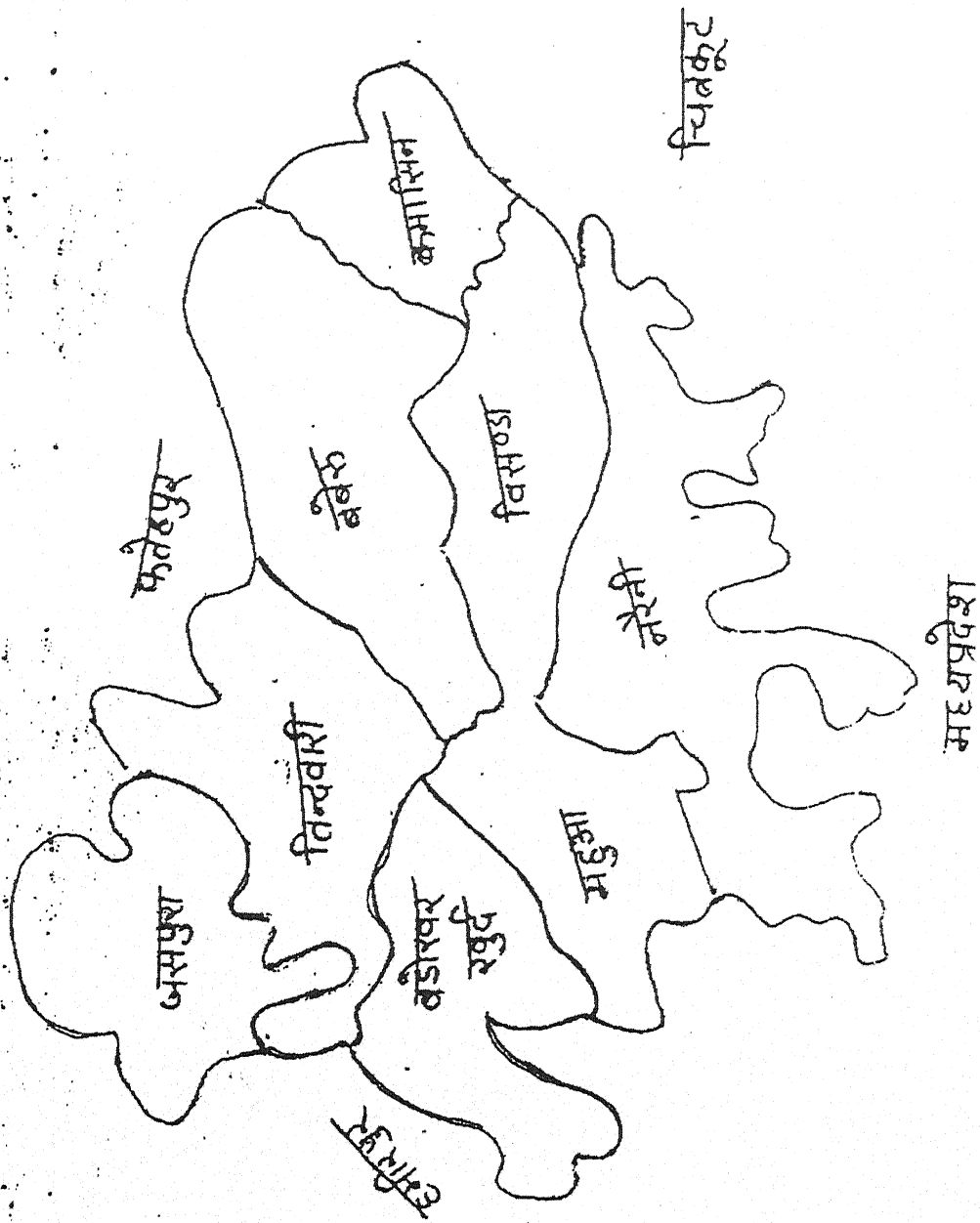
बाँदा जनपद के विकास खण्ड

चतुर्थ अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का प्रबंधन एवं वित्तीय पक्ष

4.1 प्रबंधकीय कौशल की अवधारणा

4.2 कृषि-आधारित उद्योग में प्रबंधकीय कौशल का महत्त्व

4.3 कृषि-आधारित उद्योग की प्रबंध व्यवस्था

4.4 कृषि-आधारित उद्योगों के वित्त पोषण की आवश्यकता

4.5 कृषि-आधारित उद्योगों के वित्त पोषण के स्रोत

4.6 कृषि-आधारित उद्योग एवं बैंक ऋण तथा सरकार प्रेरणायें

4.7 सरकारी प्रेरणायें व सुविधायें

4.8 कृषि-आधारित उद्योग एवं मितव्यतायें/अमितव्यतायें

4.9 प्रबंधन एवं वित्तीयन के विशिष्ट पक्ष

कमासिन विकासखण्ड में 3 मिलें, बिसण्डा विकासखण्ड में 13 मिलें, महुआ विकासखण्ड में 8 मिलें, नरैनी विकासखण्ड में 10 मिलें स्थित हैं।

इसके अतिरिक्त 31 मिलें अतर्रा में तथा 24 मिलें बाँदा में स्थित हैं।

अतः स्पष्ट है कि विकासखण्डों में अधिक मिलें इसलिए स्थित हैं क्योंकि यहाँ इन मिल मालिकों को कच्चा माल आसानी से उपलब्ध हो जाता है सबसे अधिक मिलें बिसण्डा विकासखण्ड में हैं, विसण्डा विकासखण्ड अतर्रा तहसील के अन्तर्गत आता है।

3.2 उत्पादन के प्रकार व गुण :-

उत्पादन का अर्थ :-

सामान्यतया उत्पादन से अर्थ किसी पदार्थ या वस्तु के निर्माण से लगाया जाता है। लेकिन अर्थशास्त्र में उत्पादन का अर्थ यह नहीं है। वैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्य किसी पदार्थ को बना नहीं सकता है। वह तो केवल प्रकृति द्वारा प्रदत्त पदार्थों का रंग, रूप व स्थान आदि बदलकर उनकी उपयोगिता में वृद्धि कर सकता है। जिससे मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके।

फेयर चाइल्ड *"वस्तु या पदार्थ को उपयोगी बनाना ही उत्पादन है।"*

अतः स्पष्ट है कि मनुष्य पदार्थों का सृजन नहीं कर सकता है, बल्कि अपनी बुद्धि मेहनत व योग्यता उसकी उपयोगिता में वृद्धि कर सकता है। इस प्रकार उपलब्ध पदार्थों में तुष्टिगुण का सृजन करना ही उत्पादन कहलाता है।

उत्पादन के प्रकार :-

उत्पादन छः प्रकार का होता है -

1. रूप परिवर्तन द्वारा उत्पादन।
2. स्थान परिवर्तन द्वारा उत्पादन।
3. समय परिवर्तन द्वारा उत्पादन।
4. अधिकार परिवर्तन द्वारा उत्पादन।

5. ज्ञान में वृद्धि द्वारा उत्पादन।

6. सेवा द्वारा उत्पादन।

1. रूप परिवर्तन द्वारा उत्पादन :-

जब किसी पदार्थ के रूप में वजन रंग व सुगन्ध आदि में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाता है कि वह पदार्थ मनुष्य के लिए पहले से अधिक उपयोगी बन जाये तो इसे रूप परिवर्तन द्वारा उत्पादन कहते हैं।

2. स्थान परिवर्तन द्वारा उत्पादन :-

जब कोई पदार्थ एक ऐसे स्थान से जहाँ वह प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है या जहाँ पर उसकी माँग कम है, वहाँ से ऐसे स्थान पर ले जाया जाय जहाँ वह अपेक्षाकृत दुर्लभ है या जहाँ उसकी माँग अधिक है तो इस प्रकार की क्रिया को स्थान परिवर्तन द्वारा उत्पादन कहते हैं।

3. समय परिवर्तन द्वारा उत्पादन :-

जब किसी वस्तु को कुछ समय के लिए सुरक्षित रख लिया जाता है तो उस वस्तु के तुष्टिगुण में वृद्धि हो जाती है। इस सुरक्षित रखने की क्रिया को समय परिवर्तन द्वारा उत्पादन कहते हैं।

4. अधिकार परिवर्तन द्वारा उत्पादन :-

जब किसी वस्तु या पदार्थ के अधिकार के परिवर्तन से उसके तुष्टिगुण में वृद्धि हो जाती है तो इसे अधिकार परिवर्तन द्वारा उत्पादन कहते हैं।

5. ज्ञान में वृद्धि द्वारा परिवर्तन :-

जब किसी वस्तु के तुष्टिगुण में वृद्धि उसके विषय में अधिक ज्ञान हो जाने से हो जाती है तो इसे ज्ञान द्वारा उत्पादन कहते हैं।

6. सेवा द्वारा उत्पादन :-

जब किसी कार्य या सेवा द्वारा मनुष्य की किसी आवश्यकता की तृप्ति हो जाती है

तो उसे सेवा द्वारा उत्पादन कहा जाता है।

उत्पादन के गुण :-

अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उत्पादन के अनेंक गुण हैं यदि उत्पादन में गुण न होंगे तो अर्थशास्त्र का महत्व समाप्त हो जायेगा।

1. आवश्यकताओं की पूर्ति उत्पादन द्वारा होती है :-

एक व्यक्ति उत्पादन करके ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।

2. जीवन स्तर उत्पादन की मात्रा पर निर्भर है :-

जिस देश का उत्पादन जितना अधिक होता है उस देश के नागरिकों की प्रति व्यक्ति आय उतनी अधिक होती है।

3. देश की आर्थिक उन्नति का आधार उत्पादन है :-

जिस देश में जितनी अधिक विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन होगा उस देश की उन्नति उतनी ही अधिक होगी।

4. उत्पादन राजकीय आय को बढ़ाता है :-

सरकार समस्त वस्तुओं के उत्पादन में कर लगाती है जिस देश में जितनी अधिक वस्तुएँ उत्पादित होंगी उस देश की आय में उतनी ही वृद्धि होगी।

5. उत्पादन के द्वारा ही उपभोग सम्भव है :-

आजकल आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उत्पादन के द्वारा ही उपभोग सम्भव है।

अतः स्पष्ट है कि उत्पादन ही देश की आर्थिक उन्नति का आधार है।

आर्थिक विकास की दृष्टि से साधनों की गतिशीलता को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। इससे एक ओर बाजार की अपूर्णताएँ दूर होती हैं, अर्थात् एकाधिकारी व एकाधिपात्यक प्रवृत्तियों को नियंत्रित करने में मदद मिलती हैं तथा दूसरी ओर साधनों का पूर्ण व अनुकूलतम उपभोग सम्भव होता है। परिणामस्वरूप जहाँ साधनों को उनका उचित प्रतिफल मिलता है व उनका शोषण नियंत्रित होता है वहीं लागत गिरती है। इसका समग्र

परिणाम यह होता है कि साधन अप्रयुक्त नहीं रहते अपितु बेरोजगारी व अल्प रोजगार की समस्या दूर होती है तथा तकनीकी प्रगति व आर्थिक विकास प्रोत्साहित होते हैं।

3.3 उत्पादन एवं विधायन की प्रास्थिति :-

अर्थशास्त्र में उत्पादन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। आर्थिक विचारों के इतिहास का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि उत्पादन हमेशा से आर्थिक विकास का मापदण्ड रहा हैं। सामान्यतः उत्पादन से अर्थ किसी पदार्थ या वस्तु के निर्माण से लगाया जाता है। लेकिन अर्थशास्त्र में उत्पादन का यह अर्थ है कि *''उपलब्ध पदार्थों में तुष्टिगुण का सृजन करना ही उत्पादन कहलाता है, उत्पादन के सम्बन्ध में प्रो0 टॉमस ने कहा कि मूल्य का सृजन ही उत्पादन है।''* फेयर चाइल्ड केयरनक्रांस मेयर्स इत्यादि आधुनिक अर्थशास्त्री उत्पादन को इसी प्रकार परिभाषित करते हैं।

कृषि आधारित उद्योग के अन्तर्गत मिलों में कच्चे माल द्वारा ही उत्पादन कार्य होता है। जैसे चावल मिल में धान से चावल बनाया जाता है, तेल मिल में लाही से तेल बनाया जाता है, आटा मिल में गेंहूँ से आटा बनाया जाता है, दाल मिल में अरहर, मसूर, मूँग, उरद तथा चने से दालें बनाई जाती हैं इत्यादि।

अतः इन उद्योगों से कच्चे माल धान, गेहूँ, लाही, चना, मूँग, अरहर, उरद, मसूर एवं कपास की उपयोगिता बढ़ायी जाती है और इस तरह मूल्य का सृजन किया जाता है। इन उद्योगों के अन्तर्गत कार्यरत मिलों में कच्चे माल की आर्थिक उपयोगिता को श्रम, पूँजी, प्रबन्ध, मशीनों, जल विद्युत के सहयोग से बढ़ाया जाता है। अतः श्रम, पूँजी, प्रबंध, मशीनों, जल विद्युत, आदि के माध्यम से धान, गेंहूँ, लाही, चने, अरहर, मूँग, मसूर, उरद एवं कपास का चावल, आटा, तेल, दाल, सूत में परिवर्तन किया जाता है, जिससे कि मूल्य का सृजन होता है।

3.4 कृषि आधारित उद्योग की उत्पादन संरचना :-

उत्पादन की संरचना इस पर निर्धारित होती है कि उत्पादन किस श्रेणी के अन्तर्गत

आता है। मुख्य रूप से उत्पादन को निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

1. प्राथमिक उत्पादन।
2. अर्न्तवर्ती उत्पादन।
3. अंतिम उत्पादन।

प्राथमिक उत्पादन, उत्पादन की प्रथम श्रेणी है। इसके अन्तर्गत उत्पादन की प्रथम अवस्था अर्थात् कच्चे माल के प्रथम उपयोग को लिया जाता है। जैसे धान से चावल निकालना प्राथमिक उत्पादन है। अर्न्तवर्ती उत्पादन, उत्पादन की द्वितीय अवस्था है। जैसे चावल से लाई, पापड़, आटा से डबलरोटी अर्न्तवर्ती उत्पादन के अन्तर्गत आता है। अन्तिम उत्पादन के अर्न्तगत कने से तेल निकालकर इस तेल से क्रीम इत्यादि के उत्पादन आते हैं। अन्तिम उत्पादन, उत्पादन की अन्तिम अवस्था है।

उत्पादन की श्रेणियों को जानने से इन कृषि-आधारित उद्योगों की संरचना स्पष्ट हो जाती है।

किसी भी उद्योग के अन्तर्गत होने वाला उत्पादन स्वयं भी कुछ श्रेणियों में बटा होता है। कृषि-आधारित उद्योगों का उत्पादन भी कई क्रियाओं के माध्यम से होता है। प्रथम क्रिया कच्चे माल को मँगाने की होती है, तदोपरान्त द्वितीय क्रिया जैसे चावल मिल में है तो धान को मशीन में डालना, तृतीय क्रिया में धान की भूसी से चावल अलग करना, चतुर्थ क्रिया चावल में पालिश और साफ कराना तथा पंचम क्रिया बिक्री के लिए भेजना यही प्रक्रिया दाल मिल में होती है।

किसी मिल या फैक्ट्री का उत्पादन जितना अधिक होगा वह उतनी ही सम‍ृद्धशाली समझी जायेगी। साथ ही मिल का उत्पादन देश को समृद्धशाली बनाने में भी सहयोग देगा।

इन उद्योगों में उत्पादन कच्चे माल से प्रभावित होता है। कृषि-आधारित उद्योगों में मिलों में, चावल मिल में धान, दाल मिल में चना, अरहर, मसूर आदि आटा मिल में गेंहूँ, तेल मिल में लाही, सरसो आदि कच्चे माल की आवश्यकता पड़ती है।

इन मिलों में प्रतिवर्ष 17,04,672 कुन्तल कच्चा माल मँगाया जाता है। कच्चा माल उपलब्ध हो जाने पर उत्पादन कार्य मशीनों द्वारा किया जाता है। इन मिलों का प्रतिमास औसत उत्पादन 35,514 कुन्तल होता है। इस उत्पादित माल को इसके बाद मण्डियों में भेज दिया जाता है।

3.5 उत्पादन-सम्भावना वक्र की अवधारणा और कृषि-आधारित उद्योग के सन्दर्भ में उत्पादन सम्भावना वक्र :-

उत्पादन सम्भावन वक्र आर्थिक विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण यंत्र होता है। यदि किसी समय विशेष में साधनों की मात्रा स्थिर है तथा उनका पूर्ण प्रयोग हो रहा है और एक अर्थव्यवस्था केवल दो वस्तुओं का उत्पादन कर रही है तो एक वस्तु की अधिक मात्रा के उत्पादन करने का अर्थ है कि वस्तु 2 के उत्पादन के साधनों को हटाना पड़ेगा अथवा वस्तु 2 की अधिक मात्रा के उत्पादन का अर्थ है कि वस्तु एक की कम मात्रा का उत्पादन करना पड़ेगा। वस्तु की कितनी मात्रा का उत्पादन किया जा सके इसके लिए समाज को चुनाव करना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में साधनों के पूर्ण रोजगार वाली अर्थव्यवस्था में समाज को विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के सम्बन्ध में चुनावों की सूची का निर्धारण करना पड़ेगा।

पीपी रेखा उत्पादन सम्भावना रेखा है। इस रेखा पर बिन्दु ए बताता है कि समाज वस्तु की ओ एम मात्रा तथा वाई वस्तु को 05 को उत्पादन कर सकता है। बिन्दु सी वस्तु एक्स की ओ एल मात्रा तथा एक्स की ओ आर मात्रा के उत्पादन की सम्भावना को बताता है। इसको चित्र संख्या 3.3 में स्पष्ट कर सकते हैं।

इन मिलों के सन्दर्भ में उत्पादन सम्भावना वक्र एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उत्पादन सम्भावना वक्र के माध्यम से श्रम व पूँजी की मात्रा में संयोगों का पता लगाया जा सकता है। अतः एक वर्ष में श्रम की कितनी मात्रा प्रयोग की जाये। पूँजी की कितनी मात्रा प्रयोग की जाये इसका पता वार्षिक उत्पादन सम्भावना वक्र के माध्यम से होता है।

श्रम के अर्न्तगत मानसिक व शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम को लिया गया है तथा

चित्र संख्या 3.3 (अ)

सैद्धान्तिक उत्पादन संभावना रेखा वक्र
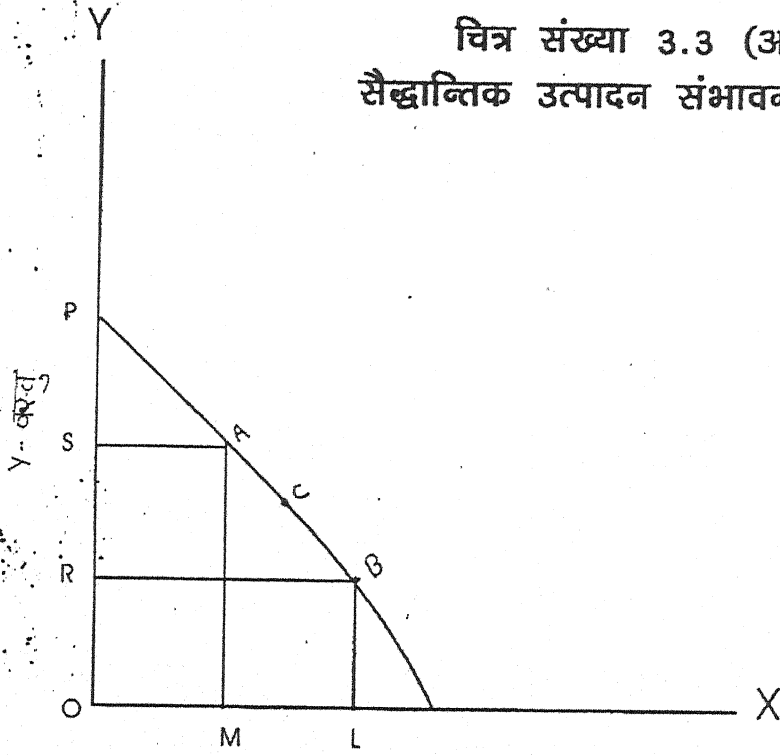
चित्र संख्या 3.3 (ब)

मिलों का उत्पादन संभावना वक्र
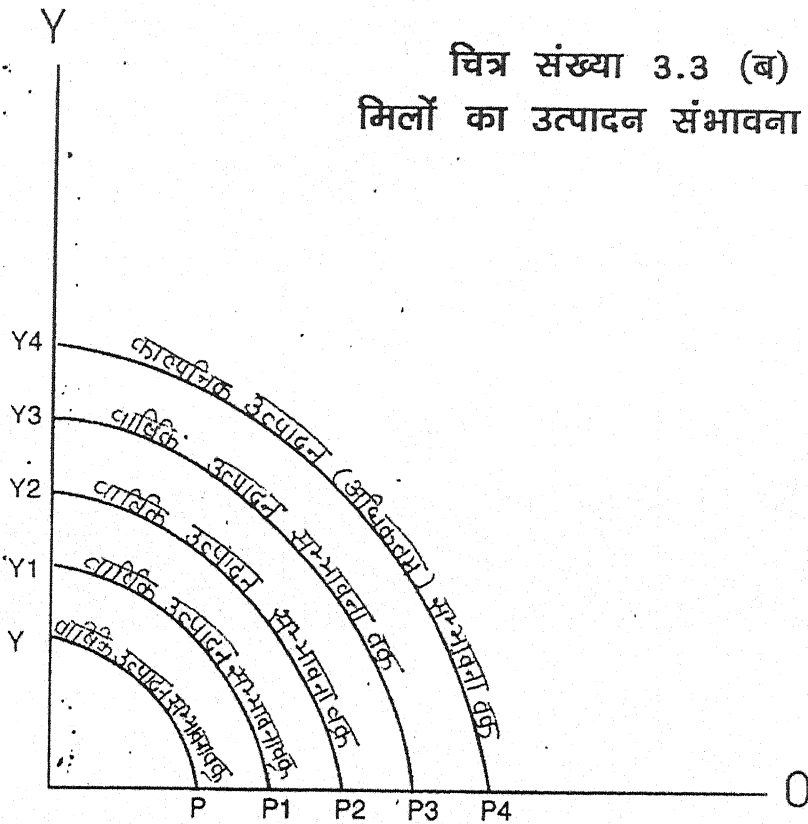
पूँजी के अर्न्तगत मशीनों को भी शामिल किया गया है।

इन मिलों का उत्पादन सम्भावना वक्र पी बिन्दु से प्रकट होता है जिससे पता चलता है कि किसी वर्ष विशेष में श्रम की ओ पी मात्रा तथा पूँजी की वाई पी मात्रा इन मिलों के लिए अधिकतम है।

वार्षिक उत्पादन वक्र को आधार मानकर काल्पनिक सम्भावना वक्र बनाये जा सकते हैं जो कि श्रम व पूँजी के उचित संयोगों को प्रकट करते हैं। सबसे ऊपर वाला वक्र वाई 5 पी श्रम व पूँजी के अधिकतम संयोगों को बताता है। (चित्र 3.3 में स्पष्ट है।)

3.6 कृषि-आधारित उद्योगों का निष्पादन :-

किसी मिल के लिए उसके द्वारा निष्पादित उत्पाद का अत्यन्त महत्व होता है। उत्पादन निष्पादन पर ही मिल की सफलता निर्भर करती है। किसी देश का उत्पादन ही उसके औद्योगिक विकास की स्थिति को स्पष्ट करता है।

कृषि-आधारित उद्योगों का उत्पादन कच्चे माल द्वारा ही होता है और कच्चे माल की अधिकतम उपयोगिता को श्रम, पूँजी, प्रबन्ध, मशीने, जल, विद्युत के सहयोग से बढ़ाया जा सकता है। अतः श्रम, पूँजी, प्रबंध, मशीने, जल विद्युत आदि के द्वारा गेहूँ, धान, लाही, अरहर, कपास को चावल, आटा, तेल, दाल, सूत में परिवर्तित किया जा सकता है जिससे कि उत्पादन प्रक्रिया सम्भव होती है।

वर्ष भर में हुए उत्पादन को वार्षिक उत्पादन कहते हैं। वार्षिक उत्पादन को ज्ञात करने के लिए वर्ष में प्रत्येक मास में हुए उत्पादन को जोड़ा जाता है। कृषि-आधारित उद्योग के अर्न्तगत कार्यरत मिलों के उत्पादन निष्पादन की स्थिति को तालिका संख्या 3.4 में प्रदर्शित कर सकते हैं।

तालिका संख्या - 3.4
बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योग के अन्तर्गत कार्यरत मिलों में उत्पादन निष्पादन की स्थिति (दस वर्षीय अवधि 1988-98 में)

क्र.सं.	वर्ष	उत्पादन (कुन्तल में)
1.	1988-89	22,500
2.	1989-90	23,700
3.	1990-91	49,900
4.	1991-92	22,900
5.	1992-93	34,200
6.	1993-94	24,100
7.	1994-95	21,700
8.	1995-96	22,500
9.	1996-97	45,000
10.	1997-98	31,300
	समग्र योग	2,97,800

स्रोत : साक्षात्कार सूची

उपरोक्त सारिणी संख्या 3.4 से स्पष्ट है कि 50 मिलों द्वारा दसवर्षीय अवधि में 1988-89 में 22,500 कुन्टल, 1989-90 में 23,700कुन्टल, 1990-91 में 49,900 कुन्टल, 1991-92 में 22,900 कुन्टल, 1992-93 में 34,200 कुन्टल, 1993-94 में 24,100 कुन्टल, 1994-95 में 21,700 कुन्टल, 1995-96 में 20,500 कुन्टल, 1996-97 में 45,000 कुन्टल, 1997-98 में 31,300 कुन्टल, उत्पादन की मात्रा रही है। सबसे अधिक उत्पादन की मात्रा 1990-91 में रही तथा सबसे कम 1994-95 में उत्पादन की मात्रा रही। इस स्थिति को चित्र संख्या 3.4 में स्पष्ट किया गया है।

उपयुक्त उत्पादन सामाग्री का उपयोग :-

किसी भी उद्योग में उत्पादन प्रक्रिया के दौरान उपयुक्त व बेकार सामाग्री अवश्य बचती है। इसी प्रकार जो कृषि सामाग्री बचती है, जैसे चावल मिल में धान की भूसी, दाल मिल में अरहर चने की भूसी सब बेंच दी जाती है दाल मिल से निकाली भूसी जानवरों के खाने के काम आती है। धान की भूसी बर्फ रखने, क्राफ्ट बनाने के काम आती है। तथा तेल मिल से निकली खरी भी बेंची जाती है जिसे जानवर खाते हैं। जिससे दूध का उत्पादन बढ़ता है। चित्र संख्या 3.4 में दसवर्षीय अवधि में कृषि आधारित उद्योग में कार्यरत 50 मिलों का उत्पादन निष्पादन प्रदर्शित किया गया है।

3.7 निष्पादनगत् विशिष्ट प्रवृत्तियाँ :-

किसी मिल के द्वारा उत्पादन निष्पादन सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। उत्पादन निष्पादन पर ही मिल की सफलता निर्भर है। कृषि आधारित उद्योगों का उत्पादन कच्चे माल द्वारा ही होता है। अतः निष्पादनगत् विशिष्ट प्रवृत्तियाँ इस प्रकार है :-

1. उत्पादन निष्पादन में कच्चे माल के साथ-साथ श्रम, पूँजी, प्रबंध, जल, विद्युत की भी आवश्यकता होती है।
2. वर्ष में हुए उत्पादन को ही वार्षिक निष्पादन कहते हैं।
3. वार्षिक उत्पादन को ज्ञात करने के लिए वर्ष में प्रत्येक मास में हुए उत्पादन को जोड़ा जाता है।
4. 50 मिलों द्वारा दसवर्षीय अवधि में सबसे अधिक उत्पादन 1990-91 में 49,900 कुन्टल हुआ और सबसे कम उत्पादन 1994-95 में 21,700 उत्पादन हुआ।
5. उत्पादन को मुख्य तीन श्रेणियों में रखा जाता है। प्राथमिक, अर्न्तवर्ती व अंतिम इन्हीं श्रेणियों से होकर उत्पादन प्रक्रिया पूरी होती है।

6. दसवर्षीय अवधि में 50 मिलों का कुल उत्पादन 27,98000 कुन्टल हुआ।

7. उत्पादन के पश्चात् बचने वाली बेकार सामाग्री का उपयोग हो जाता है।

रेखाचित्र संख्या - 3.4

बाँदा जनपद में दसवर्षीय अवधि में कृषि-आधारित उद्योग में कार्यरत 50 मिलों का उत्पादन निष्पादन
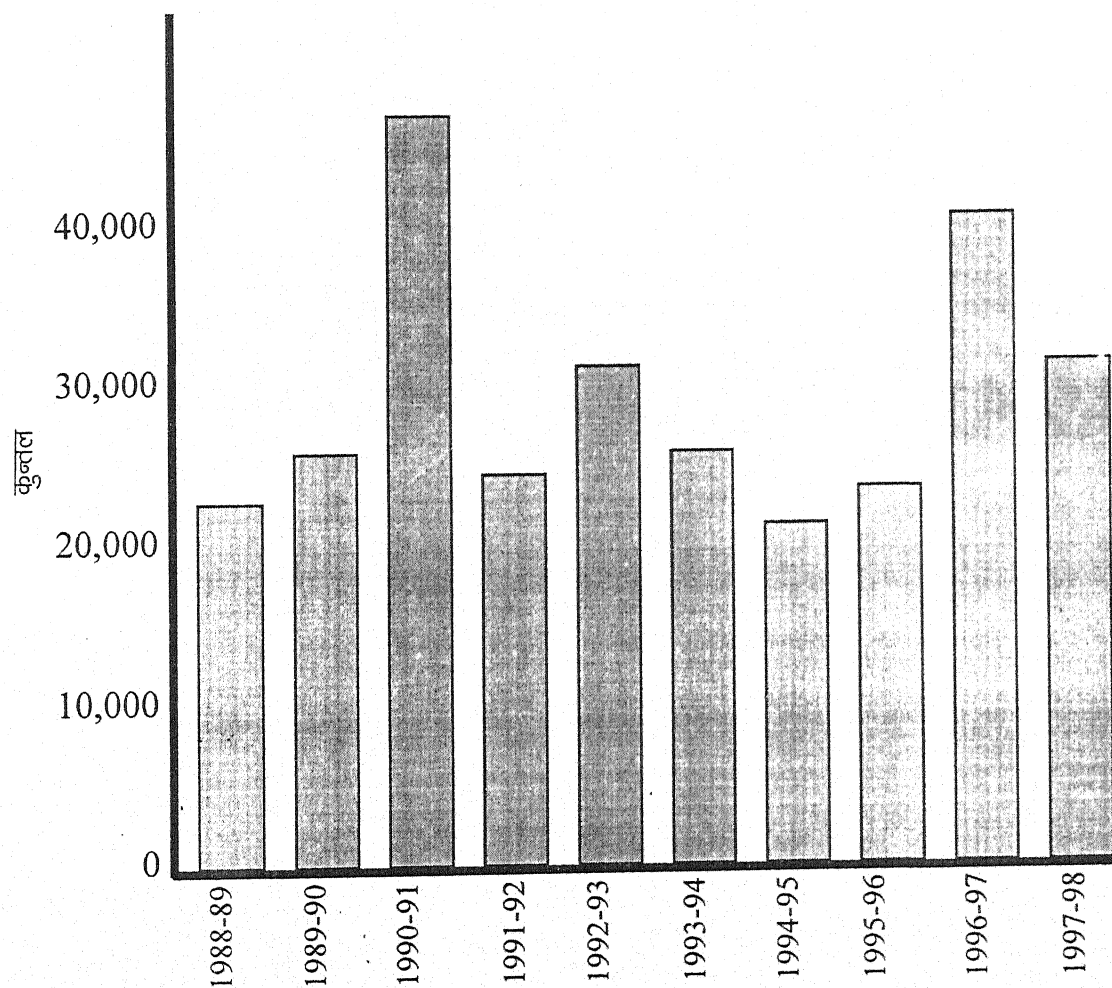
पैमाना 1" = 10,000 कुन्तल

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अनुक्रम

कृषि आधारित उद्योगों की प्रबंध व्यवस्था :-

"The purpose of studying economics is not to acquire a set of readymade answers to economic questions, but to learn how to aviod being deceived by economists."

- Mrs. John Robinson

प्रबंध किसी भी उत्पादन का एक महत्वपूर्ण साधन होता है। प्रबन्ध पैमाने की बचतें उत्पन्न करता है। जिससे लाभ की उत्पत्ति होती है। प्रबंध उत्पादन में उत्पत्ति बृद्धिमान नियम को गतिशील बनाये रखता है। प्रबंध, उत्पादन की बिक्री की नयी तकनीकों को अधिक से अधिक प्रयोग में लाने का प्रयास करता है। तथा श्रमिकों के उचित प्रयोग का उपाय करता है। उत्पादन में प्रबंध की महत्ता को जानने से पूर्व इसके अर्थ को जानना अति आवश्यक है।

4.1 प्रबंधकीय कौशल की अवधारणा :-

प्रबंध के ऊपर उत्पादन को उचित रूप से संगठित करने का भार होता है। उत्पादन के विभिन्न साधनों को इस अनुपात में नियोजित करना कि लागत न्यूनतम रहे प्रबंध का ही कार्य होता है। प्रबंध का अर्थ साहसीधर्म के अर्थ से अलग है। साहसी का अर्थ है अनिश्चितता को वहन करना जबकि प्रबंध का अर्थ है उत्पादन को अधिकतम करने के लिए मानसिक व शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम का त्याग करना। प्रबंध उत्पादन सम्बन्धी अनेक बातों का निर्णय लेता है। वह यह निश्चित करताहै कि उत्पादन छोटी मात्रा में किया जाये या बड़ी मात्रा में। इसके साथ-साथ उत्पादित वस्तु को कहाँ-कहाँ बेचा जाये इसका निर्धारण भी प्रबंध करता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रबंध वह है जो उत्पादन को उचित रूप से संगठित करता है। जिन कृषि-आधारित उद्योगों का अध्ययन किया जा रहा है उसके अन्तर्गत प्रबंध की

अति आवश्यकता नहीं होती। लेकिन प्रबंध की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि प्रबंध के बिना उद्योगों का चलना मुश्किल है। अतः इन उद्योगों में एक प्रबंधक, एक मुनीम, कोषाध्यक्ष व कर्मचारी वर्ग होते हैं। इन उद्योगों में प्रबंधक मानसिक व शारीरिक श्रम करता है तथा उत्पादन सम्बन्धी अनेक बातों का निर्णय लेते हैं। इस सब के बदले उसे पारिश्रमिक या वेतन प्राप्त होता है।

4.2 कृषि-आधारित उद्योग में प्रबंधकीय कौशल का महत्व :-

प्रबन्ध का उत्पादन में एक महत्वपूर्ण योगदान है। प्रबन्ध उत्पादन की विभिन्न क्रियाओं को सुचारू रूप से क्रियाशील करता है जिससे उत्पादन में नियमितता बनी रहती है। प्रबन्ध का अर्थ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह पैमाने की बचतों को उत्पन्न करता है। इसके लिए प्रबन्ध बिक्री व उत्पादन की नयी तकनीकों का प्रतिपादन करता है और उन्हें प्रयोग में लाता है। इसमें विक्रय, क्रय, उत्पादन तथा उद्योग में व्यवसाय के विभिन्न कार्यो की व्यवस्था करनी होती है।

इसके अलावा प्रबंध उत्पादन में उत्पत्ति वृद्धिमान नियम को क्रियाशील बनाये रखने में सहायक होता है तथा साथ ही उत्पत्ति ह्रासमान नियम पर नियंत्रण रखता है।

4.3 कृषि-आधारित उद्योग की प्रबंध व्यवस्था :-

बाँदा जनपद में इन उद्योगों में एक प्रबन्धक, एक मुनीम, एक कोषाध्यक्ष और श्रमिक होते हैं।

इन उद्योगों में प्रबंधक मुख्य होता है यही अधिकतर उद्योगों में स्वयं सभी कार्य देखता है। प्रबन्धक से आशय एक ऐसे व्यक्ति से है जो संचालक मण्डल के निरीक्षण नियंत्रण एवं निर्देशन या महत्वपूर्ण मामलों का निर्णय लेता है। उत्पादन क्रिया को सुचारू रूप से चलाने का कार्य प्रबन्धक ही करता है। अतः इन उद्योगों का सम्पूर्ण भार प्रबन्धक या मैनेजर के ऊपर ही रहता है।

एक मुनीम होता है जो इन उद्योगों में लिखा पढ़ी का सारा काम देखता है। सारा

हिसाब, इन उद्योगों का, मुनीम द्वारा रखा जाता है। सारे बही खाते, उद्योगों के, मुनीम तैयार करता है। प्रत्येक मिल में 3 या अधिक से अधिक 8 श्रमिक तक कार्य करते हैं जो इन मिलों के उत्पादन सम्बन्धी कार्य में पूर्ण सहयोग देते हैं। मिलों में श्रमिकों के मुख्य कार्य इस प्रकार होते हैं :-

1. मशीनों को चलाना।
2. उत्पादित माल को कचड़े से अलग करके साफ करना। जैसे दाल और चावल मिल में भूसी को अलग करना और उत्पादित माल को साफ करना।
3. मिलों से निकले कचड़े को फेंकना।
4. तैयार माल के विक्रय के लिए यातायात के साधन तक पहुँचाना।
5. मिलों की सफाई आदि का कार्य करना।
6. इसके अलावा प्रबंधक द्वारा बताये गये प्रत्येक कार्य को करना।

इन मिलों में श्रमिकों का वेतन रू0 900/- से रू0 1500/- के बीच होता है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रबंध व्यवस्था ही ऐसी है जो उत्पादन प्रक्रिया को सुचारू रूप से चला सकती है। कृषि-आधारित उद्योगों की प्रबंध व्यवस्था को चित्र द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं -

तालिका संख्या 4.1

प्रबन्ध व्यवस्था

वेतन	प्रबंध व्यवस्था	कर्तव्य
वेतन-उद्योग का लाभ	प्रबन्धक	उद्योग के प्रबंध का पूरा संचालन, व्यवस्था तथा आवक, विक्रय एवं करों की आदायगी का संचालन करना।
रू0 2000	मुनीम	बही खाते सम्बन्धी कार्य
रू0 800/- से रू01500/-	श्रमिकों का दल	उत्पादन सम्बन्धी कार्य

तालिका संख्या 4.1 से स्पष्ट है कि इन उद्योगों में प्रबन्धक ही प्रमुख होता है सभी उद्योगों की सारी व्यवस्था देखता है। जितना उद्योगों को लाभ होता है सम्पूर्ण प्रबन्धक को मिलता है क्योंकि जनपद में सारे उद्योग निजी स्वामित्व में है। इसके बाद मुनीम होता है और उसके बाद श्रमिक होते हैं जो उत्पादन सम्बन्धी कार्य करते है। इनका वेतन रू0 900/- से रू0 1500/- तक रहता है।

4.4 कृषि-आधारित उद्योगों के वित्त पोषण की आवश्यकता :-

किसी भी अर्थव्यवस्था में किसी उद्योग को लगाने हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। कोई भी उद्योग बिना धन व्यय किए नहीं लगाया जा सकता है। कृषि आधारित उद्योगों के लगाने में जो संस्थाएँ या बैंक वित्त प्रदान करते हैं उन्हें वित्त पोषण के स्रोत कहते हैं।

उद्योगों की वित्तीय आवश्यकताएँ :-

उद्योग को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पोषण के स्रोतों की आवश्यकता पड़ती है ये वित्त पोषण निम्न प्रकार के हैं :-

1. अल्पकालीन
2. मध्यमकालीन
3. दीर्घकालीन

1. अल्पकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता :-

यह वित्त कच्चा माल की खरीद का भुगतान करने, माल का स्टॉक करने आदि के लिए आवश्यक होता है। इस वित्त की पूर्ति 1. निजी बैंकरो से ऋण, 2. व्यापारिक ऋण, 3. बैंकों से ऋण, 4. जन निक्षेप, 5. विशिष्ट संस्थाओं के माध्यम से होती हैं।

2. मध्यमकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता :-

इसकी आवश्यकता बिल्डिंग बनाने या नयी मशीन खरीदने जैसी आवश्यकताओं

के लिए होती है। इस वित्त की पूर्ति 1. विशिष्ट संस्थायें, 2. जन निक्षेप, 3. ऋण पत्र इत्यादि से होती है।

3. दीर्घकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता :-

इस वित्त की आवश्यकता नयी बिल्डिंग बनाने या नयी मशीने खरीदने जैसी आवश्यकताओं के लिए होती है। इस वित्त की पूर्ति 1. अंश पूजी, 2. ऋण पत्र, 3. अर्जित लाभों का पुनर्विनियोग इत्यादि से होती है।

4. विशिष्ट वित्तीय संस्थाओं से ऋण आदि से की जा सकती है।

4.5 कृषि-आधारित उद्योग के वित्त पोषण के स्रोत :-

1. भारतीय औद्योगिक वित्त निगम- ये संस्था कृषि आधारित उद्योगों को मध्यमकालीन व दीर्घकालीन ऋण प्रदान करती है।
2. भारत का यूनिट ट्रस्ट - यह भी उद्योगों को वित्तीय सहायता (ऋण) प्रदान करती है।
3. साहूकार - ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि आधारित उद्योग धन्धे लगाने के लिए साहूकारों या महाजनों के द्वारा भी ऋण प्राप्त हो जाता है।
4. भारतीय औद्योगिक ऋण तथा निवेश निगम - इस संस्था के द्वारा निजी क्षेत्रों में लघु तथा मध्यम उद्योगों के विकास के लिए ऋण एवं निवेश की व्यवस्था की गयी है।
5. राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक - इस संस्था को नाबार्ड के नाम से जाना जाता है। ये कृषि उद्योगों के लिए वित्त प्रदान करती है।
6. व्यापारिक बैंक - ये कृषि-आधारित उद्योग को दीर्घकालीन व मध्यकालीन दोनों प्रकार के ऋण प्रदान करते हैं।
7. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक - ये बैंक छोटे पैमाने पर उद्योग स्थापित करने के लिए ऋण देते हैं।

8. खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा – ग्रामीण क्षेत्र में स्थापित होने वाले उद्योगों को खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से निजी या सहकारी समितियों को निर्धारित सीमा तक ऋण पर 4 प्रतिशत ब्याज देय होता है। इससे अधिक के ऋण पर सामान्य ब्याज लिया जाता है।

9. लघु उद्योग विकास बैंक – निजी व सार्वजनिक कृषि आधारित उद्योगों को ऋण प्रदान किया जाता है।

10. विक्रय द्वारा – मध्यम व वृहद उद्योगों की स्थापना हेतु 10 करोड़ तक का ऋण विक्रय द्वारा प्रदान किया जाता है।

11. उ0प्र0 वित्तीय निगम – सामान्य ऋण योजना के अन्तर्गत लघु उद्योग स्थापित करने हेतु तथा एन्सलरी ईकाई हेतु ऋण प्रदान किए जाते हैं।

इस प्रकार अन्य वित्तीय संस्थायें कृषि आधारित उद्योगों को वित्त प्रदान करती हैं।

4.6 कृषि-आधारित उद्योग एवं बैंक ऋण तथा सरकारी प्रेरणायें :-

किसी भी उद्योग को लगाने में वित्त की आवश्यकता होती है। इस वित्त की पूर्ति निजी बैंकर्स या बैंकों से की जाती है। अब सरकार ने भी कई योजनाएँ ऐसी शुरू कर दी हैं जिससे अब अधिक से अधिक लोग कृषि-आधारित उद्योग लगाने के लिए प्रेरित हो रहे हैं। बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग लगाने के लिये वाणिज्यक बैंक ग्रामीण बैंक,ग्राम विकास बैंक, भूमि विकास बैंक, जिला सहकारी बैंक सभी ऋण प्रदान कर रहे हैं, इसके अलावा जिला उद्योग केन्द्र द्वारा अनेक योजनायें भी शुरू की गयी है जिसके माध्यम से उद्योग लगाने के लिए वित्त व्यवस्था बैंको के माध्यम से आसानी से हो जाती है। जैसे प्रो0 सी0वी0 श्रीवास्तव ने कहा है कि " वित्त को व्यापार एवं उद्योग के पहियों के लिये तेल हड्डियों का सार नाड़ियों का रक्त एवं सभी व्यापारियों का आत्मा बताया है।"[1]

---

1. मेमोरिया एवं जैन – भारतीय अर्थव्यवस्था, पृ0 346

अतः वित्त या पूँजी को उद्योगों का रक्त कहा गया है, उद्योगों के लिए धन सम्बन्धी आवश्यकताएँ तीन प्रकार की होती हैं :-

1. अल्पकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता।
2. मध्यकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता।
3. दीर्घकालीन औद्योगिक वित्त की आवश्यकता।

अतः उद्योगों की इन आवश्यकताओं की पूर्ति बैंकों द्वारा जनपद में इस प्रकार से की गयी है।

1. जिला सहकारी बैंक द्वारा वित्तीय सहायता -

जिला सहकारी बैंक की जनपद में 17 शाखाएँ तथा प्रारम्भिक ऋण समितियाँ कार्य कर रही है। ये शाखायें तथा समितियाँ कृषि सम्बन्धी उद्योगों के लिए ऋण प्रदान कर रहे हैं। वर्ष 1996-97, 20लाख रू0[1] की धनराशि उद्योगों के ऋण के रूप में व्यय की गयी।

2. ग्रामीण बैंक द्वारा वित्तीय सहायता :-

ग्रामीण बैंक की स्थापना ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिए की गयी है। इस बैंक द्वारा उद्योगों के लिए वर्ष 1993-94 में 166.83 लाख रू0 की धनराशि व्यय की गयी। वर्ष 1996-97 में 271.41[2] लाख रू0 की धनराशि ऋण के रूप में जनपद में व्यय की गयी।

3. भूमि विकास बैंक द्वारा वित्तीय सहायता :-

भूमि विकास बैंक की जनपद में 4 शाखाएँ कार्यरत हैं। ये सभी शाखाएँ तहसील स्तर पर हैं। ये कृषि-आधारित उद्योगों के लिए ऋण प्रदान करती हैं। 20 लाख रू0 की धनराशि उद्योगों का ऋण के रूप में प्रदान की गयी।

---

1. संभाव्यता युक्त योजना 1996-97, नाबार्ड
2. सर्विस एरिया क्रेडिट प्लान - 1993-94

4. वाणिज्य बैंक द्वारा वित्तीय सहायता :-

जनपद में इलाहाबाद बैंक की 26 शाखाएँ, भारतीय स्टेट बैंक की 6 शाखाएँ, सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया की 3 शाखाएँ, बैंक आफ बड़ौदा की एक शाखा, यूनियन बैंक की एक शाखा, पंजाब नेशनल बैंक की एक शाखा कार्यरत है। इन बैंको के द्वारा भी इन उद्योगों को ऋण प्रदान किए गये हैं। 284.84 लाख रू0 की धनराशि 1996-97 में व्यय की गयी है।

तालिका संख्या 4.3

बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण की सारिणी - (राशि लाख में)

वित्तीय सहायता	राशि	
	1995-96	1996-97
वाणिज्य बैंक	227.09	284.84
ग्रामीण बैंक	151.59	271.41
भूमि विकास बैंक	6.00	20.00
जिला सहकारी बैंक	6.00	20.00
योग :-	390.68	596.25

स्रोत : नाबार्ड बैंक पत्रिका - 1999

तालिका संख्या 4.3 (अ)

प्रदत्त बैंक ऋण - (राशि लाख में)

क्र.सं.	उद्योग का नाम	1995-96	1996-97
1.	मिनी धान मिल	8.27	9.00
2.	आटा मिल	11.42	10.00
3.	शीत गृह	11.83	12.60
4.	गुड़ निर्माण	4.42	4.50
योग		36.34	36.10

स्रोत :- संभाव्यतायुक्त योजना, जनपद-बाँदा - 1995-96, 1996-97

अतः स्पष्ट बैंक द्वारा उद्योगों के लिए 1995-96 में 582.45 लाख रू0 की राशि तथा 1996-97 में 667.17 लाख रू0 की राशि प्रदत्त की गयी।

4.7 सरकारी प्रेरणाएँ व सुविधाएँ :-

सरकार द्वारा अनेक प्रेरणाएँ व सुविधाएँ शुरू की गयी हैं। जिससे व्यक्ति कृषि आधारित उद्योग लगाने के लिए प्रेरित हो रहा है। उद्योग लगाने के लिए शुरू की गयी योजनाएँ, इस प्रकार की हैं :-

1. प्रधानमंत्री रोजगार योजना :-

यह योजना जनपद में ग्रामीण शहरी युवकों को कृषि आधारित उद्योग लगाने के लिए ऋण प्रदान करती है। इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 1996-97 में बैंको द्वारा रुपये 150.00 लाख के ऋण वितरित किए गये।

2. हस्तशिल्प ऋण योजना :-

नाबार्ड योजना के माध्यम से रिफाइलैसिग योजनान्तर्गत अधिकतम रू0 2 लाख तथा स्थानीय बैंकों से ऋण प्रदान कराया जाता है।

3. एकल विन्डो योजना :-

रुपये 30 लाख तक की पूँजी निवेश के लघु उद्योगों के स्थापनार्थ उ0प्र0 वित्तीय निगम द्वारा भूमि भवन मशीनरी एवं कार्यशील पूँजी हेतु ऋण प्रदान किया जाता है।

4. नाबार्ड योजना :-

इस योजना के माध्यम से लघु/लघुत्तर इकाईयों की स्थापना हेतु जिला उद्योग केन्द्र उद्यमियों को रू0 10 लाख तक का ऋण स्थानीय बैंकों से उपलब्ध कराता है। जो कि नाबार्ड द्वारा ऋण प्रदाता बैंको को पुर्नवित्त योजना के माध्यम से देय है।

5. खादी ग्रामोद्योग द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ :-

खादी ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा विभिन्न कुटीर/लघुत्तर/लघु उद्योगों की स्थापना हेतु

रू0 2 लाख तक का ऋण जिला स्तर से विभिन्न बैंको के माध्यम से उपलब्ध कराया जाता है। विभिन्न बैंको द्वारा वित्त पोषण पर बोर्ड द्वारा 10 प्रतिशत ब्याज में अनुदान/छूट उद्यमी के पक्ष में सम्बन्धित बैंक को उपलब्ध करायी जाती है।

6. व्यापार कर छूट :-

नई औद्योगिक इकाईयों को जो वर्ष 1945 के बाद एवं 31.03.2000 के पूर्व स्थापित हुई हो अथवा स्थापित ईकाई में विस्तार, विवधीकरण, आधुनिकीकरण किया गया हो जिसमें 25 प्रतिशत अतिरिक्त अचल पूँजी विनियोजन के साथ-साथ 25 प्रतिशत उत्पादन में भी विस्तार हुआ हो उन्हें व्यापार कर में छूट मिलेगी।

7. विद्युत भार :-

ईकाई स्थापना में आवश्यक 100 अश्वशक्ति तक के विद्युत भार की जिला स्तर पर जिला उद्योग बंधु के माध्यम से स्वीकृति प्रदान कराई जाती है। तथा 100 अश्वशक्ति से अधिक वांछित विद्युत भार स्वीकृति हेतु मण्डल स्तरीय कमेटी का संस्तुति भेजी जाती है।

8. हथकरघा एवं वस्त्रोद्योग निदेशालय :-

यह निदेशालय हथकरघा उद्योग व बुनकरों को सहायता प्रदान करता है। निष्कर्षतः स्पष्ट है कि बैंक द्वारा समय-समय पर कृषि आधारित उद्योगों को ऋण प्रदान किया जाता है। जिससे कृषि आधारित उद्योगों को वित्तीय सहायता मिल जाती है। सरकार ने अनेक योजनाएँ शुरू की हैं। जिससे लोग कृषि आधारित उद्योग लगाने के लिए प्रेरित हो रहे हैं।

उपरोक्त वित्तीय सहायता व योजनाओं के सन्दर्भ में शोधार्थिनी द्वारा साक्षात्कार अनुसूची द्वारा मिलों के मालिकों से उनकी वित्तीय सहायता के बारे में जानकारी प्राप्त की गयी है जिसे तालिका संख्या 4.3 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या 4.3 (ब)

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों को प्राप्त वित्तीय सहायता।

क्र.सं.	वित्तीय सहायता	हाँ	नहीं
1	2	3	4
1	बैंको द्वारा	26	24
2.	जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से	15	35
3.	अन्य स्रोतों से	12	38

स्रोत : साक्षात्कार सूची

चित्र संख्या - 4.1 बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों को प्राप्त वित्तीय सहायता - 1. बैंको द्वारा वित्तीय सहायता 2. जिला उद्योग केन्द्र के माध्य से 3. अन्य स्रोतों के माध्यम से वित्तीय सहायता।

निर्देशिका 'हाँ/नहीं'

तालिका संख्या 4.3(ब) के अनुसार जनपद में 50 मिलों को प्राप्त वित्तीय सहायता को हाँ/नहीं में व्यक्त किया गया। जिसमें सबसे अधिक उद्योग बैंको से वित्तीय सहायता प्राप्त करते हैं। जिनकी संख्या 26 है।

4.8 कृषि आधारित उद्योग एवं मितव्यताएँ/अमितव्यताएँ :-

कृषि-आधारित औद्योगिकरण की मूल संकल्पना कृषि प्रधान अर्थ-व्यवस्था से सम्बद्ध है। इसका मूल उद्देश्य ग्राम्य आर्थिक संरचना को उर्ध्वमुखी रूप में स्थानान्तरित करना है। इन उद्योगों के द्वारा उस क्षेत्र का भी विकास सम्भव हो जाता है जहाँ ये उद्योग स्थापित किये जाते हैं उस क्षेत्र में विपणन की सुविधा उपलब्ध हो जाती है। यातायात के साधन बड़े मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं। कृषि-आधारित उद्योगों के द्वारा मितव्यतायें प्राप्त होती हैं क्योंकि उद्योग धन्धों में उत्पत्ति वृद्धि नियम लागू होता है। नियम यह बताता है *"जब उत्पादन के एक या एक से अधिक साधनों को स्थिर रखकर परिवर्तनशील साधनों की मात्रा बढ़ाई जाती है तो जिस अनुपात से इन साधनों में*

सारिणी संख्या - 4.3

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योग को प्राप्त वित्तीय सहायता
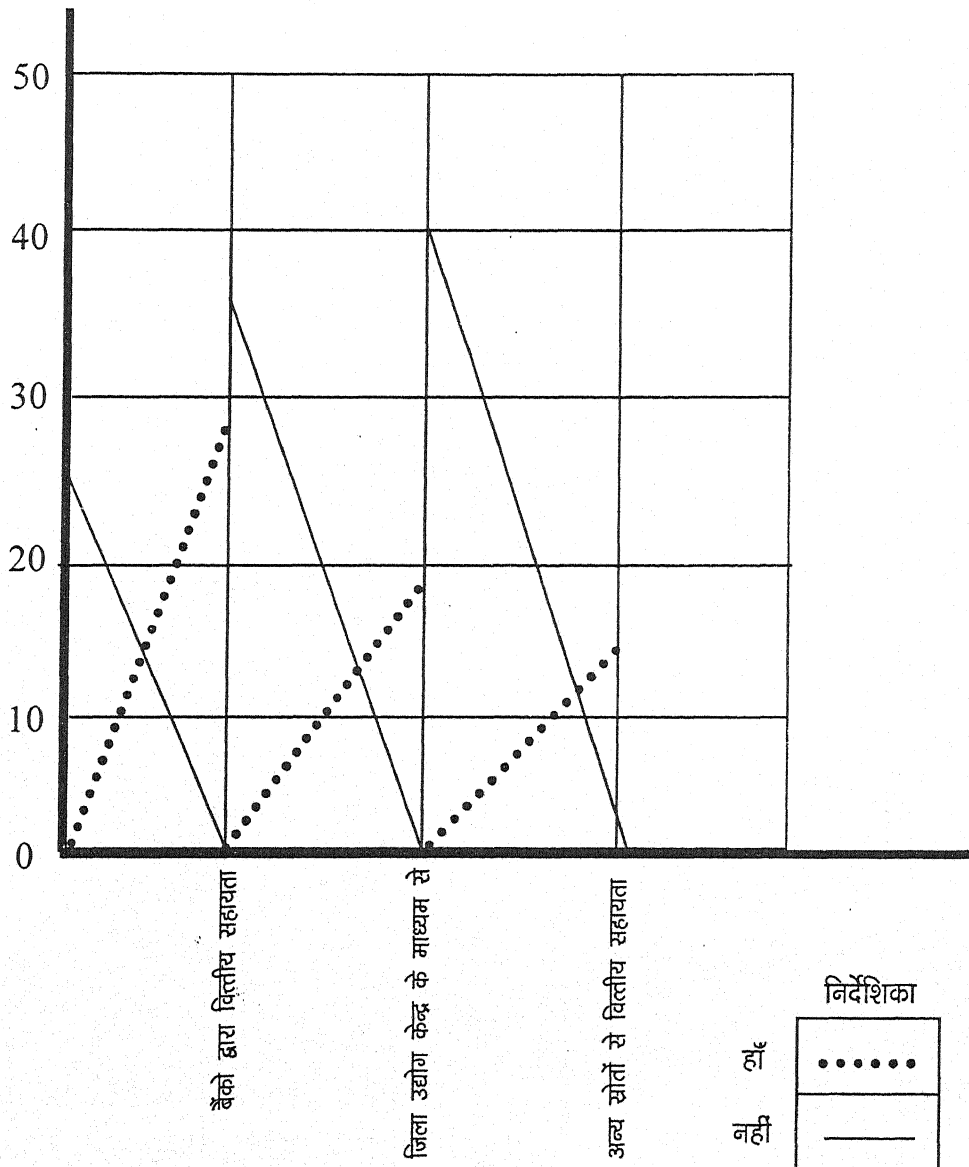
वृद्धि की जाती है। उत्पादन की मात्रा उस अनुपात से भी अधिक बढ़ती है। उत्पादन वृद्धि की इस प्रवृत्ति को उत्पत्ति वृद्धि नियम कहते हैं।"[1]

उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण -

सारिणी संख्या 4.4

श्रम की इकाइयाँ	कुल उत्पादन टीपी	औसत उत्पाद एपी	सीमान्त उत्पादन एमपी
1	10	10	10
2	24	12	14
3	45	15	21
4	76	19	31
5	115	23	39

रेखाचित्र संख्या - 4.2
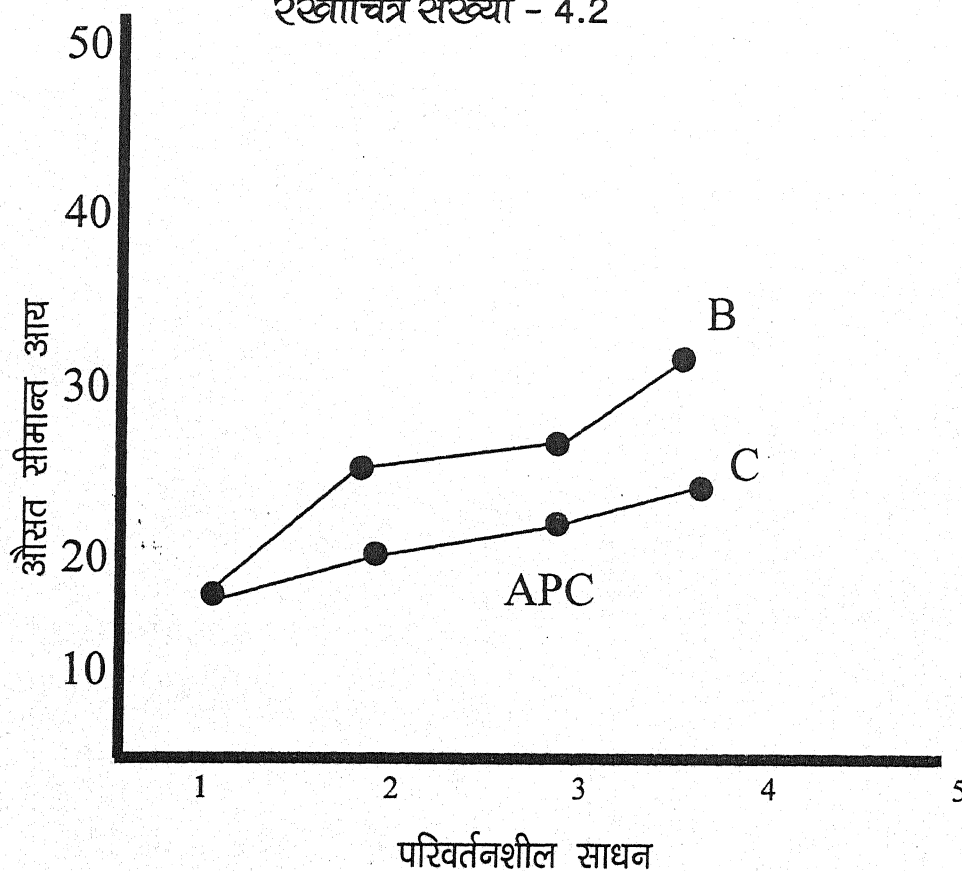
1. डॉ0 सिंह आर0पी0 व डॉ0 सिंह वी-प्रक्षेत्र प्रबंध व उत्पादन अर्थशास्त्र, पृ0 68

स्रोत : काल्पनिक उदाहरण

अतः स्पष्ट है कि उद्योग-धन्धों में वृद्धि नियम लागू होता है। इसलिए कृषि-आधारित उद्योगों में मितव्यताएँ प्राप्त होती हैं जो इस प्रकार हैं -

मितव्यताएँ :-

1. चीनी उद्योगों में निकला कचड़ा भी काम आ जाता है।
2. तेल मिल से निकली खरी जानवरों के खाने के काम आती है।
3. दाल मिल से निकली भूसी जानवरों के भोजन के रूप में प्राप्त करते हैं।
4. आटा मिल से निकली भूसी भी काम में आ जाती है।
5. चावल मिल से निकली भूसी भी बर्फ रखने के काम में आ जाती है। तथा भूसी से क्राफ्ट बनाया जाता है और अब तो सीमेन्ट का उत्पादन भी हो रहा है।
6. कताई मिल से निकले छोटे रेशों से दरी आदि बन जाती है ।
7. जूट उद्योग में निकले माल से सजावट का सामान बनाया जाता है। जहाँ उद्योग होते हैं। वहाँ सड़क बन जाती है। यातायात के साधन सुलभ हो जाते हैं।

अमितव्यतायें :-

कृषि-आधारित उद्योग जिन क्षेत्रों में स्थापित होते हैं वहा अमितव्यतायें भी प्राप्त होती हैं जो अमितव्यतायें प्राप्त होती हैं वे इस प्रकार हैं :-

1. जिन क्षेत्रों में कृषि आधारित उद्योग स्थापित होते हैं वहाँ प्रदूषण फैलता है।
2. कृषि आधारित उद्योगों में कृषि उत्पादन कम होने पर लागत अधिक आ जाती है। ये उद्योग पूर्णतः कृषि पर आधारित रहते हैं।
3. इन उद्योगों में श्रमिकों को कार्यनुसार वेतन प्राप्त नहीं होते हैं।

4. जिन क्षेत्रों में ये उद्योग होते हैं वहाँ शोर अधिक होता है जिससे ध्वनि प्रदूषण होता है।

5. जिन क्षेत्रों में यह उद्योग स्थापित होते हैं वहाँ कचड़ा अधिक फैलता है।

4.9 प्रबंधन एवं वित्तीयन पक्ष के विशिष्ट पक्ष -

(अ) प्रबंधन :-

कृषि-आधारित उद्योग में मुख्य रूप से प्रबंध का कार्य प्रबंधक ही देखता हैं। इन उद्योगों में प्रबंधन इस प्रकार होता है :-

1. इन उद्योगों में मुख्य प्रबंधक होता है। वही फर्म का सम्पूर्ण कार्य देखता है।
2. इन उद्योगों में एक मुनीम होता है जो फर्म का बही खाते सम्बन्धित कार्य करता है।
3. इन उद्योगों व फर्मो में 3 से 8 तक श्रमिक होते हैं। जो बाकी सारा कार्य करते हैं। जैसे -मशीन को चलाना, उत्पादित माल को कचड़े से अलग करना इत्यादि।

(ब) वित्तीयन पक्ष :-

इन उद्योगों का वित्तीयन पक्ष इस प्रकार होता है -

1. वाणिज्य बैंको, ग्रामीण बैंको तथा सहकारी बैंको द्वारा ऋण प्रदान किए जाते हैं।
2. जिला उद्योग केन्द्र बाँदा द्वारा भी इन उद्योगों को अनेक योजनाओं जैसे प्रधानमंत्री योजना, नाबार्ड योजना, खादी ग्रामोद्योग, इत्यादि के माध्यम से वित्त प्रदान किया जाता है।
3. साहूकारों तथा महाजनों के द्वारा भी इन उद्योगों को वित्त प्रदान किया जाता है।

4. अधिकतर उद्योग अपना वित्तीयन प्रबन्धन स्वयं करते हैं।
5. जनपद में अधिकतर मिल मालिक बैंको से वित्तीय सहायता प्राप्त करते हैं।

पंचम अध्याय

पंचम अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का रोजगार सृजन एवं आय संवृद्धि पक्ष

5.1 कृषि-आधारित उद्योगों का मजदूरी/वेतन पक्ष

5.2 कृषि-आधारित उद्योगों का रोजगार सृजन पक्ष

5.3 कृषि-आधारित उद्योगों का आय संवृद्धि पक्ष

5.4 कृषि-आधारित उद्योगों की श्रम संरचना

5.5 श्रमिकों के कार्य करने की अवधि

5.6 कृषि-आधारित उद्योगों की रोजगार सृजन एवं आय संवृद्धि की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ - चावल मिलों का विशिष्ट सन्दर्भ

पंचम अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का रोजगार सृजन एवं आय संवृद्धि पक्ष

"If matter little how much information we possess about development if we have not grapsed its inner meaning."

- Denis Geolet
The Cruel Choice

भारतीय संविधान में वर्णित नीति निर्देशक सिद्धान्तों और बहुप्रचारित आर्थिक नियोजन के बावजूद आज भी खेतिहर मजदूरों की आर्थिक स्थिति दयनीय है। अत्यन्त गरीबी के कारण जीवन-यापन के लिए अनिवार्य वस्तुएँ भी उन्हें उपलब्ध नहीं है। आधुनिक औद्योगिक विकास जन्य वस्तुएँ तो उनके लिए अचम्भे की चीजें हैं। कुछ आधुनिक उद्योगों, जो विलासिता की वस्तुओं का उत्पादन करते हैं, का तो आरम्भ ही धनी व सम्पन्न वर्ग की जरूरतों को पूरा करने के लिए हुआ है। कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण खेतिहर मजदूरों का जीवन-स्तर अत्यन्त नीचा है। बचपन से ही अधिक परिश्रम का काम करने तथा अल्प पोषण और कुपोषण का शिकार होने के कारण लड़कपन के बाद ही उन्हें बुढ़ापा घेरने लगता है। सुखपूर्वक जीवन-यापन करने वाले सम्पन्न वर्ग के लोगों की दृष्टि में तो उनकी स्थिति दासों जैसी है। ग्रामीण विकास की नीतियाँ दीर्घकाल तक मूलतः आय तथा उत्पादन वृद्धि के प्रति ही सजग रही हैं परन्तु आज आर्थिक संवृद्धि उसी अनुपात में रोज़गार के सृजन में असमर्थ है तथा इससे समाज में व्याप्त आय तथा सम्पत्ति की असमानताएँ बढ़ी हैं। ग्रामीण क्षेत्र के मात्र 10.34 प्रतिशत सम्पन्न परिवारों में ही अधिकांश भूमि, विपणन योग्य अतिरिक्त उपज, कृषि उपकरण, पशुधन व सिंचाई सुविधाएँ केन्द्रित हैं। 'विकास के लिए विकास' की इस विकास गति से सम्पन्न वर्ग को ही अधिक लाभ मिला है। खेतिहर मजदूर तो इन्हीं सम्पन्न किसानों की आय व सम्पत्ति बढ़ाने के लिए नाममात्र की मजदूरी पर काम करते हैं। भारत में खेतिहर मजदूरों की

निम्नलिखित प्रमुख समस्याएँ हैं :-

1. अपर्याप्त आय :-

खेतिहर मजदूरों की आय बहुत ही कम है। खेतिहर मजदूर परिवारों की औसत वार्षिक आय 1950-51 और 1956-57 में क्रमशः 447.00 रूपये और 437.40 रूपयें थी। 1964-65 में यह आय 660.00 रूपये हो गयी। 1974-75 में खेतिहर मजदूर परिवारों की औसत वार्षिक आय 1778.90 रूपये थी। यदि खेतिहर मजदूरों की पारिवारिक आय के अतिरिक्त प्रति व्यक्ति की आय का विश्लेषण किया जाये तो इनकी निम्नस्तरीय आय का अधिक स्पष्ट आभास होता है। निम्नलिखित तालिका 27.2 से यह प्रतीत होता है कि 1987-88 में पुरूष कृषि श्रमिक की दैनिक औसत आय रू0 9. 42 थी। महिला और बाल श्रमिकों की औसत दैनिक आय तो अत्यन्त कम रही है।

तालिका 5.1

कृषि श्रमिकों की दैनिक औसत आय

वर्ष	पुरूष	महिला	बच्चे
1977-78	3.74	2.62	2.16
1983-84	4.72	3.56	2.32
1987-88	9.42	7.00	6.00

स्रोत : इण्डियन लेबर बुक, 1995

इन तथ्यों से प्रतीत होता है कि खेतिहर मजदूरों की आय में 1965-67 के बाद कुछ सुधार हुआ है। लेकिन इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि इस कारण उनके रहन-सहन स्तर में सुधार हुआ ही होगा, क्योंकि खेतिहर मजदूर परिवार की आय मुख्य रूप से मजदूरी, काम मिलने की अवधि और परिवार में काम करने वालों की संख्या पर निर्भर करती है। आय-वृद्धि का प्रधान कारण मजदूर परिवारों में काम करने वाले सदस्यों की संख्या में वृद्धि हो रही है। वर्तमान समय में निम्नतम जीवन-स्तर के

लिए ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 228.90 रूपये मासिक आय आवश्यक है। यदि खेतिहर श्रमिक परिवार के सदस्यों की औसत संख्या पाँच भी मान ली जाये, तो प्रत्येक खेतिहर मजदूर परिवार को निम्नतम स्तर के जीवन-यापन हेतु भी लगभग रूपये 13740.00 वार्षिक की आवश्यकता होती है। स्पष्ट है कि खेतिहर मजदूर परिवारों की आय निम्नतम जीवन-स्तर के लिए भी अपर्याप्त है। वे सभी गरीबी की रेखा से नीचे हैं।

2. घटती हुई वास्तविक मजदूरी :-

खेतिहर मजदूरों की मजदूरी जो उनकी आय का प्रमुख स्रोत है, अत्यन्त नीची है। मजदूरी दर इतनी नीची है कि इससे उनकी अनिवार्य आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं हो सकती हैं। 1950-51 और 1964-65 में पुरूष श्रमिकों की दैनिक मजदूरी क्रमशः 1.09 रूपये और 1.43 रूपये थी। 23वें नेशनल सैम्पिल सर्वे में कुछ राज्यों में खेतिहर मजदूरों की मजदूरी का आंकलन किया गया। इस सर्वेक्षण के अनुसार 1970-71 में सर्वाधिक मजदूरी पंजाब में 4.71 रूपये प्रतिदिन और सबसे कम मजदूरी मध्य प्रदेश में 1.11 रूपये प्रतिदिन थी। अन्य राज्यों की मजदूरी इन अधिकतम और न्यूनतम सीमाओं के भीतर थी तथा महिला खेतिहर मजदूरों की मजदूरी सभी राज्यों में पुरूषों की तुलना में नीची थी।

1974-75 में इन पुरूष श्रमिकों की दैनिक मजदूरी रूपये 4.24 थी। इन आँकड़ों से लगता है कि इनकी मजदूरी में वृद्धि हुई है लेकिन मजदूरी में नाम मात्र की यह मौद्रिक वृद्धि बढ़े हुए मूल्यों में समा गयी और वास्तविक वृद्धि लगभग शून्य हो गयी। तथ्य यह है कि उनकी वास्तविक मजदूरी घटी है। राष्ट्रीय कृषि आयोग 1976 का विचार है कि पंजाब और केरल को छोड़कर अन्य राज्यों में खेतिहर मजदूरों की स्थिति में कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ है। औद्योगिक मजदूरों तथा विभिन्न सार्वजनिक संस्थानों और विभागों में कर्मचारियों के वेतन भत्ते बढ़े विभिन्न सुविधाएँ बढ़ीं। लेकिन

असंगठित खेतिहर मजदूर तो निम्न मजदूरी, गरीबी व अभाव से स्थायी समझौता करने को बाध्य है। उनकी स्थिति में कोई सुधार तो नहीं हुआ है। उनकी दुर्दशा के प्रति समृद्ध वर्ग के लोग चाहे वे गाँव के हों या शहर के तटस्थ हैं। खेतिहर मजदूरों की औसत वास्तविक आय का परिवर्तन उनकी स्थिति में भी परिवर्तन का द्योतक होता है। वस्तुतः मजदूरी ही उनकी आय प्राप्ति का एकमात्र स्रोत होता है। हाल के वर्षों में कृषि श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी में अत्यन्त कम वृद्धि हुयी। 1991-92 और 1994-95 में तो इनकी वास्तविक मजदूरी घटी है। निम्नलिखित तालिका में अकुशल कृषि श्रमिकों की वास्तविक आय में परिवर्तन का विवरण दिया गया है।

तालिका 5.2

अकुशल कृषि श्रमिकों की वास्तविक आय में परिवर्तन

वर्ष	आय में प्रतिशत परिवर्तन
1991-92	- 6.19
1992-93	+5.21
1993-94	+5.61
1994-95	-0.39
1995-96	+0.72
1996-97	+4.67
1997-98	+4.88

स्रोत : इकोनामिक सर्वे, 1998-99

3. अल्प रोजगार तथा बेरोजगार :-

खेतिहर मजदूरों को नियमित रूप से रोजगार नहीं मिलता। स्थायी और अनियमित दोनों प्रकार के मजदूरों को वर्ष के अधिकांश दिनों बेरोजगार रहना पड़ता है। इनमें अनियमित मजदूरों की स्थिति तो और भी खराब है। 'प्रथम खेतिहर श्रम जाँच

समिति' के अनुसार पुरूष खेतिहर मजदूरों को 218 दिन मजदूरी पर काम मिला 65 दिन वे अपने काम में लगे रहे, और शेष 82 दिन वे बेरोजगार रहे। खेतिहर मजदूरों की 1964-65 में कुल 265 दिन कार्य मिला और वह 100 दिन बेरोजगार रहे। वर्ष 1987-88 में पुरूष कृषि श्रमिकों को कुल 286 दिन कार्य मिला और वे 79 दिन बेरोजगार रहे। महिला खेतिहर मजदूरों में बेरोजगारी इससे भी अधिक है। उन्हें फसल की बुआई और कटाई के समय ही काम मिल पाता है। कृषि क्षेत्र में हाल के तकनीकी सुधारों, बेहतर बीजों के विकास तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग, जिसे संयुक्त रूप से हरित क्रान्ति कहा जाता है, से सघन कृषि को प्रोत्साहन. मिला और अधिक श्रम की आवश्यकता अनुभव हुई। परन्तु इनका प्रभाव कुछ फसलों और कुछ राज्यों तक ही सीमित रहा। अतः श्रम की माँग में कोई व्यापक परिवर्तन नहीं हुआ। अनुमान लगाया जाता है कि लगभग 7.23 प्रतिशत खेतिहर मजदूर पूर्णतया बेरोजगार और 62.11 प्रतिशत खेतिहर मजदूर अल्प रोजगार की अवस्था में है।

4. नीचा जीवन-स्तर :-

अत्यन्त गरीबी, बेरोजगारी, निम्न आय व मँहगाई के कारण खेतिहर मजदूरों का जीवन-स्तर अत्यन्त नीचा है। कुछ गेहूँ उत्पादक क्षेत्रों जैसे- पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश- को छोड़कर अन्य स्थानों पर मोटा अनाज भी उनके भोजन का मुख्य आधार है जिसमें पोषक तत्वों की अत्यन्त कमी है। दूध, घी आदि तो उनकी सामर्थ्य से बिल्कुल परे हो गये हैं। समुचित आवास सुविधाओं के अभाव में वे अपने मवेशियों के साथ ही रात बसर करने को बाध्य हैं। अधिकांश खेतिहर मजदूर भूमिहीनों की कोटि में है जिनकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है। 1954-55 में कुल ग्रामीण परिवारों (6.10 करोड) में से 10.81 प्रतिशत भूमिहीन थे तथा 1971-72 में कुल ग्रामीण परिवारों (8करोड़) में भूमिहीन परिवारों का प्रतिशत बढ़कर 27.38 हो गया। अतः खेतिहर मजदूरों के पास सम्पत्ति के नाम पर विरासत में प्राप्त फूस की झोपड़ी

और उनका शारीरिक श्रम है। उपभोग व्यय किसी परिवार के जीवन स्तर का प्रमुख सूचक तत्व है। कृषि श्रमिक मजदूर परिवारों का औसत वार्षिक उपभोग व्यय 1950-51 में मात्र 461.00 रूपये था। वर्ष 1987-88 में औसत वार्षिक उपभोग व्यय रूपये 6681.00 हो गया। यह उपभोग व्यय निरपेक्ष रूप से नीचा है और निम्न आय का द्योतक है।

5. व्यापक ऋणग्रस्तता :-

निम्न आय के कारण अधिकांश खेतिहर मजदूर ऋणग्रस्त हैं। अनुमान लगाया जाता है कि 1950-51 और 1964-65 में क्रमशः 44.50 और 60.60 प्रतिशत खेतिहर मजदूर परिवार ऋणग्रस्त थे। 1974-75 में लगभग 66.40 प्रतिशत खेतिहर मजदूर परिवार ऋणग्रस्त थे। अर्थात् उक्त अवधि तक ऋणग्रस्त खेतिहर मजदूर परिवारों की संख्या लगातार बढ़ी है। परन्तु इसके बाद ऋणग्रस्त परिवारों की व्यापकता कम हुयी और 1987-88 के खेतिहर मजदूर परिवारों में ऋण ग्रस्त परिवारों की संख्या 39.40 प्रतिशत हो गयी। परन्तु ऋणग्रस्त परिवारों की औसत ऋण राशि में लगातार वृद्धि हुयी है। वर्ष 1950-51 में ऋण ग्रस्त परिवारों में औसत ऋण 105.00 रूपये था जो 1987-88 में बढ़कर रूपये 1952.00 हो गया। योजनाकाल में खेतिहर मजदूर परिवारों को दिये गये ऋण में संस्थागत साख स्रोतों का महत्व बढ़ा है। वस्तुओं और सेवाओं के बढ़ते मूल्यों और परिवार में सदस्यों की संख्या में वृद्धि के कारण उन्हें अपना पहले जैसा निम्न जीवन-स्तर बनाये रखने के लिए भी अधिक ऋण लेने पड़े हैं।

तालिका 5.3

खेतिहर मजदूरों की स्थिति सूचक तथ्य

खेतिहर मजदूर परिवारों की विशेषताएँ	1950-51	1964-65	1987-88
कृषि श्रमिकों की संख्या (मिलियन में)	27.50	30.20	74.60
पुरूष कृषि श्रमिकों की औसत रोजगार (दिन)	218.00	242.00	243.00
पुरूष कृषि श्रमिकों में स्वरोजगार (दिन)	65.00	25.00	43.00
पुरूष कृषि श्रमिकों में कुल रोजगार (दिन)	263.00	267.00	286.00
कृषि श्रमिकों की औसत मजदूरी (रू0 में)			

(क) पुरूष	1.09	1.43	9.42
(ख) महिलायें	0.68	0.95	7.00
(ग) बच्चे	0.07	0.72	6.01
ऋणग्रस्त परिवारों का प्रतिशत	44.50	60.60	39.40
ऋणग्रस्त परिवारों में औसत ऋण (रू0)	105.0	244.00	1952.00
संस्थागत स्रोतों से ऋण (प्रतिशत)	0.95	8.69	34.90
उत्पादक ऋण का प्रतिशत	9.52	21.01	27.80
कृषि श्रमिक परिवारों की औसत वार्षिक आय (रू0में)	447.00	660.20	नहीं
कृषि श्रमिक परिवारों में वार्षिक उपभोग व्यय (रू0में)	461.00	1029.0	6681.00
कृषि श्रमिक परिवारों की प्रति व्यक्ति आय (रू0में)	104.00	147.40	3285.00

Source : Indian Agricultural Development Since Independence p. 419 and Indian Labour Book, 1995

भारत सरकार ने वर्ष 1987 में ग्रामीण श्रम पर राष्ट्रीय आयोग गठित किया। इस आयोग ने 1991 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत किया। आयोग ने इस बात पर जोर दिया कि ग्रामीण श्रमिकों के जीवन स्तर में सुधार और ग्रामीण विकास प्रक्रिया में श्रमिकों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। इस आयोग की प्रमुख सिफारिशें निम्नवत् हैं :-

1. सभी 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
2. सभी व्यवसायों और प्रक्रियाओं में बाल श्रम का निषेध।
3. समानान्तर गांरटी के बिना निर्धारित सीमा तक ग्रामीण महिला श्रमिकों के लिए ऋण प्रदान करने हेतु महिलाओं के लिए राष्ट्रीय साख कोष की स्थापना।

4. दिसम्बर 1991 की कीमतों पर 20.00 रूपये प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी निश्चित करना और थोक कीमतों में वृद्धि के साथ न्यूनतम मजदूरी समायोजित करना।
5. कृषि में श्रम विस्थापन करने वाले भारी यंत्रीकरण यथा कम्बाइन्ड हार्वेस्टर्स के प्रयोग पर रोक।

5.1 कृषि आधारित उद्योगों का मजदूरी/वेतन पक्ष :-

किसी भी उद्योग में कार्यरत श्रमिकों को श्रम के प्रयोग के लिए दी गयी कीमत मजदूरी कहलाती है। जैसा बेन्हम ने कहा भी है -

" A wage may be defined as a sum of money paid under contract by an employer to a worker services rendered."[1]

अर्थात् मजदूरी मुद्रा के रूप में वह भुगतान है जो समझौते के अनुसार एक सेवायोजक अपने श्रमिक को उसकी सेवाओं के लिए देता है।

किसी भी उद्योग में कार्यरत श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान कुछ निश्चित अवधि में किया जाता है। मजदूरी भुगतान की प्रकृति का निर्धारण फर्म मालिक द्वारा करने के उपरान्त मजदूरी प्रदान की जाती है। इस उद्योग में दैनिक व साप्ताहिक मजदूरी प्रदान की जाती है। इस उद्योग में प्रबंधक श्रमिकों को आवश्यकता एवं स्थिति को देखते हुए मजदूरी का भुगतान करते हैं। जिसमें श्रमिकों को सुविधा हो। जबकि फर्म मालिको को कोई अतिरिक्त व्यय भार सहन नहीं करना पड़ता है। बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों में मजदूरी भुगतान की प्रकृति तालिका संख्या 5.4 अ एवं ब में प्रदर्शित की गयी है।

---

1. सिंह एस0पी0 - अर्थशास्त्र के सिद्धान्त।

तालिका संख्या 5.4 (अ)

बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग के विभिन्न फर्मों (मिलों) में मजदूरी की प्रकृति

क्र.सं.	भुगतान की प्रकृति	मजदूरी (रू0 में)	फर्मों/मिलों की सं0	प्रतिशत
1	दैनिक	0-50	04	08
		50-100	06	12
2.	मासिक	0-1000	06	12
		1000-2000	32	64
		2000-3000	02	04
3.	समग्र योग		50	100

स्रोत - साक्षात्कार सूची।

तालिका संख्या 5.4 (ब)

अतर्रा तहसील की चावल मिलों में मजदूरी की प्रकृति

क्र.सं.	भुगतान की प्रकृति	मजदूरी (रू0 में)	फर्मों/मिलों की सं0	प्रतिशत
1	दैनिक	0-50	04	08
		50-100	06	12
2.	मासिक	00-1000	06	12
		1000-2000	32	64
		2000-3000	02	04
3.	समग्र योग		50	100

स्रोत - साक्षात्कार अनुसूची।

टिप्पणी - कोष्ठक में प्रदर्शित संख्या कालम संख्या का प्रतिशतांश है।

उपरोक्त सारिणी संख्या 5.4 अ एवं ब से स्पष्ट होता है कि बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योग में श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान दैनिक एवं मासिक

आधार पर ही किया जाता है। जनपद में 10 मिलों या फर्मो में दैनिक मजदूरी भुगतान रू0 50.00 है जबकि 6 अन्य मिलों में 1000 रूपये मासिक के अन्दर ही श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान किया जाता है। इसके अतिरिक्त 32 मिलों में 1000-2000 के मध्य प्रति श्रमिक मजदूरी का भुगतान किया जाता है और 2 फर्मो में 2000-3000 के मध्य प्रति श्रमिक मजदूरी भुगतान किया जाता है।

मजदूरी भुगतान की दरें :-

कुल उत्पादन में से साधन श्रम का जो भाग अथवा परितोषण दिया जाता है उसे साधारण मजदूरी कहतें हैं। एक अन्य दृष्टिकोण-श्रम का मूल्य कह सकतें हैं। किसी उद्योग में मजदूरी की दरें श्रमिकों की योग्यता एवं अनुभव के आधार पर अलग- अलग निर्धारित की जाती हैं। जनपद के विभिन्न मिलों में मजदूरी की दरें अलग- अलग निर्धारित होती हैं। बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग को पर्याप्त सुविधा एवं प्रशासनिक देख रेख न प्राप्त हो पाने के कारण इनके श्रमिकों की मजदूरी बहुत कम रहती है। कुछ उद्योगों में कार्य के घन्टे भी निश्चित नहीं हैं। जिससे इन श्रमिकों को अपने कार्य के अनुरूप मजदूरी नहीं प्राप्त हो पाती है।

इन उद्योगों में यदि श्रमिक छुट्टी लेता है तो दैनिक वेतन के हिसाब से उसका वेतन काट लिया जाता है।

5.2 कृषि- आधारित उद्योगों का रोजगार सृजन पक्ष-

आज उद्योगो में श्रमिक को रोजगार देकर बेरोजगारी की समस्या को दूर किया जाता है। जनपद में आधे से अधिक श्रमिक कृषि आधारित उद्योगों में कार्य में लगे हैं।

रोजगार का तात्पर्य है काम पाने वाले व्यक्तियों को काम मिल सके।

लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पूर्ण रोजगार की स्थिति अर्थव्यवस्था में नहीं है। जैसे केन्स ने अपने सिद्धान्तों में वर्णित किया है कि "अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार की दशा में नहीं रहती अपितु सम्मान तथा व्यवहारिक दृष्टिकोंण से वह सदैव अपूर्ण रोजगार की

स्थिति में ही रहती है।"[1]

अतः स्पष्ट है कि अर्थव्यवस्था में सही व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त नहीं होता है।

बाँदा जनपद में कृषि- आधारित उद्योगों में रोजगार की स्थिति को शोधार्थिनी द्वारा साक्षात्कार अनुसूची द्वारा तालिका संख्या 5.5 अ एवं ब में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या 5.5(अ)

बाँदा जनपद में कृषि- आधारित उद्योगों में रोजगार में लगे श्रमिक

क्र0स0	उद्योग का नाम	मिलों की संख्या	रोजगार में लगे श्रमिकों की संख्या
01	दाल मिल	04	32
02	चावल मिल*	12	96
03	तेलमिल	24	154
04	मसाला उद्योग	02	08
05	लाही उद्योग	02	08
06	आटामिल	06	48
समग्र योग		50	346

*अतर्रा तहसील को छोड़कर

स्रोत : साक्षात्कार अनुसूची

तालिका संख्या 5.5 (ब)

अतर्रा तहसील में चावल मिलों में रोजगार में लगे श्रमिक

क्र0स0	उद्योग का नाम	मिलों की संख्या	रोजगार में लगे श्रमिकों की संख्या
01	चावल मिल	50	400

स्रोत साक्षात्कार अनुसूची-

---

1. *केन्स* – General theory of employment interest and money.

संदर्भ तालिका 5.5 के अनुसार जनपद की 50 मिलों में रोजगार में लगे श्रमिकों की संख्या को स्पष्ट किया गया है। दाल मिलों में 32 श्रमिकों को चावल मिलों में 496 श्रमिकों को तेल मिल में,154 श्रमिकों को मसाला उद्योग में 8, श्रमिकों को लाही उद्योग में 8 श्रमिकों को, आटा मिलों में 48 श्रमिकों को रोजगार मिला हुआ है। इस प्रकार कृषि आधारित उद्योगों में जनपद के श्रमिकों को रोजगार प्राप्त है।

अतः कृषि आधारित उद्योगों में शिक्षित तथा अशिक्षित दोनो प्रकार के श्रमिकों को रोजगार प्राप्त हो जाता है इनमें महिला श्रमिकों को भी काम मिल जाता है। जिससे उनके जीवकोपार्जन का सहारा हो जाता है। अतः जनपद में सबसे अधिक श्रमिक कृषि-आधारित उद्योगों में ही रोजगार में लगे हैं।

5.3 कृषि आधारित उद्योगों का आय संवृद्धि पक्ष :-

संवृद्धि का अर्थ होता है वृद्धि होना। आय संवृद्धि से तात्पर्य यह है कि आय में वृद्धि होना। आय में यह वृद्धि उत्पादन में वृद्धि करके तथा अधिक रोजगार प्रदान करके की जा सकती है। कृषि आधारित उद्योग में कार्यरत मिलों में लगे श्रमिकों द्वारा उत्पादित माल से दस वर्षीय अवधि में कुल 23,78,45,436.00 रू0 आय प्राप्त हो रही है। इस उद्योग में 746 व्यक्ति रोजगार में लगे हैं। तालिका संख्या 5.6 अ एवं ब में रोजगार के द्वारा आय संवृद्धि को इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं।

तालिका संख्या 5.6 (अ)

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में रोजगार में लगे व्यक्तियों द्वारा आय में वृद्धि (दस वर्षीय अवधि 1994-95 - 2003-04)

क्र.सं.	उद्योग का नाम	मिलों की सं0	रोजगार में लगे श्रमिकों की सं0	रोजगार से प्राप्त आय
1.	दाल मिल	04	32	1,11,27,306.00
2.	चावल मिल अतर्रा तहसील को छोड़कर	12	96	2,92,09,178.00
3.	तेल मिल	24	154	5,35,50,161.00
4.	मसाला उद्योग	02	08	27,81,462.00
5.	लाही उद्योग	02	08	27,81,462.00
6.	आटा उद्योग	06	48	1,66,90,959.00

स्रोत - साक्षात्कार अनुसूची।

तालिका संख्या - 5.6ब

अतर्रा तहसील में संचालित चावल मिलों में रोजगार में लगे व्यक्तियों द्वारा आय में वृद्धि (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	उद्योग का नाम	मिलों की सं0	रोजगार में लगे श्रमिकों की सं0	रोजगार से प्राप्त आय
1.	चावल मिल	50	400	12,17,04,908.00

स्रोत : साक्षात्कार अनुसूची

आलोक : जनपद में 90 प्रतिशत चावल मिल अतर्रा में लगी हैं।

उपरोक्त सारिणी में दसवर्षीय अवधि में कृषि-आधारित उद्योग में मिलों में रोजगार में लगे व्यक्तियों से आय में संवृद्धि की स्थिति इस प्रकार है। दाल मिल में 32 व्यक्तियों द्वारा आय में 1,11,27,306.00 रू0 आय में वृद्धि चावल मिलों में

496 व्यक्तियों द्वारा 5,09,14,086.00 रूपये मसाला उद्योग में 8 व्यक्तियों के द्वारा 27,81,462.00 रू0 आय में वृद्धि लाही उद्योग में 8 व्यक्तियों द्वारा 27,81,462.00 रू0 की आय में वृद्धि आटा मिल में 48 व्यक्तियों द्वारा 1,66,90,959.0 रू0 की आय में वृद्धि की।

उपरोक्त आय में वृद्धि व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होने के कारण प्राप्त हो रही है। क्योंकि जब व्यक्तियों या श्रमिकों को रोजगार प्राप्त होता है तो उत्पादन कार्य में वृद्धि हो जाती है। क्योंकि उत्पादन कार्य श्रमिकों द्वारा ही सम्पन्न होता है।

अतः स्पष्ट है कि उत्पादन बिक्री के अतिरिक्त आय में संवृद्धि व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करके की जा सकती है। क्योंकि जितने अधिक श्रमिक उत्पादन कार्य में लगेंगे उत्पादन उतना ही अधिक मात्रा में होगा। और उत्पादन की बिक्री से अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

5.4 कृषि-आधारित उद्योगों की श्रम संरचना :-

किसी भी उद्योग की उत्पाद संरचना में श्रम एक महत्वपूर्ण साधन है। बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग में श्रम की बहुत अधिक समस्या है। इन उद्योगों में मशीनों को चलाने के लिए मानवीय श्रम की ही आवश्यकता होती है। अतः यह उद्योग पूर्णतया मानवीय श्रम पर आधारित है।

''श्रम का अर्थ मानव के उस मानसिक तथा शारीरिक प्रयास से है जो अंशतः या पूर्णतया कार्यशील प्रत्यक्ष प्राप्त होने वाले आनन्द के अतिरिक्त किसी लाभ की दृष्टि से किया जाये। अतः श्रम के लिए दो बातें होना आवश्यक हैं।[1]

(1) श्रम के अन्तर्गत शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकार के प्रयत्न सम्मिलित किये गये हैं।

(2) श्रम के अन्तर्गत केवल वे ही प्रयत्न आते हैं जिनका उद्देश्य आर्थिक होता

---

1. प्रो0 मार्शल - प्रिंसिपल ऑफ इकोनामिक्स।

है। केवल आनन्द के लिए किये गये श्रम को अर्थशास्त्र में श्रम नहीं कहेंगे।

श्रम को निम्नलिखित मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है :-

1. कुशल तथा अकुशल श्रम।
2. उत्पादक तथा अनुत्पादक श्रम।

सामान्य रूप में अकुशल श्रम वह है जिसमें केवल सामान्य योग्यता की आवश्यकता हो तथा कुशल श्रम वह है जिसमें सामान्य के अतिरिक्त विशेष योग्यता की आवश्यकता हो।

इन उद्योगों में कुशल व अकुशल दोनों प्रकार के श्रमिक कार्य करते हैं। वैसे इन उद्योगों में अकुशल श्रम अधिक कार्य करता है। जैसे दाल, चावल मिल में तैयार माल से भूसी अलग करना। और मशीनों को चलाने के लिए कुशल श्रम की आवश्यकता होती है।

श्रम का उत्पादक व अनुत्पादक रूप में वर्गीकरण अत्यन्त भ्रांतिपूर्ण है। प्रो0 मार्शल ने उत्पादक व अनुत्पादक श्रम को इस प्रकार व्यक्त किया है – "वह श्रम अनुत्पादक है जो हमें उद्देश्य की ओर बढ़ाने में असफल है। जो उपयोगिता का उत्पादन नहीं करता ऐसे श्रम को छोड़कर अन्य सभी श्रम उत्पादक हैं।

इन उद्योगों में चूँकि श्रमिक उत्पादक है। कार्य करते हैं पारिश्रमिक प्राप्त करते हैं। अतः यहाँ प्रयुक्त श्रम उत्पादक है।

इन उद्योगों में श्रमिकों की स्थिति व प्रकृति का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें श्रम मानसिक व शारीरिक दोनों प्रकार का है। बिना श्रम के इन उद्योगों की उत्पादन व निष्पादन की प्रक्रिया असम्भव है।

बाँदा जनपद के कृषि-आधारित उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों की स्थिति बहुत दयनीय है। श्रमिक के जीवन स्तर एवं कार्य क्षमता का स्तर बहुत निम्न एवं कम है।

इन उद्योगों में अधिकांश मिलों में श्रमिक स्वयं अत्यन्त साहसिक हैं। इसलिए अधिकांश काम श्रमिकों को करना पड़ता है। इन उद्योगों में महिला श्रमिक हैं, बाल श्रमिक नहीं होते हैं। इन उद्योगों में अशिक्षित श्रमिक अधिक कार्य करते हैं। इसलिए इनका शोषण होता है। इनको वेतन कम दिया जाता है। इन उद्योगों में श्रमिकों के जीवन स्तर निम्न होने के कारण हैं।

अशिक्षा, अज्ञानता, रूढिवादिता, आर्थिक दुर्बलता आदि। मशीनों को चलाने के लिए इनकों प्रशिक्षण दिया जाता है उस समय भी न्यूनतम मजदूरी प्रदान की जाती है।

बाँदा जनपद में संचालित कृषि उद्योग में लगे हुए श्रमिकों की स्थिति सारिणी संख्या 5.7 अ एवं ब से स्पष्ट है।

सारिणी संख्या 5.7 अ से स्पष्ट होता है कि नगर में संचालित कृषि उद्योग में स्वयं मालिकों व प्रबंधकों के अतिरिक्त जो श्रमिक जो कार्य करते हैं उनकी संख्या बहुत कम है। कारण यह है कि इस उद्योग में कार्य करने वाले अधिकतर श्रमिक अशिक्षित हैं, इन उद्योगों में श्रमिकों की स्थिति का तालिका संख्या 5.7अ में दर्शाया जा रहा है।

तालिका संख्या 5.7 अ

बाँदा नगर में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की स्थिति (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	श्रमिकों के प्रकार	शिक्षित	अशिक्षित
1.	पुरूष	76	246
2.	महिला	-	12
3.	बाल श्रमिक	-	-
	समग्र योग	76	258

स्रोत : साक्षात्कार अनुसूची

तालिका संख्या 5.7 ब
अतर्रा तहसील में संचालित चावल मिलों में कार्यरत
श्रमिकों की स्थिति (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	श्रमिकों के प्रकार	शिक्षित	अशिक्षित
1.	पुरुष	91	294
2.	महिला	–	15
3.	बाल श्रमिक	–	–
	समग्र योग	91	309

स्रोत : साक्षात्कार अनुसूची।

तालिका संख्या 5.7अ में 76 पुरुष श्रमिक शिक्षित तथा 246 पुरुष श्रमिक अशिक्षित है। 12 महिला श्रमिक हैं जो अशिक्षित हैं।

तालिका संख्या 5.7 ब में 91 पुरुष श्रमिक शिक्षित तथा 294 पुरुष श्रमिक अशिक्षित हैं। 15 महिला श्रमिक हैं जो अशिक्षित हैं।

5.5 श्रमिकों को कार्य करने की अवधि :-

श्रमिकों की मजदूरी और कार्य करने की अवधि में सदैव ही विवाद रहा है। प्रारम्भ में लोगों का विश्वास था कि मजदूर जितनी देर तक कार्य करेगा। उत्पादन भी उतना ही अधिक होगा। जब कभी भी काम के घण्टों को कम किया गया तो इसका कारण केवल मिल मालिकों की उदारता थी। अब सरकारी तौर पर हमारे देश में मजदूरों की कार्य अवधि 8 घण्टे निश्चित की गयी है। इसके अतिरिक्त मिल मालिक मजदूरों को सुविधा देने के लिए बाध्य हैं। इन उद्योगों में श्रमिकों के कार्य करने की अवधि तालिका संख्या 5.8 से स्पष्ट है।

तालिका संख्या 5.8 अ

कृषि-आधारित उद्योगों में विभिन्न मिलों के श्रमिकों की कार्य अविध की परिगणना (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	कार्यावधि घण्टों में	फर्मों की संख्या
1.	2-4	00 (0.00%)
2.	4-6	00 (0.00%)
3.	6-8	048(96.00%)
4.	8-10	02 (4.00%)
	समग्र योग	50 (100%)

स्रोत - साक्षात्कार अनुसूची

तालिका संख्या 5.8 ब

अतर्रा तहसील में संचालित चावल मिलों में श्रमिकों की कार्य अविध की परिगणना (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	कार्यावधि घण्टों में	फर्मों की संख्या
1.	2-4	00 (0.00%)
2.	4-6	00 (0.00%)
3.	6-8	048(96.00%)
4.	8-10	02 (4.00%)
	समग्र योग	50 (100%)

स्रोत - साक्षात्कार अनुसूची

टिप्पणी - लघु कोष्ठक में प्रदर्शित संख्या सम्बन्धित कालम संख्या का प्रतिशतांश है।

अतः तालिका संख्या 5.8 अ एवं ब से स्पष्ट है कि 48-48 मिलों में 6 से 8 घण्टे काम होता है। तथा 2-2 मिलों में 8 से 10 घण्टे काम होता है।

5.6 कृषि आधारित उद्योगों की रोजगार सृजन एवं आय संवृद्धि की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ :- (चावल मिलों का विशिष्ट संदर्भ)

1. कृषि आधारित उद्योग में जनपद में 346 श्रमिक कार्यरत हैं तथा अतर्रा तहसील की चावल मिलों में 400 श्रमिक कार्यरत हैं।

2. आज अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार की स्थिति नहीं है। अर्थात आज कल सभी को रोजगार प्राप्त नहीं हो सकता है। इसलिए अपूर्ण रोजगार की स्थिति है।

3. जनपद में सबसे अधिक श्रमिक चावल उद्योग में लगे हैं। तथा दूसरे स्थान पर तेल उद्योग में लगे हैं।

4. अतः जनपद में कृषि आधारित उद्योग में चावल मिल व तेल मिल अधिक मात्रा में है इसलिए तेल मिल व चावल मिल जनपद में लगाना ज्यादा लाभप्रद है। इससे अधिक श्रमिकों को रोजगार मिल जायेगा।

5. आय संवृद्धि उत्पादन में वृद्धि करके तथा अधिक मात्रा में श्रमिको को रोजगार प्रदान करके की जा सकती है।

6. कृषि आधारित उद्योग में मिलों में रोजगार में लगे श्रमिकों द्वारा आय में प्रत्येक वर्ष वृद्धि ही हुई है।

7. दस वर्षीय अवधि में कृषि आधारित उद्योग में मिलों में लगे श्रमिकों से 237845436 रू0 की आय प्राप्त हो रही है।

8. रोजगार से आय संवृद्धि, उत्पादन में वृद्धि द्वारा ही सम्भव है।

9. सबसे अधिक आय चावल एवं तेल मिलों के माध्यम से प्राप्त होती हैं।

अतः स्पष्ट है कि जनपद में कृषि आधारित उद्योगों में अधिक व्यक्तियों या श्रमिकों को रोजगार प्रदान करके आय में संवृद्धि की जा सकती है। अतः आय संवृद्धि हो सकती है।

षष्ठ अध्याय

षष्ठ अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का लागत पक्ष

षष्ठ अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का लागत पक्ष

"The idea of economists and political philosphers both when they are right and when they are wrong are more powerful than is commanly understood. Indeed the world is ruled by little else."

-John Maynerd Keynes

जिस प्रकार माँग-विश्लेषण में उपयोगिता का प्रमुख स्थान है उसी प्रकार पूर्ति के विश्लेषण में लागत का प्रभाव पूर्ण स्थान है। किसी वस्तु के मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया में लागत विश्लेषण का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि कोई भी उत्पादक अपनी उत्पादन-लागत से कम मूल्य स्वीकार नहीं करना चाहेगा और इतना ही नहीं चूंकि लाभ की गणना तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि वस्तु के मूल्य के साथ-साथ उसकी प्रतिइकाई लागत का ज्ञान नहीं हो,इस लिए फर्म या उद्योग की संस्थिति निर्धारण की समस्या अधिकतम लाभ या न्यूनतम हानि की स्थिति के निर्धारण की समस्या का तब तक अध्ययन नहीं किया जा सकता है जब तक कि लागत का ज्ञान न हो। इस प्रकार की उपभोक्ता की संस्थिति- निर्धारण में जिस प्रकार प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में उपयोगिता या संन्तुष्टि का महत्व पूर्ण योगदान है उसी प्रकार उत्पादक की संस्थिति के निर्धारण में 'लागत' का महत्व पूर्ण योगदान है।

जब हम कोई उत्पादन क्रिया करते हैं तो हम कुछ आगत प्रयोग में लातें हैं उदाहरण के लिए मान लिजिए हम x की 100 इकाई प्राप्त करने के लिए श्रम की 10 इकाई,पूंजी की 2 इकाई भूमि की1 इकाई तथा कच्चा माल 25 इकाई लगाते है।x। x की 100 इकाई तथा उसको प्राप्त करने में लगे इन आगतों के बीच के सम्बन्ध हम उत्पादन फलन कहते है। अब मान लिजिए श्रम की 1 इकाई 50 रूपये पूँजी की 1 इकाई 2000 भूमि की 1 इकाई 1500 रुपये तथा कच्चा माल की 1 इकाई 10 रुपये

हो तो हम इस उत्पादन को फलन के आधार यह भी कह सकते हैं कि

100x=(10x50)+(2X2000)+(1X1500)+(25X10)

=500+4000+1500+250=6250रुपया 100x की लागत हुयी। अर्थात् उत्पादन फलन के आधार पर लागत फलन को प्राप्त किया जा सकता है। इसी लिए यह कहना गलत नहीं होगा कि लागत फलन एक व्युत्पन्न फलन(derived function) है जिसे उत्पादन फलन से प्राप्त किया जाता है। किसी उत्पादन क्रिया में लागत (c) उत्पादन की मात्रा (Q) उत्पादन की तकनीक (T) उत्पादन के साधनों की कीमतें (Pf) आदि पर निर्भर करती हैं अर्थात c=f(Q.T Pf.....) इसमें लागत आश्रित चर तथा अन्य कारक Q.T.Pf आदि स्वतंत्र चर हैं। पर सामान्यतया सुविधा के लिए हम उत्पादन को छोड़ कर अन्य स्वतंत्र चरों की स्थिर मान लेते हैं। इस प्रकार लागत फलन को हम सुविधा के लिए c=f(Q) के रूप में व्यक्त करतें है।

किसी वस्तु की उत्पादन- लगात तीन चरों पर निर्भर करती है-(क) उत्पादन क्रिया में प्रयुक्त साधनों का मूल्य जो उन्हे चुकाया जाता है,(ख) उत्पादन फलन,(ग) उत्पादन की अवधि अर्थात उत्पादन करने वाली फर्म के पास अल्प या दीर्घ अवधि है जिसके भीतर वह उत्पादन को समायोजित करने के लिए अपने संगठ्न या उत्पादन प्रक्रिया में आवश्यक परिवर्तन ला सके। उत्पादन लागत के ऊपर निःसन्देह साधनों के मूल्य का प्रभाव पड़ेगा पर उसके ऊपर उत्पादन फलन,समयावधि तथा उत्पादन के नियमों का भी प्रभाव पड़ता है। उत्पादन वृद्धि नियम के संदर्भ में उत्पादन लागत में ह्रास की स्थिति होगी जबकि उत्पादन समता नियमो की स्थिति में लागत समता की स्थिति होगी तथा उत्पादन ह्रास की स्थिति में उत्पादन लागत में वृद्धि की स्थिति होगी। उत्पादन के नियमों के क्रियाशीलन के ऊपर भी समयावधि का प्रभाव पड़ेगा। इस लिए हम विभिन्न समयावधियों में उत्पादन लगात का विश्लेषण करेगे।

अल्पकाल में उत्पादन लागत (C0ST OF Production in Short Period)

अल्पकाल में लागत के विश्लेषण के पूर्व यह उचित होगा कि हम पहले इस बात पर विचार कर लें कि अल्पकाल में क्या आशय है? यहां काल या समय से हमारा अभिप्राय मांग के अनुसार पूर्ति को समायोजित करने में लगने वाले समय से है। अल्पकाल से हमारा अभिप्राय उस समयावधि से है जिसमें फर्म द्वारा प्रयुक्त स्थिर साधन में वृद्धि नहीं लायी जा सके। कोई फर्म पूर्ति में वृद्धि के उत्पादन के वर्तमान प्लान्टों के अधिक प्रयोग, कच्चे माल के क्रय तथा अधिक श्रमिकों को रोजगार में लाकर कर सकती है। समयावधि इतनी लम्बी नहीं रहती है कि फर्म के स्थिर साधनों जैसे मशीनरी तथा प्लांट में किसी प्रकार की वृद्धि लायी जा सके। इस प्रकार अल्प अवधि में फर्मो की संख्या अथवा उनके आकार में किसी प्रकार का परिवर्तन सम्भव नहीं रहता है। आगे और कुछ व्याख्या करने के पूर्व यह उचित होगा कि हम प्लाण्ट का अर्थ 'फर्म ' के बीच अन्तर स्पष्ट कर लें। 'प्लाण्ट' उत्पादन की भौतिक इकाई है जबकि फर्म एक वित्तीय इकाई है जो एक या एक से अधिक प्लाण्टों का सम्मिलित रूप है। इस प्रकार प्लाण्ट के आकार (size) में वृद्धि मशीन के क्रय में वृद्धि के द्वारा ही लायी जा सकती है जब कि फर्म के आकार में वृद्धि उसके या प्लाण्ट के आकार में वृद्धि या अधिक प्लाण्टों के क्रय के द्वारा ही लायी जा सकती है। इस व्याख्या से स्पष्ट ही अल्पकाल समय में इतना कम होता है कि फर्म तथा प्लाण्टों दोनो के आकार में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है। पर इसके लिए यह आवश्यक है कि हम अल्पकाल से सम्बन्धित लागतों का अध्ययन कर लें।

हम जानते है कि उत्पादन -क्रिया में प्रयुक्त विभिन्न लागतों या उत्पादनों के साधनों का प्रतिफल है। इन आगतों या उत्पादन के साधनों को दो वर्गो में विभक्त किया जाता- प्रथम,कुछ साधन ऐसे हो सकते हैं जिनमें, उत्पादन के परिवर्तन के लिए, तत्काल परिवर्तन लाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में ये आगत ऐसे होते हैं जो उत्पादन के स्तर के साथ परिवर्तित होते रहते हैं जैसे उत्पादन में वृद्धि लाने के लिए कच्चे माल में वृद्धि,

श्रमिकों में वृद्धि आदि इन आगतों या साधनों का परिवर्तनीय आगत या साधन कहतें हैं तथा इन साधनों को भुगतान की जाने वाली राशि को परिवर्तनशील लागत (Variable Costs) कहते है। इस प्रकार परिवर्तनीय लागत वह लागत है जो उत्पादन के स्तर के साथ प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होती है, उत्पादन की वृद्धि तथा कमी इसमें वृद्धि तथा कमी लाती है। प्रो0 बेन के अनुसार" परिवर्तनशील लागत वह लागत है जिसमें मात्र उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने पर परिवर्तित होती है।" दूसरी ओर कुछ ऐसे आगत या उत्पादन के साधन होते हैं जिनमें तत्काल परिवर्तन नही लाया जा सकता है जैसे मशीन में वृद्धि,पूँजीगत सम्पत्तियों या भवन में वृद्धि। इन पूँजीगत सम्पत्तियों में वृद्धि कम समयावधि में नही लायी जा सकती है। इनकी वृद्धि में बहुत अधिक समय लगता है। इन साधनों में अल्प अवधि में स्थिर साधन (Fixed Factor) कहतें हें क्योंकि अल्प अवधि में इनमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है। इनसे सम्बन्धित लगात को स्थिर लागत (Fixed cost) कहतें हैं। प्रो0 बेन के अनुसार 'स्थिर लागत वह लागत है जिनकी कुल राशि अल्पकाल में उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने पर भी पूर्णतया अपरिवर्तित रहती है।" मार्शल ने इस लागत को पूरक लागत कहा तथा कहा ये ऐसे व्यय है जिनके ऊपर उत्पादन की मात्रा में कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, चाहे उत्पादन हो या नहीं, यह लागत फर्मो को वहन करनी पड़ेगी। परवर्तनीय लागत को मार्शल ने प्रारम्भिक लागत या प्रत्यक्ष लागत कहा है।

इस व्याख्या से यह स्पष्ट है कि अल्पकाल में किसी फर्म की कुल उत्पादन लागतत (TC) उनकी स्थिर लागत(TFC) तथा परिवर्तन शील लगात (TVC) के योग के बराबर होगी अर्थात (TC=TFC+TVC इसमें (TFC) के सम्बन्ध में हम लोगों न अभी यह कहा कि उत्पादन के स्तर का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है,चाहे उत्पादन हो या नहीं हो, चाहे एक इकाई का हो या असिमित इकाईयों का,कुल स्थिर लागत (TFC) स्थिर रहेगीं परन्तु परिवर्तन लागत (TVC) उत्पादन के स्तर पर प्रभावित होती

है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि (TC) के ऊपर भी उत्पादन के स्तर का प्रभाव पड़ेगा पर उत्पादन के शून्य होने पर उत्पादन-लागत स्थिर लागत के बराबर होगी। कुल लागत, कुल स्थिर लगात के बराबर होगी। कुल लागत, कुल स्थिर लागत तथा कुल परिवर्तनशील लागत की उत्पादन के स्तर के सम्बन्ध में व्याख्या रेखा चित्र 6.1 में की गई है।
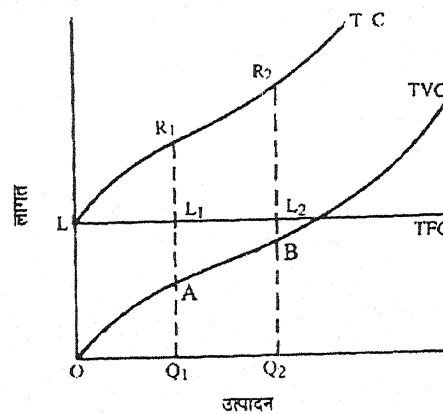
चित्र 6.1

चित्र 6.1 कुल स्थिर लागत(TFC) वक्र एक क्षैतिज रेखा है जिससे स्पष्ट है कि वह उत्पादन के स्तर से अप्रभावित रहता है। उत्पादन का स्तर चाहे0Q1याOQ2हो,TFCमें कोई परिवर्तन नही होगा,वह प्रत्येक दशा में oLके बराबर है। दूसरी ओर कुल परिवर्तनशील लागतTVCवक्र उत्पादन में वृद्धि के साथ क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ रहा है TFCतथा TVC को लम्बवत जोड़ कर (TC)प्राप्त किया गया है। रेखा चित्र से स्पष्ट है कि उत्पादन के oQ1के स्तर परTFCकी मात्राL1Q1 है एवं TVC की मात्राR1L1= Q1है। इस प्रकार उत्पादन के oQ2स्तर परTFC= L2Q2 , एवं TVc = R2L2 = Q2B1

इकाई लागतें अथवा औसत तथा सीमान्त लागतें :-

(Unit cost or Average Cost and Marginal cost)

इकाई लागत मोटे तौर पर दो प्रकार की होगी - औसत तथा सीमान्त पर औसत लगात को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है औसत स्थिर लागत (Average Fixed Cost-AVC) तथा औसत परिवर्तनशील लागत (Average Variable Cost-AVC) अब हम इन पर विचार करेगें। इनकी और व्याख्या के पूर्व स्पष्टीकरण के लिए तालिका न01 दी गयी है।

तालिका संख्या -6.1

उत्पादन	कुल लागत (TC)			औसत लागत			सीमान्त
की मात्रा (इकाईयों में)	कुल स्थिर लागत (TFC)	कुल परिवर्तनीय (TVC)	कुल लागत लागत (TC)	औसत स्थिर लागत (AFC)	औसत परिवर्तन शील लागत (AVC)	औसत कुल लागत (AC)	लागत (MC)
1.	100	200	300	100	200	300	300
2	100	300	400	50	150	200	100
3	100	350	450	33.3	116.67	150	50
4	100	380	480	25	95.00	120	30
5	100	400	500	20	80.00	100	20
6	100	620	720	16.67	103.3	120	220
7	100	950	1050	14.26	135.7	150	330
8	100	1500	1600	12.5	187.5	200	550
9	100	2600	2700	11.11	288.9	300	1100
10	100	4400	4500	10	440.0	450	1800

इन विभिन्न प्रकार की इकाई लगतों की व्याख्या हम यहाँ सारिणी के ही आधार पर आलेख के रूप में खींच कर सरल रूप में सामने रख रहे हैं। किस प्रकार से कुल लगात वक्र (TC) से औसत लागत वक्र (TC),सीमान्त लागत वक्र (MC) औसत स्थिर लागत(AFC) औसत परिवर्तनीय लागत(AVC) आदि प्राप्त की जाएगी।

औसत स्थिर लागत :- (AFC)-

कुल स्थिर लागत को उत्पादित इकाईयों द्वारा भाग देने से जो भजनफल प्राप्त होगा वही प्रति इकाई औसत स्थिर लागत कह लायेगी। इस प्रकार औसत स्थिर लागत उत्पादन की प्रत्एक इकाई पर लगने वाली औसतन स्थिर लागत है। सूत्रात्मक भाषा में इसे इस रूप में व्यक्त किया जा सकता है-

$$AFC = \frac{TFC}{Q}$$ जिसमेंQवस्तु की मात्रा इकाई ह

हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि अल्पकाल में कुल स्थिर लगात अपरिवर्तनीय होती है। इससे यह स्पष्ट है कि जैसे जैसे उत्पाद(Q)की मात्रा बढ़ती जायेगी प्रति इकाई

पर लगने वाली औसत स्थिर लागत क्रमशः कम होती जायेगी। (सूत्र के समीकरण में TFC तो स्थिर है केवल Q के बढ़ने पर भजनफल निश्चित रूप में कम होता जायेगा) यदि तालिका 6.1 को ध्यान से देखें तो आप पायेगें कि स्थिर लागत 100 है जब उत्पादन 1 इकाई का हो रहा है तो औसत स्थिर लागत,जो पाँचवे खाने में प्रदर्शित है,100 रू0 है पर जब उत्पादन 2 ईकाई का होता है तो यह घट कर 100/2=50रू0 तथा जब उत्पादन बढ़कर 5 इकाई का होता है तो यह घट कर 100/5=20 रू0 हो जाती है अर्थात जैसे जैसे उत्पादन बढ़ता जायेगा इसमें निरन्तर कमी आती जायेगी। यदि हम इसे वक्र के रूप में प्रदर्शित करें तो हम पायेगें कि इसे प्रदर्शित करने वाला वक्रAFC दाहिनी ओर नीचे गिरता हुआ होगा, पर कभी आधार अक्ष को स्पर्श नहीं करेगा, औसत स्थिर लागत लगभग शून्य हो सकती है पर शून्य नहीं। इसका प्रदर्शन रेखा चित्र न0 6.2 में किया गया है।

औसत परिवर्तन लागत :- (AVC)

औसत परिवर्तनशीललागत उत्पादन की प्रति इकाई पर लगाने वाली औसत परिवर्तनशील लागत है। दूसरे शब्दों में कुल परिवर्तनशील लागत को कुल उत्पादित इकाईयों द्वारा भाग देने से जो भजनफल प्राप्त होगा वही औसत परिवर्तनशील लागत होगी । सूत्र के रूप में -

$$AVC = \frac{TVC}{Q}$$

अब प्रश्न यह हैAVC का स्वरूप कैसा होगा AVC को प्रदर्शित करने वाले समीकरण में दोनो ही भाज्य परिवर्तनीय है,ऐसी स्थिति में AVC का स्वरूप प्रदर्शित करना थोड़ा कठिन हो जाता है। इसका स्वरूप इस बात पर निर्भर करेगा कि उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन फलस्वरूप कुल परिवर्तनीय लागत के ऊपर प्रभाव पड़ता है। औसत परिवर्तनीय लागत के ऊपर उत्पादन के नियमों का प्रभाव पड़ेगा । जब तक समान्य उत्पादन-क्षमता का प्रयोग हुआ नही रहता तब तक समान्यतया औसत

चित्र संख्या - 6.2

परिवर्तनशील लगात ह्रास्त्र नियम के कारण नीचे गिरेगी पर उसके बाद लागत वृद्धि नियम क्रियाशील होगा और औसत परिवर्तनशील लागत बढ़ती जायेगी। तालिका नं0 6.1 के छठे खाने से स्पष्ट है कि औसत परिवर्तनशील लागत पांचवी इकाई तक तो घटती है, फिर उसके बाद गिरने लगती है। AVCको रेखा चित्र 6.2 में प्रदर्शित किया गया है।
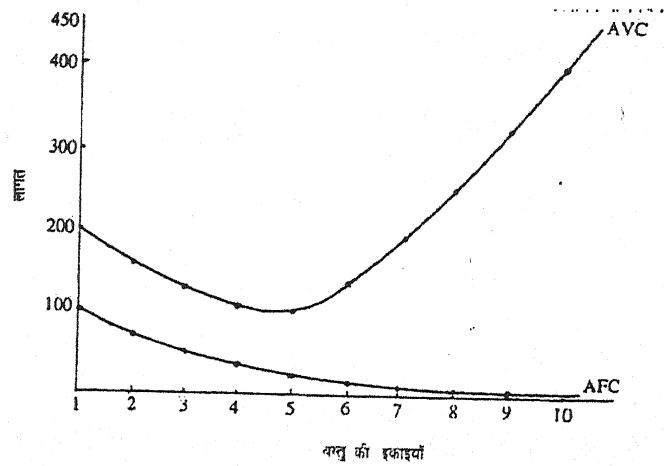
औसत कुल लागत(ATC) या औसत लागत(AC)-

उत्पादन की किसी मात्रा को उत्पादित करने के लिए लगने वाली कुल लागत को उत्पादित वस्तुओं की मात्रा इकाई से भाग देने पर जो भजनफल प्राप्त होता है वही औसत लागत है। इस प्रकार यह प्रति इकाई उत्पादन-लागत है। जिस प्रकार से कुल लागत को परिवर्तनशील तथा स्थिर लागत के बीच बाँटा जा सकता है,ठीक उसी प्रकार औसत लागत को औसत परिवर्तनशील लागत तथा औसत स्थिर लागत के बीच बाँटा जा सकता है। सूत्र के रूप में-

$$ATC = \frac{TC}{Q} = \frac{TFC+TVC}{Q} = AFC+AVC$$

इससे स्पष्ट है कि उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर औसत कुल लागत या औसत लागत का क्या रूप होगा। यह किस प्रकार से व्यवहार करेगी,यह इस बात पर निर्भर करेगा कि उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर औसत लागत(AFC) तथा औसत परिवर्तनशील लागत(AVC) किस प्रकार से व्यवहार करते है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते है किAVC तथाAFC का सयुक्त प्रभावAC या ATC के ऊपर पड़ेगा। हम यह

भी देख चुके हैं कि AFC की मात्रा उत्पादन के स्तर में वृद्धि के साथ निरन्तर घटती जायेगी जबकि उत्पादन वृद्धि के साथ औसत परिवर्तनशील लागत बढ़ेगी या घटेगी यह इस बात पर निर्भर करेगा कि उत्पादन कुल परिवर्तनशीललगात की तुलना में अधिक या कम तेजी से बढ़ रहा है। सामान्यतया उत्पादन क्षमता के पूर्ण प्रयोग के पहले परिवर्तनशील लागत घटेगी और उसके बाद बढ़ेगी। इस ब्याख्या से स्पष्ट है कि उस सीमा तक कि दोनोAFC तथाAVC घट रहे हैं, उनसे बनी हुईAC भी घटेगी, परAFC तो घटती रहेगी पर जबAVC बढ़ने लगे तो जबAVC की वृद्धिAFC की कमी को समाप्त कर देगी तो AC ऊपर बढ़ने लगेगी।AC को आगे चित्र 6.3 में दिखाया गया है।
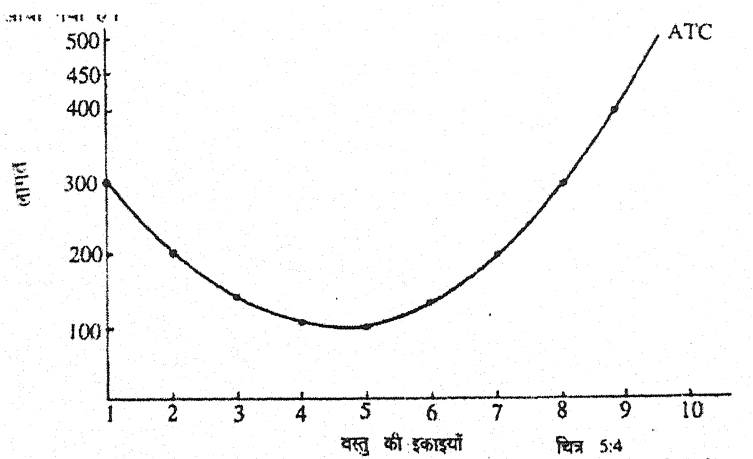
चित्र संख्या - 6.3

यहाँ एक प्रश्न उठाना स्वभाविक है कि औसत लागत(AC) का स्वरूप क्यों अग्रेजी के 'U' अक्षर के समान होगा? दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि क्यों औसत लागत वक्र कुछ दूरी तक नीचे गिरता हुआ होगा, और फिर उसके बाद इसमें ऊपर उठाने की पृवत्ति दृष्टि गोचर होगी? इसका कारण प्रमुख रूप से परिवर्तनशील अनुपात के नियम (Law oF Variable proportions) के क्रियाशीलन में निहित है। पर इसके आधार पर व्याख्या करने के पूर्व अत्यन्त ही सरल ढंग से हम इसकी व्याख्या औसत स्थिर लागत तथा औसत परिवर्तनशील लागत के आधार पर

करेगें।(यद्यपि इसका भी आधार परिवर्तनशील अनुपात का नियम ही है) हम लोगो ने देखा कि औसत लागत(AC), दो लागतों AFC तथाAVC के योग से बना है। AFC वक्र तो उत्पादन की वृद्धि के साथ निरन्तर गिरता है(रेखाचित्र 6.2) पर AVC वक्र तब तक गिरता है जब, तक कि उत्पादन- क्षमता का पूर्ण प्रयोग नहीं हो जाये (रेखाचित्र 6.2)। इस प्रकार अनुकूलतम उत्पादन के स्तर की प्राप्ति तक दोनो AFC तथा AVC वक्र घटे इसलिए उत्पादन के इस स्तर तक इन दोनो से बना ATC वक्र भी घटेगा। उत्पादन के अनुकूलतम स्तर के बाद जब उत्पादन में वृद्धि होगी तो AFC वक्र तो गिरेगा पर परिवर्तनशील लागत उत्पादन की वृद्धि की तुलना में अधिक तीव्र दर बढ़ेगी। फलस्वरूप AFC की गिरावट के बावजूद भी AVC वक्र की तीव्र दर से वृद्धि के कारण ,ATC वक्र ऊपर उठेगा। इस प्रकार AC का नीचे गिरने वाला स्वरूप तो AFC तथा AVC के साथ गिरने के कारण होगा पर उठाने वाला स्वरूप AVC के तीव्र दर से ऊपर उठने के कारण होगा ।

औसत लागत वक्र 'U ' आकार मूल रूप से परिवर्तनशील अनुपात -नियम के क्रियाशीलन के कारण है। अल्पकाल की एक मौलिक विशेषता यह है कि इसमें स्थिर साधनों(जैसी पूँजी) में वृद्धि नहीं लायी जा सकती है। इस प्रकार उत्पादन --क्रिया में प्रयुक्त एक साधन के स्थिर रहने तथा प रिवर्तनीय साधनों के कारण स्थिर साधन तथा परिवर्तनीय साधन के बीच का अनुपात बिगड़ जाता है। स्थिर साधन के प्रतिस्थापन की एक सीमा होती है। ज़ब तक इस सीमा तक स्थिर साधन का प्रयोग नहीं हुआ रहता एवं जब तक उत्पादन की वृद्धि के साथ-साथ उत्पादन की आन्तरिक तथा वाह्य मितव्यतायें मिलती जाती हैं तब तक उत्पादन में वृद्धि लाने के लिए परिवर्तनशील साधन में जो वृद्धि लायी जायेगी उसमें उत्पादन लागत ह्रास्य नियम दृष्टि गोचर होगा। इस प्रकार औसत लागत वक्र नीचे गिरेगा,पर जब प्रतिस्थापन की सीमा समाप्त हो जायेगी(जो रॉबिन्सन) अथवा जब स्थिर साधन का पूर्ण क्षमता तक प्रयोग हो जायेगा

(मार्शल) तो उत्पादन वृद्धि,औसत लागत में वृद्धि लायेगी। इस प्रकार औसत लागत वक्र परिवर्तनशील अनुपात के नियम के क्रियाशील होने के कारण'U' आकार का होगा।

सीमान्त लागत (MC)-

सीमान्त लागत से आशय कुल लागत में परिवर्तन की उस मात्रा से है जो एक अतिरिक्त इकाई के उत्पादन के फलस्वरूप हो। उदाहरण स्वरूप यदि 100 वस्तुओं की कुल उत्पादन-लागत 1000 रूपया हो और यदि उसी वस्तु की एक और इकाई के उत्पादन से कुल लागत बढ़कर 1009 रुपया हो जाय तो 1009-10009 रुपया उस अतिरिक्त इकाई की सीमान्त लागत होगी। सूत्रात्मक रुप में-

MCn = (TCn-TCn-i) जिसमें TCn तथा TCn-i क्रमशः उत्पादन की n तथा (n-i) इकाइयों से सम्बन्धित लागते हैं।

मान लीजिए आपको 100वीं इकाई की सीमान्त उत्पादन-लागत ज्ञात करना है। ऐसी स्थिति में सूत्र के अनुसार इस 100वीं इकाई तक कुल लागत (TCn) यदि 2000 रू0 हो तथा उससे 1 कम इकाई अर्थात् 100-1= 99वीं इकाई की कुल लागत 1900 रूपया हो तो लागत 2000 (TCn)-1900 (TCn-i)= 100 रूपया।

सीमान्त लागत (MC) के सम्बन्ध में हम पहले ही स्पष्ट कर चुके हैं कि सीमान्त लागत, उत्पादन, में इकाई परिवर्तन के फलस्वरूप कुल लागत के परिवर्तन को व्यक्त करती है। अन्य शब्दों में MC उत्पादन परिवर्तन के सापेक्ष कुल लागत C के परिवर्तन की दर को व्यक्त करती है।।1

अन्य शब्दों में किसी उत्पादन स्तर के अनुरूप MC कुल लागत वक्र के संगत बिन्दु (Corresponding) पर वक्र के ढाल के बराबर है। अर्थात् उत्पादन के किसी स्तर के अनुरूप यदि हम कुल लागत वक्र पर एक स्पर्श रेखा खीचें तो इस स्पर्श रेखा का ढाल सम्बन्धित MC के बराबर होगा।

यहाँ एक महत्वपूर्ण बात उल्लेखनीय यह है कि अल्पकाल में सीमान्त लागत (MC) परिवर्तनीय लागत (TVC) के परिवर्तन की दर को प्रदर्शित करती है क्योंकि स्थिर लागत (TFC) में परिवर्तन होता ही नहीं या दूसरे शब्दों में अल्पकालीन सीमान्त लागत परिवर्तनीय लागत पर निर्भर करेगी। इस स्थिति को हम इस प्रकार सिद्ध कर सकते हैं।

MCn = (TCn-TCn-1)

= (TFCn+TVCn) - (TFCn-1 + TVCn-1)

पर TFCn = TFCn-1 इसलिए

MCn = (TVCn-TVCn-1)

प्रश्न यह है कि सीमान्त लागत वक्र (MC) का स्वरूप क्या हो? ऊपर दी गयी व्याख्या से स्पष्ट है कि इस वक्र का स्वरूप वही होगा जो परिवर्तनशील लागत वक्र (TFC) का हो। इसके ऊपर भी उत्पादन के नियमों का प्रभाव पड़ेगा। शुरू में अनुकूलतम उत्पादन-स्तर की प्राप्ति के पहले सीमान्त उत्पादन लागत वक्र नीचे गिरेगा और फिर इसके ऊपर उठने की प्रवृत्ति होगी। सारिणी के आधार पर इसका प्रदर्शन चित्र नं. 6.4 में किया गया है।
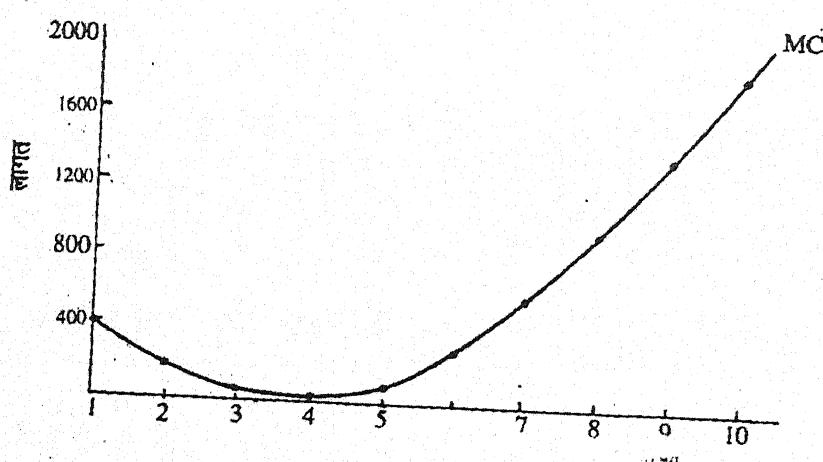
चित्र 6.4

कुल औसत लागत (ATC) एवं औसत परिवर्तनशील लागत (AVC) के बीच सम्बन्ध :-

हम जानते हैं कि ATC = AFC+AVC एवं ATC वक्र दोनों का स्वरूप U आकार का होता है। दोनों वक्रों में U आकार के होने का अर्थ है कि उत्पादन में परिवर्तनशील अनुपात का नियम क्रियाशील है। ATC वक्र का न्यूनतम बिन्दु, AVC वक्र के न्यूनतम बिन्दु से दाहिनी ओर होता है, क्योंकि ATC = AFC+AVC जिसमें AFC उत्पादन में वृद्धि के साथ लगातार गिरता है। जब तक AVCकम होता है एवं अपने न्यूनतम बिन्दु पर पहुँचता है तब तक तो ATC भी कम होता है किन्तु AVC में अब वृद्धि के बावजूद भी ATC कम होता रहता है, क्योंकि कुछ समय तक AFC में लगातार कमी AVC में होने वाली वृद्धि का ATC पर पड़ने वाले प्रभाव को कम करती है। अतः उस दशा में भी कुछ समय तक जब AVC में वृद्धि होती रहती है तब भी ATC घटता रहता है। अन्ततः जब AVC में होने वाली वृद्धि AFC में होने वाली कमी से अधिक हो जाती है तब ATC में भी वृद्धि होने लगती है। चित्र सं0 6.5 में उत्पादन के OQ1 स्तर पर AVC न्यूनतम हो जाता है,
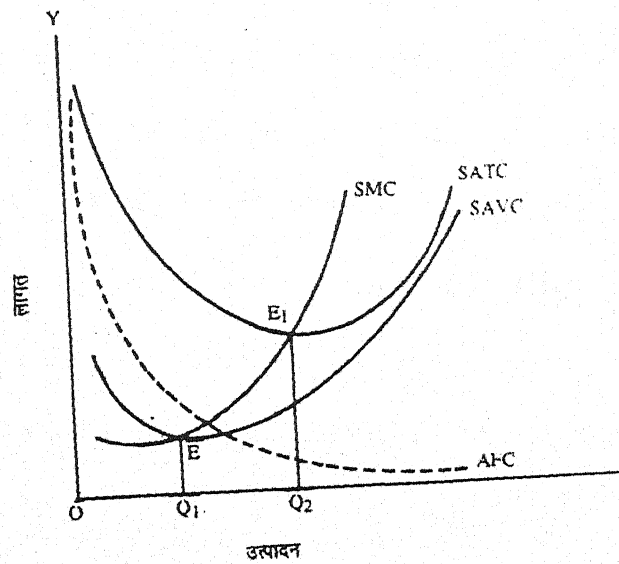
चित्र संख्या - 6.5

किन्तु ATC उत्पादन के OQ2 स्तर पर न्यूनतम होता है। इस प्रकार Q1 एवं Q2 बिन्दुओं के बीच AFC में होने वाली कमी, AVC में होने वाली वृद्धि की अपेक्षा अधिक है। यही कारण है कि Q1 एवं Q2 के बीच यद्यपि कि AVC में वृद्धि हो रही

है किन्तु ATC में फिर भी कमी होती है। चूँकि उत्पादन के OQ2 स्तर के आगे AVC में होने वाली वृद्धि, AFC में होने वाली कमी से अधिक हो जाती है, इसलिए अब ATC में भी वृद्धि दृष्टिगोचर होती है।

औसत लागत वक्र तथा सीमान्त लागत वक्र के बीच सम्बन्ध :-

इन दोनों ही वक्रों के बीच पाया जाने वाला सम्बन्ध गणितीय है और यह सम्बन्ध वही है जो किन्हीं औसत तथा सीमान्त मूल्यों या मात्राओं के बीच पाया जाता है, इसका आर्थिक विश्लेषण में महत्व है। इन दोनों वक्रों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है - औसत लागत वक्र जब तक नीचे गिरता है तब तक तो सीमान्त लागत वक्र इसके नीचे बायी ओर होता है, और औसत लागत वक्र जब तक ऊपर उठता है तब तक सीमान्त लागत वक्र इसके ऊपर बायीं ओर होता है।

इस व्याख्या के आधार पर हम इन दोनों के बीच निम्नांकित सम्बन्ध पाते हैं।

(1) जब औसत लागत गिर रही हो तो सीमान्त लागत इसके नीचे होगी। यह एक सामान्य समझ की बात है कि यदि एक अतिरिक्त उत्पादन की इकाई के कारण लागत में कमी आती है तो निश्चित रूप से इस अतिरिक्त इकाई की लागत इसके उत्पादन के पहले की औसत लागत से कम होनी चाहिए। इसे एक उदाहरण से समझ सकते हैं। मान लीजिए एक क्रिकेट के खिलाड़ी के 3 पाली के रनों का औसत 35 है। अब यदि एक पाली और खेले और उसके बाद उसके रनों का औसत गिर जाय तो निश्चित रूप से इस पाली की रन संख्या (जिसे हम सीमान्त कहेंगे) 35 से कम होगी। अर्थशास्त्र से सम्बन्धित उदाहरण लीजिए। मान लीजिए एक उत्पादक 100 कलम का उत्पादन करता है और उसकी औसत लागत 4 रूपये आती है। अब यदि यह कहा जाये कि 1 इकाई के उत्पादन के कारण औसत लागत घट गयी मान लीजिए 3.75 रू0 हो गयी तो निश्चित रूप

से इस अतिरिक्त इकाई की लागत (MC) 3.75 रू0 से कम होगी।

(2) जब औसत लागत ऊपर उठ रही तो सीमान्त लागत इसके ऊपर होगी। इसका कारण यह है कि यदि किसी इकाई के उत्पादन से औसत लागत बढ़ जाये तो निश्चित रूप से उस इकाई की लागत (सीमान्त लागत) औसत लागत से अधिक होगी। क्रिकेट वाले उदाहरण से स्पष्ट है कि यदि चौथी पाली में उसके रनों का औसत 35 से बढ जाये तो निश्चित रूप से चौथी पाली में उसकी रनों की संख्या 35से अधिक होनी चाहिए। इसी प्रकार ऊपर दिये गये उदाहरण में कलम की औसत लागत 4 रूपये से तभी बढ़ेगी जबकि उस नई इकाई की सीमान्त लागत 4 रूपये से अधिक हो।

(3) जब किसी अतिरिक्त इकाई के उत्पादन के बाद औसत लागत यथास्थिर रहे तो निश्चित रूप से उस इकाई की सीमान्त लागत औसत लागत के बराबर होनी चाहिए। ऊपर दिये गये उदाहरण में यदि औसत लागत उस अतिरिक्त इकाई के उत्पादन के बाद 4 रूपया ही जाय तो उस इकाई की सीमान्त लागत 4 रूपया ही होगी।

चित्र संख्या - 6.6
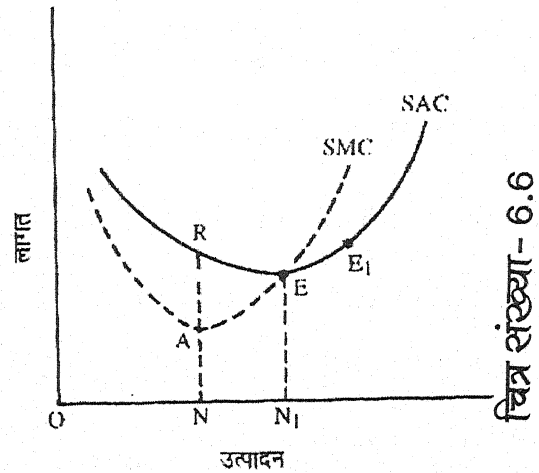
अब अल्पकालीन औसत लागत वक्र तथा सीमान्त लागत वक्र के बीच इस सम्बन्ध पर विचार किया जा सकता है। इसका प्रदर्शन चित्र नं. 6.6 में किया गया है। इस रेखाचित्र में अल्पकालीन औसत तथा सीमान्त लागत वक्रों को प्रदर्शित किया गया है। इस रेखाचित्र में ऊपर स्पष्ट किये गये तीनों सम्बन्धों का स्पष्टीकरण किया गया है। E बिन्दु के पहले बायीं ओर जब तक AC नीचे गिर रहा है सीमान्त लागत वक्र

(MC) अल्पकालीन औसत लागत वक्र (AC) के नीचे है तथा E बिन्दु के दाहिनी ओर, जब उत्पादन का स्तर पहले से अधिक है, जब तक औसत लागत वक्र ऊपर उठ रहा है MC वक्र AC के ऊपर है, और जब अत्यन्त ही कम्म समय के लिए जबकि MC बिन्दु E पर स्थिर है AC भी स्थिर है।

इन तीनों सम्बन्धों से ही एक और अत्यन्त ही महत्वपूर्ण सम्बन्ध सामने आता है और वह यह है कि MC वक्र SAVC तथा SAC दोनों को उनके न्यूनतम बिन्दु पर काटेगा। जैसा रेखाचित्र नं. 6.5 में प्रदर्शित है। पर प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों होता है अर्थात् सीमान्त लागत वक्र औसत लागत वक्र को क्यों उसके न्यूनतम बिन्दु पर काटेगा ? यदि हम ऊपर स्पष्ट किये गये तीन सम्बन्धों के सन्दर्भ में इस प्रश्न पर विचार करें तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि क्यों MC वक्र AC के न्यूनतम बिन्दु से हो कर जायेगा। स्पष्ट किये गये पहले सम्बन्ध के आधार पर E बिन्दु के पहले MC वक्र AC के नीचे है। क्योंकि AC वक्र गिर रहा है, E बिन्दु पर चूँकि AC स्थिर है इसलिए MC भी इस बिन्दु के बाद उत्पादन की वृद्धि के साथ AC वक्र ऊपर उठने लगता है, स्पष्ट है कि इस अवस्था में MC वक्र AC के ऊपर होगा (नं. 2 सम्बन्ध के आधार पर यदि MC की इन तीन अवस्थाओं - E के पहले, E पर तथा E के बाद - को एक साथ जोड़ दें तो निश्चित रूप से MC वक्र बिन्दु E से ही जाकर AC के ऊपर होगा, किसी अन्य बिन्दु से जाकर MC वक्र दूसरे सम्बन्ध अर्थात् उठते हुए AC के ऊपर रहने के सम्बन्ध का निर्वाह नहीं कर सकेगा और E बिन्दु AC न्यूनतम बिन्दु है। एक समय को मान लीजिए कि वह E से न हो कर जाये बल्कि E1 से होकर जाये तो दूसरे तथा तीसरे सम्बन्ध का निर्वाह नहीं हो पायेगा क्योंकि E बिन्दु पर जब AC स्थिर रहेगा MC उसके बराबर नहीं होगा, दूसरे जब E से E1 के बीच AC ऊपर उठ रहा है, MC उसके नीचे होगा, ऊपर नहीं।

दोनों वक्रों के बीच सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए हम लोगों ने यह कहा कि जब

AC वक्र नीचे गिर रहा हो MC वक्र उसके नीचे होगा तथा जब AC ऊपर उठ रहा हो तो MC वक्र AC के नीचे होगा पर नीचे होते हुए भी MC वक्र नीचे गिर सकता है, ऊपर उठ सकता है या स्थिर हो सकता है। रेखाचित्र 6.5 को यदि आप देखें तो इस तथ्य का स्पष्टीकरण हो जाता है। A बिन्दु तक सीमान्त लागत वक्र (MC) में नीचे गिरने की प्रवृत्ति है और वह AC से नीचे भी है पर A बिन्दु के बाद जब उत्पादन के स्तर में वृद्धि होती है तो MC में ऊपर उठने की प्रवृत्ति आरम्भ हो जाती है यद्यपि अब भी MC वक्र AC से नीचे है। स्पष्ट है कि A E के बीच MC ऊपर उठ रहा है जबकि AC गिर रहा है। इस प्रकार इस सम्बन्ध में AC के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता है कि MC का क्या स्वरूप होगा, ऊपर उठता हुआ या नीचे गिरता हुआ। पर एक बात निश्चित है जब MC गिरेगी तो AC की अपेक्षा अधिक तेजी से गिरेगी और जब ऊपर उठेगी तो AC की अपेक्षा अधिक तेजी से ऊपर उठेगी।

सामान्यतया अल्पकालीन औसत लागत तथा सीमान्त लागत वक्र का स्वरूप वैसा ही होता है जैसा चित्र नं. 6.7 में प्रदर्शित है पर कुछ ऐसी अपवादस्वरूप स्थिति विचारणीय है और वह यह है कि क्या कोई स्थिति हो सकती है जबकि औसत लागत वक्र तो गिर रहा हो पर सीमान्त लागत स्थिर हो या सीमान्त लागत वक्र आधार अक्ष के समानान्तर एक सीधी रेखा के रूप में हो? ऐसी स्थिति का स्पष्टीकरण तालिका नं. 6.2 में किया गया है :-

तालिका संख्या- 6.2

उत्पादित वस्तु	कुल लागत (स्थिर लागत 10रू0)	औसत लागत	सीमान्त लागत
1	12	12.00	2
2	14	7.00	2
3	16	5.33	2
4	18	4.50	2
5.	20	4.00	2

ऐसी स्थिति का प्रदर्शन रेखाचित्र नं. 6.7 में किया गया है -

रेखाचित्र से यह स्पष्ट है कि सीमान्त लागत को प्रदर्शित करने वाला MC वक्र आधार अक्ष के समानान्तर है जो यह प्रदर्शित करता है कि उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर सीमान्त लागत स्थिर है। पर औसत लागत वक्र (AC) उत्पादन की वृद्धि के साथ घटता गया है।

प्रश्न यह है कि इस प्रकार की स्थिति कब पायी जायेगी? तथा क्यों पाई जायेगी? इस प्रकार की स्थिति अल्पकाल में तब पायी जायेगी जब कि उत्पादन-क्षमता नियम लागू हो जिससे उत्पादन की प्रत्येक इकाई की वृद्धि परिवर्तनशील लागत के स्थिर मात्रा की वृद्धि के द्वारा प्राप्त की जा सके जैसा सारिणी में प्रदर्शित है। उत्पादन की प्रत्येक इकाई की वृद्धि पर केवल दो रूपये की ही परिवर्तनशील लागत लगती है। इस बात का पुनः उल्लेख कर देना उचित होगा कि अल्पकालीन में सीमान्त लागत के ऊपर स्थिर लागत का प्रभाव नहीं पड़ता है केवल परिवर्तनशील लागत का ही इसके ऊपर प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार लागत-समता-नियम के क्रियाशीलन के कारण तो सीमान्त लागत उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर स्थिर रहेगी फलस्वरूप सीमान्त लागत वक्र आधार के समानान्तर होगा। सीमान्त लागत के स्थिर रहने के बाद औसत लागत का गिरना कुछ विचित्र-सा लगता है यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि औसत लागत में गिरावट क्यों होती है? इसका कारण अल्पकाल की इस विशेषता में निहित है कि अल्पकाल में स्थिर साधनों में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता है। फलस्वरूप स्थिर लागत एक निश्चित मात्रा में उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर
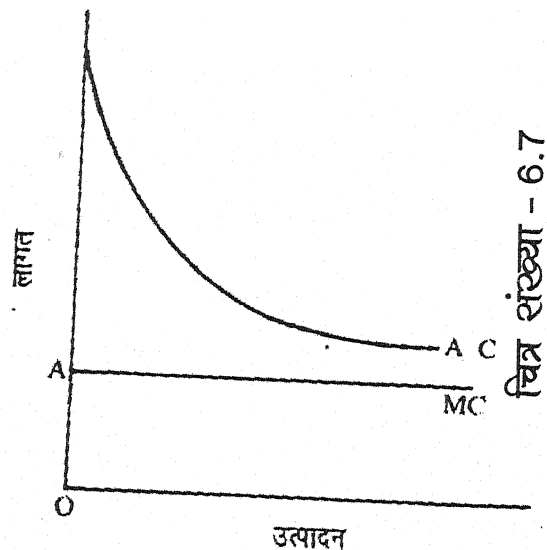
चित्र संख्या - 6.7

बनी रहती है।

उत्पादन वक्रों तथा लागत वक्रों के बीच सम्बन्ध :-

प्रारम्भ में हम लोगों ने यह प्रतिपादित किया कि लागत फलन उत्पाद फलन का ही एक व्युत्पन्न फलन है। उत्पादन फलन से प्राप्त उत्पादन के सम्बन्ध में प्राविधिक सूचनाओं के साथ 'आगत के मूल्यों' को समन्वित करके हम लागत फलन तथा लागत वक्र प्राप्त करते हैं। इसलिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जिस प्रकार लागत फलन उत्पादन फलन से सम्बन्धित है उसी प्रकार लागत वक्रें भी उत्पाद वक्रों से सम्बन्धित है।

चित्र संख्या- 6.8

उत्पाद तथा लागत वक्रों के बीच सम्बन्ध प्रदर्शित करने के लिए हम एक ऐसा उदाहरण ले रहे हैं जिसमें एक ही आगत प्रयुक्त हो रहा है, इसके आधार पर हम यह सिद्ध कर रहे हैं कि 'उत्पाद तथा लागत वक्रे' विलोम रूप (inversely) से सम्बन्धित है। मान लीजिए आगतों का मूल्य स्थिर है। ऐसी स्थिति में सीमान्त लागत या सीमान्त उत्पाद के बीच समीकरणात्मक रूप में इस प्रकार का सम्बन्ध व्यक्त होगा- यदि C = कुल लागत, Q = कुल उत्पाद, PL = श्रम का मूल्य या मजदूरी तथा L = श्रम
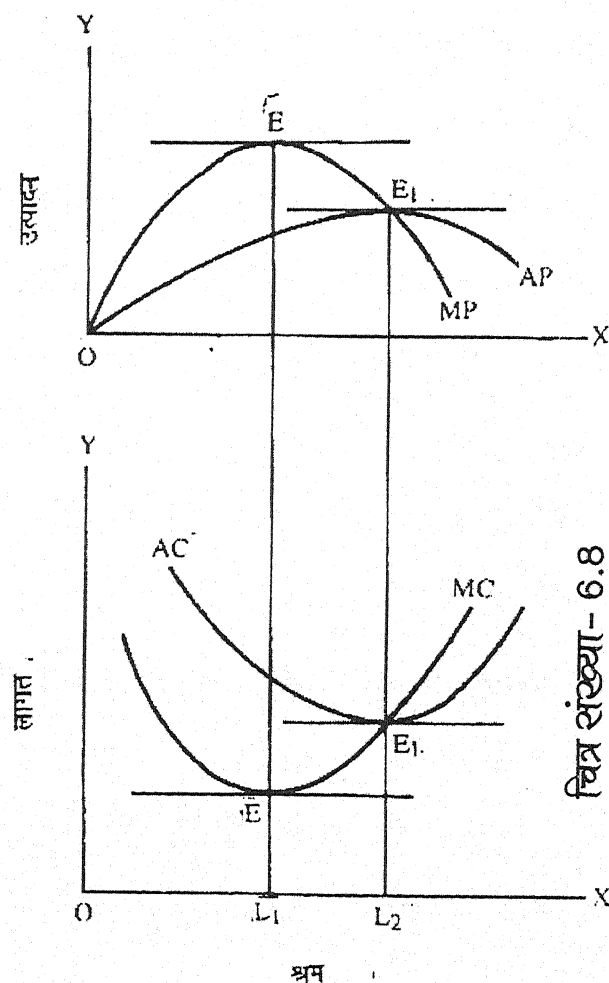
इस प्रकार सीमान्त लागत सीमान्त उत्पादन का प्रतिलोम हुआ।

इसी प्रकार का विलोम सम्बन्ध औसत लागत (AC) (क्योंकि श्रम एक परिवर्तनीय आगत है) तथा औसत उत्पाद के बीच भी इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है।

क्योंकि Q/L औसत उत्पाद है। इस प्रकार AC भी औसत उत्पाद का प्रतिलोम हुआ। रेखाचित्र में AP, AC तथा MP एवं MC के बीच विलोम सम्बन्ध प्रदर्शित किया गया है।

रेखाचित्र से स्पष्ट है जब MP तथा AP वक्र ऊपर उठ रही है तो उनसे सम्बन्धित MC तथा AC वक्र नीचे गिर रही है तथा इसके विपरीत जब MP तथा AP वक्र नीचे गिर रही है। उत्पादन के उस स्तर पर जहाँ MP अधिकतम है उससे सम्बन्धित MC न्यूनतम है तथा उत्पादन के जिस स्तर पर AP अधिकतम है उससे सम्बन्धित AC न्यूनतम है। रेखाचित्र से स्पष्ट है OL1 श्रम पर MP अधिकतम तथा MC न्यूनतम है जबकि OL2 स्तर पर AP अधिकतम तथा AC न्यूनतम है।

दीर्घकालीन औसत लागत-वक्र :-

अब तक हम लोगों ने अल्पकालीन लागत वक्रों की व्याख्या की। अब हम किसी फर्म की दीर्घकालीन औसत लागत वक्र पर विचार करेंगे। हम यह देखेंगे कि किसी व्यक्तिगत फर्म की दीर्घकालीन औसत लागत वक्र को कैसे प्राप्त किया जा सकता है। प्रो0 मार्शल ने इस विषय की बिल्कुल अवहेलना की। 1920 के अन्तिम चरण में वाइनर (Viner) ने यह स्पष्ट किया कि किसी फर्म की दीर्घकालीन औसत लागत वक्र (LAC) सभी अल्पकालीन लागत वक्रों को ढकता हुआ होगा और इसीलिए उन्होंने इसे आवरण वक्र (Envelop Curve) भी कहा।

अल्पकाल में लागत वक्रों पर विचार करते हुए हम लोगों ने देखा कि अल्पकाल में उत्पादक इकाई के पास इतना कम समय रहता है कि वह प्लाण्ट के आकार में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं ला सकती है। दिये हुए प्लाण्ट के आधार पर ही वह विभिन्न

स्तर के उत्पादन की प्राप्ति कर सकती है। इस प्रकार हम यह भी कह सकते हैं कि अल्पकालीन औसत लागत वक्र (AC) वास्तव में एक निश्चित प्लाण्ट के द्वारा प्राप्त होने वाले उत्पादन के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित औसत उत्पादन-लागत प्रदर्शित करता है। पर दीर्घकाल में उत्पादक के पास इतना अधिक समय रहता है कि वह उत्पादन-क्रिया में प्रत्येक प्रकार का परिवर्तन ला सकता है, वह प्लाण्ट के आकार में परिवर्तन ला सकता है, नयी मशीन क्रय कर सकता है। स्पष्ट है कि दीर्घकाल में उत्पादक विभिन्न प्लाण्टों से सम्बन्धित लागत वक्रों में से किसी एक को चुन सकता है जो उसके वांछित उत्पादन को प्राप्त करने की दृष्टि से न्यूनतम लागत प्रदर्शित करें जैसा चित्र नं0 6.9 में प्रदर्शित
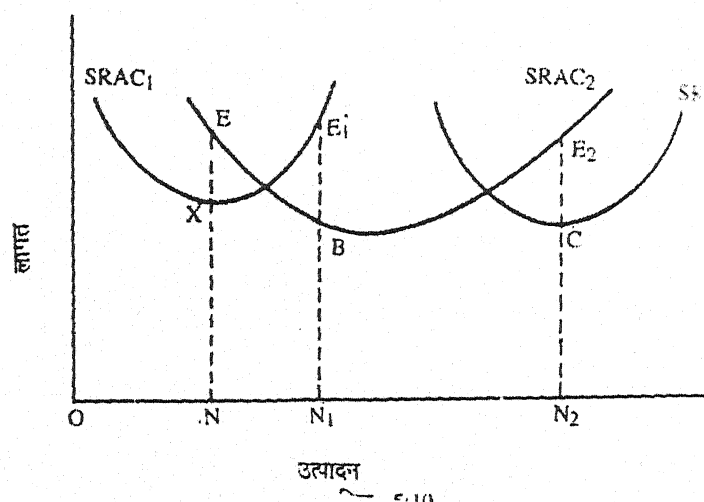
चित्र संख्या- 6.9

है।

इस रेखाचित्र में SRAC1, SRAC2 तथा SRAC3 तीन अलग-अलग अल्पकालीन औसत लागत वक्रें है जो अलग-अलग प्लाटों से सम्बन्धित उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर उत्पादन-लागत को व्यक्त करते हैं। अल्पकाल में उत्पादक इनमें से किसी एक ही पर उत्पादन करेगा जो उसे उपलब्ध हो, एक को छोड़कर किसी दूसरे को नहीं प्राप्त कर सकता है क्योंकि उसके पास इतना समय नहीं है। परन्तु दीर्घकाल में

वह एक प्लाण्ट छोड़कर दूसरे प्लाण्ट को प्राप्त कर सकता है। मान लीजिए उसे ON वस्तुओं का उत्पादन करना हो तो वह उस प्लाण्ट पर कार्य करेगा जो SARC1 लागत वक्र से प्रदर्शित है, यद्यपि वह SARC2 पर भी जा सकता है। क्योंकि उसके पास समय है पर वह ऐसा नहीं करेगा क्योंकि वह ON उत्पादन न्यूनतम लागत पर तभी प्राप्त करेगा जबकि वह SRAC1 पर उत्पादन करें। मान लीजिए माँग बढ़ जाती है। अब उसे ON1 वस्तुओं का उत्पादन करना है, ऐसी स्थिति में यदि अल्पकाल रहता तो वह SRAC1 के ही E1 बिन्दु पर उत्पादन करता क्योंकि उत्पादन की वृद्धि के लिए वह प्लाण्ट के आकार में किसी भी प्रकार परिवर्तन ला ही नहीं सकता है। पद दीर्घकाल में वह ON1 को प्राप्त करने के लिए प्लाण्ट में ऐसा परिवर्तन करेगा जिससे उसे वह उत्पादन न्यूनतम लागत पर प्राप्त हो सके। दीर्घकाल में वह SRAC2 के B बिन्दु पर रहेगा, जहाँ उत्पादन-लागत N1B है जो SRAC1 की स्थिति में N1 E1 होती (N1E1>N1B) । इसी प्रकार यदि उसे ON2 उत्पादन प्राप्त करना हो तो वह SRAC3 वाले प्लाण्ट पर कार्य करेगा। इस प्रकार दीर्घकाल में उत्पादक, उत्पादन के अलग-अलग स्तर को सम्भव समायोजन के द्वारा, प्लाण्ट के आकार में वृद्धि या कमी करके न्यूनतम लागत पर प्राप्त करने का प्रयास करेगा। दीर्घकाल में ON उत्पादन NA लागत ON1 उत्पादन N1B लागत तथा ON2 उत्पादन N2C लागत पर प्राप्त करेगा। यही प्रत्येक उत्पादन के स्तर से सम्बन्धित औसत लागत है और वे सभी न्यूनतम लागत की प्रतीक हैं। उत्पादन के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित न्यूनतम लागत को प्रदर्शित करने वाले विभिन्न बिन्दुओं A,B तथा C से जाने वाला वक्र दीर्घकालीन औसत लागत वक्र प्रदर्शित करेगा। इस प्रकार स्पष्ट है कि दीर्घकालीन औसत लागत वक्र उत्पादन के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित न्यूनतम सम्भावित औसत लागत को प्रदर्शित करता है। चूँकि प्रत्येक उत्पादन के स्तर से सम्बन्धित न्यूनतम लागत प्रदर्शित करने वाला कोई-न-कोई प्लाण्ट या SRAC वक्र होगा इसलिए दीर्घकालीन औसत लागत वक्र

निश्चित रूप से प्रत्येक SRAC वक्र के किसी–न–किसी बिन्दु को स्पर्श करता हुआ जायेगा या दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का प्रत्येक बिन्दु निश्चित रूप से किसी–न–किसी SRAC का बिन्दु होगा। इसका प्रदर्शन चित्र नं. 6.10 में किया गया है।
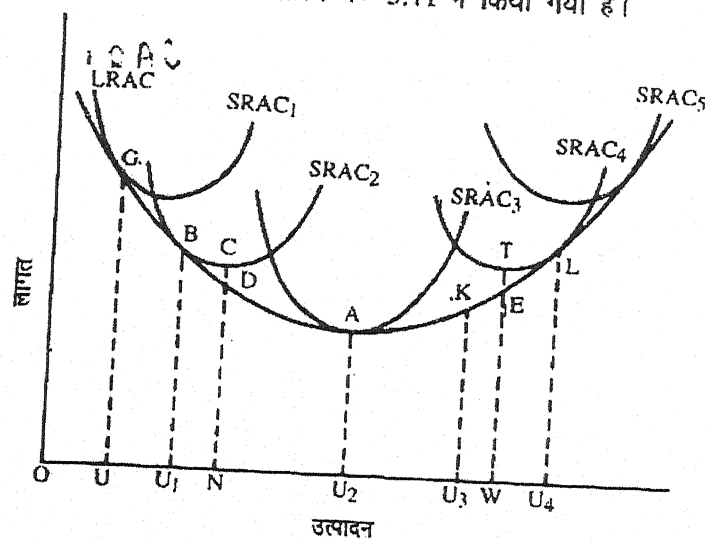
चित्र संख्या- 6.10

इस रेखाचित्र में SRAC1..... SRAC.........SRAC3...... आदि अनेक प्लाण्टों को प्रदर्शित करने वाली अल्पकालीन लागत वक्रें हैं। हम यह मान लेते है कि फर्म दीर्घकाल में विभिन्न उत्पादन के स्तर से सम्बन्धित अनेक प्लाण्टों को प्राप्त कर सकती है। इन विभिन्न SRAC वक्रों के किसी–न–किसी बिन्दु को स्पर्श करता हुआ जो वक्र खींचा गया है वही दीर्घकालीन औसत लागत वक्र है। इस प्रकार इसके प्रत्येक बिन्दु किसी–न–किसी अल्पकालीन औसत लागत वक्र या प्लाण्ट वक्र के स्पर्श बिन्दु हैं। वस्तु स्थिति तो यह है कि दीर्घकालीन औसत लागत वक्र इन विभिन्न स्पर्श बिन्दुओं का बिन्दु पथ ही है। यह वक्र यह प्रदर्शित करता है कि यदि उत्पादन के सभी साधन परिवर्तनशील हो तों उत्पादन के विभिन्न स्तरों से सम्बन्धित न्यूनतम सम्भावित औसत लागत क्या होगी। LRAC वक्र के अतिरिक्त किसी भी अन्य बिन्दु पर LRAC के

बिन्दु से व्यक्त उत्पादन लागत से कम पर कोई उत्पादन नहीं प्राप्त किया जा सकता है। जैसा रेखाचित्र से व्यक्त है यदि उत्पादक को OU उत्पादन करना हो तो वह SRAC1 के G बिन्दु पर उत्पादन करेगा। अब मान लीजिए यदि फर्म को उत्पादन OU1 तक बढ़ाना हो तो LRAC वक्र के B बिन्दु पर उत्पादन करेगी और चूँकि B बिन्दु किसी न किसी SRAC का स्पर्श बिन्दु होगा इसलिए वह ऐसा प्लाण्ट बनायेगा जिससे सम्बन्धित औसत लागत वक्र LRAC के B बिन्दु पर स्पर्श करे। ऐसा वक्र SRAC2 होगा। इसी प्रकार वह उत्पादन की वांछित मात्रा LRAC के ही किसी-न-किसी बिन्दु पर उत्पादित करेगा, यदि वह न्यूनतम लागत पर उत्पादन प्राप्त करना चाहें। मान लीजिए, उसे OU3 उत्पादन प्राप्त करना है। वह LRAC के K बिन्दु पर ही उत्पादन न्यूनतम लागत पर OU3 का उत्पादन प्राप्त कर सकती है, K के अतिरिक्त किसी अन्य बिन्दु पर इससे कम लागत पर OU3 की प्राप्ति नहीं हो सकती है। विभिन्न SRAC वक्रों के स्पर्श बिन्दुओं से होकर जाने वाले LRAC वक्र को 'आवरण वक्र' (Envelop curve) भी कहते हैं। इस वक्र के विश्लेषण से स्पष्ट है कि फर्म अधिक उत्पादन न्यूनतम लागत पर बड़े प्लाण्ट के प्रयोग के द्वारा प्राप्त करेगी जबकि कम उत्पादन, छोटे प्लाण्ट पर कार्य करके प्राप्त करेगी, अधिक उत्पादन को यदि उसने छोटे प्लाण्ट पर प्राप्त करने का प्रयास किया तो लागत निश्चित रूप से अधिक होगी और कम उत्पादन की प्राप्ति के लिए बड़ा प्लाण्ट नहीं बैठायेगी क्योंकि 'निष्क्रिय उत्पादन-क्षमता' (Idle production capacity) के कारण उसे हानि उठानी पड़ेगी। OU4 का उत्पादन वह SRAC4 प्लाण्ट पर ही प्राप्त करेगा। और OU1 उत्पादन SRAC2 पर प्राप्त करेगा, वह ऐसा नहीं करेगा कि OU2 उत्पादन करने के लिए SRAC4 वाला प्लाण्ट बैठाये क्योंकि ऐसी स्थिति में प्रति इकाई लागत अधिक होगी।

LRAC वक्र के सम्बन्ध में एक और महत्वपूर्ण तथ्य उल्लेखनीय है, वह यह है कि LRAC वक्र के प्रत्येक बिन्दु, किसी-न-किसी SRAC वक्र के स्पर्श बिन्दु

अवश्य होंगे पर यह आवश्यक नहीं है कि ये स्पर्श बिन्दु SRAC वक्र के न्यूनतम बिन्दु ही हों। यदि हम चित्र LRAC को ध्यान पूर्वक देखें तो यह पायेंगे कि यह वक्र OU2 उत्पादन तक तो नीचे गिर रहा है, इसके बाद वह ऊपर उठ रहा है। जब OU2 से कम उत्पादन हो या जब तक LRAC वक्र में नीचे गिरने की प्रवृत्ति हो तो यह SRAC वक्रों के गिरते हुए भाग पर स्पर्श करेगा क्योंकि ऐसी स्थिति में (अर्थात् OU2 से कम उत्पादन की अवस्था में) प्लाण्टों के 'न्यूनतम इकाई लागत' बिन्दु पर उत्पादन करना ठीक नहीं होगा। मान लीजिए उत्पादक को OU1 वस्तुओं के उत्पादन करना है। उत्पादन SRAC2 के B बिन्दु पर होगा यद्यपि SRAC2 का न्यूनतम लागत बिन्दु B नहीं है C है। स्पष्ट है कि फर्म SRAC2 से सम्बद्ध प्लाण्ट को पूर्ण उत्पादन क्षमता से कम पर ही प्रयोग कर रही है। पूर्ण उत्पादन क्षमता का प्रयोग फर्म तभी कर पायेगी जबकि उसे OU1 से अधिक अर्थात् ON उत्पादन करना हो। पर यदि फर्म को दीर्घकाल में ON उत्पादन करना हो तो वह SRAC2 के C बिन्दु पर उत्पादन नहीं करेगी बल्कि ऐसे प्लाण्ट का निर्माण करेगी जिसका कोई भाग LAC के D बिन्दु पर स्पर्श करे। ऐसी स्थिति में लागत ND होगी जबकि SAC2 पर यह NC होगी। (NC>ND)। रेखाचित्र में प्रदर्शित LAC से यह भी स्पष्ट है कि जब LAC वक्र ऊपर उठ रहा हो तो यह SAC वक्रों को उनके ऊपर उठते हुए भागों पर स्पर्श करेगा अर्थात् OU2 से अधिक उत्पादन की अवस्था में फर्म प्लाटों की न्यूनतम लागत उत्पादन क्षमता स्तर से ऊपर उत्पादन करेगी। उदाहरण के लिए OU4 उत्पादन वह SRAC4 के L बिन्दु पर उत्पादित करेगी। यद्यपि SRAC4 का न्यूनतम बिन्दु L नहीं है T है। पर यही फर्म के लिए हितकर होगा क्योंकि यदि उसे T से सम्बन्धित OW उत्पादन करना हो तो वह LAC के बिन्दु E पर उत्पादन करने के लिए कोई नया प्लाण्ट बनायेगी जिससे सम्बन्धित SAC वक्र E बिन्दु पर LAC को स्पर्श करे।

इस प्रकार हम लोगों ने देखा कि जब LRAC वक्र गिर रहा हो तो यह

SRAC वक्रों के ऊपर उठते हुए भागों को स्पर्श करता हुआ जायेगा और जब यह ऊपर उठता हुआ हो तो यह SRAC वक्रों के ऊपर उठते हुए भागों को स्पर्श करता हुआ जायेगा। LRAC वक्र केवल एक ही SRAC वक्र के न्यूनतम बिन्दु को स्पर्श करेगा जिसका न्यूनतम बिन्दु LRAC के न्यूनतम बिन्दु को स्पर्श करे। रेखाचित्र में ऐसा वक्र SRAC3 है।

प्रश्न यह है कि क्या LRAC वक्र सीधी रेखा के रूप में भी हो सकता है? - यदि उत्पादन सहजातीय तथा रैखिक हो, जिसका स्पष्टीकरण हम लोग उत्पादन फलन वाले अध्याय में कर चुके हैं, तथा आगतों का मूल्य स्थिर रहे तो दीर्घकालीन औसत लागत, उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर स्थिर रहेगी और इसको प्रदर्शित करने वाला

चित्र संख्या- 6.11
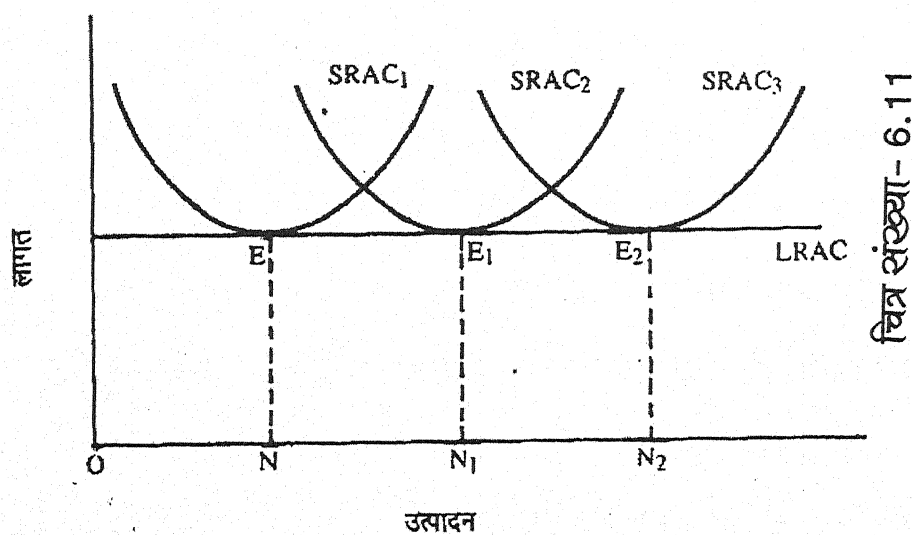
LRAC वक्र आधार अक्ष के समानान्तर होगा और साथ ही प्रत्येक SRAC के न्यूनतम बिन्दु को स्पर्श करेगा जैसा चित्र नं. 6.11 में प्रदर्शित है। इसमें LRAC एक सीधी रेखा है और इस पर विभिन्न SRAC वक्र SRAC1, SRAC2 तथा SRAC3 के न्यूनतम बिन्दु E, E1 तथा E2 को स्पर्श करते हैं।

दीर्घकालीन औसत लागत वक्र का स्वरूप :-

दीर्घकालीन औसत लागत वक्र के सम्बन्ध में एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि LAC का स्वरूप कैसा होता है? रेखाचित्र नं. 6.8 में प्रदर्शित LAC वक्र के स्वरूप को देखने के बाद यह कहा जा सकता है कि LAC वक्र अंग्रेजी के 'U' अक्षर के ही समान होगा पर अल्पकालीन वक्र की अपेक्षा अधिक चपटा होगा। प्रश्न यह उठता है कि ऐसा क्यों होगा? क्यों दीर्घकालीन औसत लागत वक्र भी 'U' के आकार का होगा? हम लोगों ने अल्पकालीन औसत लागत वक्र के 'U' आकार की व्याख्या परिवर्तनशील अनुपात के नियम के आधार पर की, पर दीर्घकाल में तो सभी साधन परिवर्तनीय है इसलिए LAC के स्वरूप की व्याख्या आनुमापिक प्रतिफल पर निर्भर करेगी। प्रारम्भिक स्थिति में जब सभी साधनों में वृद्धि लायी जाती है तो आनुमापिक प्रतिफल बढ़ता है (अर्थात् लागत प्रति इकाई घटती है) फिर उसके बाद कुछ समय के लिए स्थिर रहता है (लागत भी स्थिर होगी) फिर उसके बाद अनुमापिक प्रतिफल घटने लगता है (अर्थात् लागत प्रति इकाई बढ़ने लगती है) इसके कारण प्रारम्भ में LAC नीचे गिरेगा, फिर कुछ समय के लिए स्थिर रहेगा उसके बाद उसमे बढ़ने की प्रवृत्ति शुरू हो जायेगी। इस प्रकार LAC का स्वरूप U आकार का होगा। पर यह SAC की अपेक्षा अधिक चपटा होगा। जिसका मतलब यह हुआ कि उत्पादन की मात्रा में वृद्धि होने पर औसत लागत में कमी या वृद्धि की दर अल्पकाल की तुलना में कम होती है। ऊपर दी गयी व्याख्या से LRAC की निम्नांकित विशेषताएँ सामने आती हैं :-

(1) LAC वक्र एक स्पर्श बिन्दु पथ है जिसके प्रत्येक बिन्दु किसी न किसी SAC के स्पर्श बिन्दु को प्रदर्शित करते हैं।

(2) LAC वक्र SAC वक्रों को काटता नहीं है, स्पर्श करता है। स्पर्श तो करता है पर प्रत्येक SAC के न्यूनतम बिन्दु पर नहीं बल्कि 'अनुकूलतम

उत्पादन के स्तर' के बिन्दु पर, पहले यह SAC के गिरते हुए भाग को तथा इसके बाद दाहिनी ओर SAC के ऊपर उठते हुए भाग को स्पर्श करेगा।

(3) अल्पकालीन लागत वक्र की ही तरह इसका स्वरूप अंग्रेजी के 'U' अक्षर के समान होगा पर SAC की अपेक्षा अधिक चपटा होगा।

दीर्घकालीन सीमान्त लागत वक्र (LMC) -

चित्र 6.12 में विभिन्न SAC वक्रों को ढकने वाली LRAC वक्र के आधार पर LMC का निर्माण किया गया है। औसत तथा सीमान्त मूल्यों के सम्बन्ध के आध ार पर यह तो कहा जा सकता है कि E1 बिन्दु तक चूँकि LRAC वक्र नीचे गिर रहा है इसलिए LRMC उसके नीचे होगा तथा LRAC के न्यूनतम बिन्दु E1 से होता हुआ E1 के बाद यह LRAC के ऊपर हो जायेगा क्योंकि E1 के बाद LRAC वक्र ऊपर उठ रहा है। पर प्रश्न यह है कि यह कैसे निश्चय किया जाये कि LRMC किन बिन्दुओं से होकर जायेगा। हम इस पर विचार करेंगे।
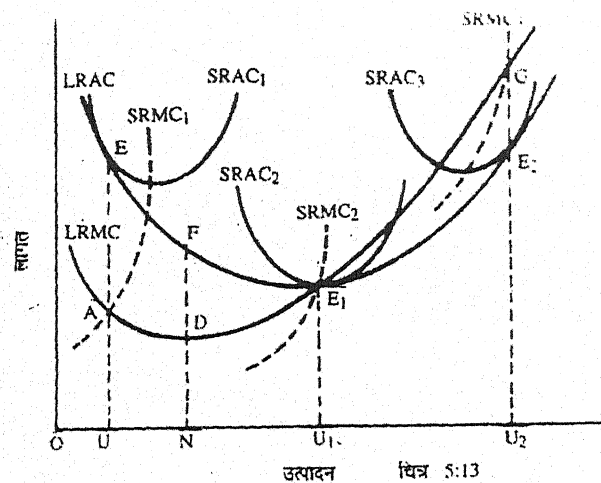
चित्र संख्या - 6.12

मान लीजिए की फर्म को OU मात्रा का उत्पादन करना है। स्पष्ट है कि वह

उस प्लाण्ट पर उत्पादन करेगी जिसको SRAC1 व्यक्त करता है। औसत लागत UE होगी, A बिन्दु पर फर्म की अल्पकालीन सीमान्त वक्र SRMC1 यह प्रदर्शित करता है कि OU की सीमान्त लागत UA है। इससे यह स्पष्ट है कि यदि दीर्घकाल में फर्म को OU वस्तुओं का उत्पादन करना हो तो दीर्घकालीन सीमान्त लागत भी नं0 1 प्लाण्ट पर UA होगी अर्थात् दीर्घकालीन सीमान्त लागत वक्र निश्चित रूप से A बिन्दु से होकर जायेगा। इसी प्रकार वह OU1 उत्पादन को SAC2 पर करेगा तथा इससे सम्बन्धित SMC से यह ज्ञात होता है कि OU1 की सीमान्त लागत U1E1 है, इसलिए LMC बिन्दु E1 से होकर जायेगा। इसी प्रकार अन्य बिन्दु भी ज्ञात किये जा सकते हैं। जिससे होता हुआ LRMC जायेगा। इस प्रकार दीर्घकालीन सीमान्त लागत वक्र (LMC) A, E1 G आदि बिन्दुओं से होकर जायेगा। इस प्रकार LMC के प्रत्येक बिन्दु LAC के किसी न किसी बिन्दु से सम्बन्धित SAC तथा उस SAC से सम्बन्धित SMC के बिन्दु से होकर जायेगा। उदाहरण के लिए LMC के बिन्दु D को लीजिए। यह ON वस्तुओं के उत्पादन के सम्बन्ध में दीर्घकालीन सीमान्त लागत प्रदर्शित करता है। फर्म ON का उत्पादन LAC के F बिन्दु पर करेगी जहाँ कोई न कोई SAC वक्र होगा तथा निश्चित रूप से SAC से सम्बन्धित SMC वक्र, D बिन्दु पर LMC के बराबर होगा।

6.1 कृषि आधारित उद्योगों का लागत पक्ष

एक दी हुई क़ीमत पर कोई उत्पादक वस्तु विशेष का कितना उत्पादन करेगा यह बात उत्पादन लागत पर निर्भर करेगी। उत्पादन लागत प्रायः तीन अर्थों में प्रयुक्त होती है।

1. द्राव्यिक लागत।
2. वास्तविक लागत।
3. अवसर लागत।

साधरणतया किसी वस्तु के उत्पादन में विभिन्न उत्पत्ति के साधनों के प्रयोग के लिए उत्पादक जो द्रव्य व्यय करता है उसका इस मिलों के सन्दर्भ में कोई महत्व नहीं है। अवसर लागत का विचार एक महत्वपूर्ण विचार है। अवसर लागत उत्पत्ति के साधनों को वितरित करने में सहायक है साथ ही यह लागत में परिवर्तन पर प्रकाश डालता है।

इन उद्योगों के लिए सबसे अधिक महत्व कुल लागत का है जो दो भागों में बटी है :-

1. स्थिर लागत।
2. परिवर्तन लागत।

1. कुल स्थिर लागत :-

कुल स्थिर लागत वह है जो स्थिर साधनों के प्रयोग में लाने के लिए लगायी जाती है। स्थिर साधन वे साधन हैं जिनकी मात्रा बहुत शीघ्रता से परिवर्तित नहीं की जा सकती है। जैसे मिल की स्थिर पूँजी अर्थात् मशीन यंत्र, भूमि व बिल्डिंग आदि।

2. कुल परिवर्तनशील लागत :-

इन उद्योग में उत्पादक वर्ग की परिवर्तनशील लागतें वे लागतें हैं जो कि परिवर्तनशील साधनों को प्रयोग में लाने के लिए की जाती हैं। कुल परिवर्तनशील लागतें अल्पकाल में उत्पादन में परिवर्तन के फलस्वरूप बदल जाती हैं। अर्थात् जब उत्पादन घटता है तो परिवर्तनशील लागतें घटती हैं और जब उत्पादन बढ़ता है तो वे बढ़ती हैं, इन उद्योगों में परिवर्तनशील लागतों में श्रमिकों की मजदूरी, कच्चे माल की कीमतें व्यय व मेन्टीनेन्स लागत सम्मिलित है। कृषि आधारित उद्योगों के उत्पादक वर्ग की कुल परिवर्तनशील लागतों में शोधार्थिनी द्वारा उत्पादक वर्ग की मेन्टीनेन्स लागतों को तालिका संख्या 6.3 में प्रदर्शित किया जायेगा।

तालिका संख्या 6.3 (अ)

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योगों में विभिन्न मिलों में नवीनीकरण लागत की परिगणना (1991-92-2003-04)

क्र.सं.	नवीनीकरण लागत रूपये में	फर्मो की संख्या	प्रतिशत
1.	0-1000	20	40 प्रतिशत
2.	1000-2000	26	52 प्रतिशत
3.	2000-3000	04	8 प्रतिशत

स्रोत :- साक्षात्कार अनुसूची।

टिप्पणी -लघु कोष्ठक में प्रदर्शित संख्या प्रदर्शित कालम संख्या का प्रतिशतांश है। सन्दर्भ सारिणी के अनुसार 50 कृषि आधारित उद्योगों में 20 अर्थात् (40 प्रतिशत) मिलों की मेन्टीनेन्स या नवीनीकरण लागत 0-1000 रूपये है। 26 मिलों अर्थात् (52 प्रतिशत) की नवीनीकरण लागत रूपये 1000-2000 रूपये है एवं 4 अर्थात् 8 प्रतिशत मिलों की नवीनीकरण लागत रूपये 2000-3000 है।

कुल लागत वह लागत है जिसमें किसी फर्म के द्वारा उत्पादन की एक निश्चित मात्रा को पैदा करने के लिए जितना व्यय करना पड़ता है।

कुल लागत - स्थिर लागत + परिवर्तनशील लागत

तालिका संख्या 6.3 (ब)

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योगों में मिलों में उत्पादित वस्तुओं की लागत का परिमाण

क्रम संख्या	वर्ष	लागत (रू0 में)
1.	1994-95	9246800
2.	1995-96	9313200
3.	1996-97	15687600
4.	1997-98	10319600

5.	1998-99	13131200
6.	1999-2000	9778000
7.	2000-2001	9005200
8.	2001-2002	9246800
9.	2002-2003	16716800
10.	2003-2004	17168400
	समग्र योग	114673600

स्रोत : साक्षात्कार सूची।

टिप्पणी – कुल-कुल स्थिर लागत + कुल परिवर्तनशील लागत।

चित्र संख्या 6.1 बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में मिलों में उत्पादित वस्तुओं की कुल लागत।

सन्दर्भ सारिणी 6.3 के अनुसार बाँदा जनपद के कृषि-आधारित उद्योग के अन्तर्गत मिलों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं के उत्पादन में दस वर्षीय अवधि में वर्ष 1992, 94, 95 में लागत घटी है। बल्कि सभी वर्षो में लागत में वृद्धि हो रही हैं। सम्भवतः दस वर्षीय में 2004 अवधि में कृषि आधारित उद्योग में क्रमशः अधिक उत्पादन कार्य हुआ।

6.2 कृषि-आधारित उद्योगों का मूल्य निर्धारण पक्ष :-

कृषि आधारित उद्योगों में मूल्य निर्धारण उत्पादन लागत (पूर्ति) तथा उपयोगिता (माँग) द्वारा निर्धारण होता है। अतः यहाँ मूल्य निर्धारण वही होता है जहाँ माँग व पूर्ति का संतुलन होता है इन उद्योगों में एक कीमत निर्धारित होती है उसी कीमत पर सभी मिलें अपना उत्पादन बेंचती हैं। मूल्य निर्धारण की स्थिति को चित्र द्वारा इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं।

यहाँ कीमत ओ पी पर निर्धारित होती है क्योंकि यहाँ ई संतुलन का बिन्दु है यहाँ

माँग व पूर्ति बराबर है।

वस्तु की मांग व पूर्ति द्वारा कीमत निर्धारित

इस प्रकार स्पष्ट है कि कृषि- आधारित उद्योगों में माँग व पूर्ति संन्तुलन पर ही मूल्य निर्धारण होता है। बाँदा जनपद में दाल मिलों में रू. 2390.00 की 1 कुन्टल दाल बेची जाती है। चावल मिलों में रू0 1200.00 का 1 कुन्टल चावल बेचा जाता है। तेल मिलों में रू0 2500.00 में 1 कुन्टल तेल बेचा जाता है। तथा आटा मिल में रू0 800.00 में 1 कुन्टल आटा बेचा जाता है। मसाला मिल में रू0 2000.00 के हिसाब से मसाला बेचा जाता है। लाही उद्योग में रू0 1000.00 में 1 कुन्टल लाही बेची जाती है। अतः इस प्रकार मिलों में मूल्य निर्धारण किया गया है।

6.3 कृषि-आधारित उद्योगों का विक्रय पक्ष :-

इन कृषि आधारित उद्योगों में कार्यरत मिलों में उत्पादित माल का विक्रय जनपद के अन्दर तथा देश के विभिन्न शहरों में किया जाता है। इसमें लखनऊ, कानपुर, हमीरपुर, इलाहाबाद, घाटमपुर आदि प्रमुख है। यदि विक्रय मूल्य लागत से अधिक होता है तो लाभ प्राप्त होता है। प्रत्येक उत्पादक का यह उद्देश्य होता है कि उत्पादन को लागत कम से कम रखे और अधिक से अधिक विक्रय मूल्य प्राप्त करे। परन्तु इन मिलों में विक्रय मूल्य लागत से अधिक रहा है। कृषि आधारित उद्योगों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है और इन उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं की विक्रय मात्रा में निरन्तर वृद्धि हो रही है, बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योग के अन्तर्गत कार्यरत 50 मिलों के द्वारा बेचे गये उत्पादन की मात्रा तथा बेचने से प्राप्त विक्रय मूल्य को तालिका संख्या 6.4 में प्रदर्शित किया जा सकता है।
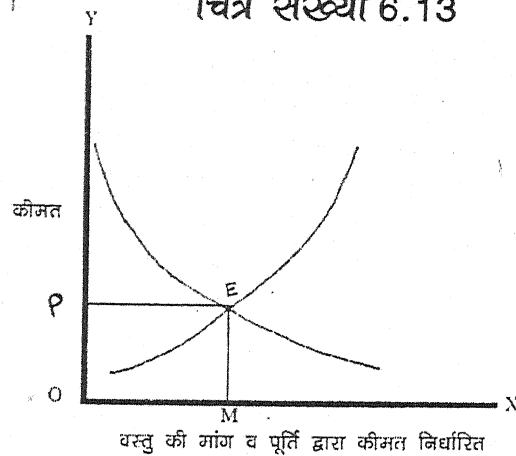
रेखाचित्र संख्या - 6.14

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योगों में मिलों में उत्पादित वस्तुओं की कुल लागत
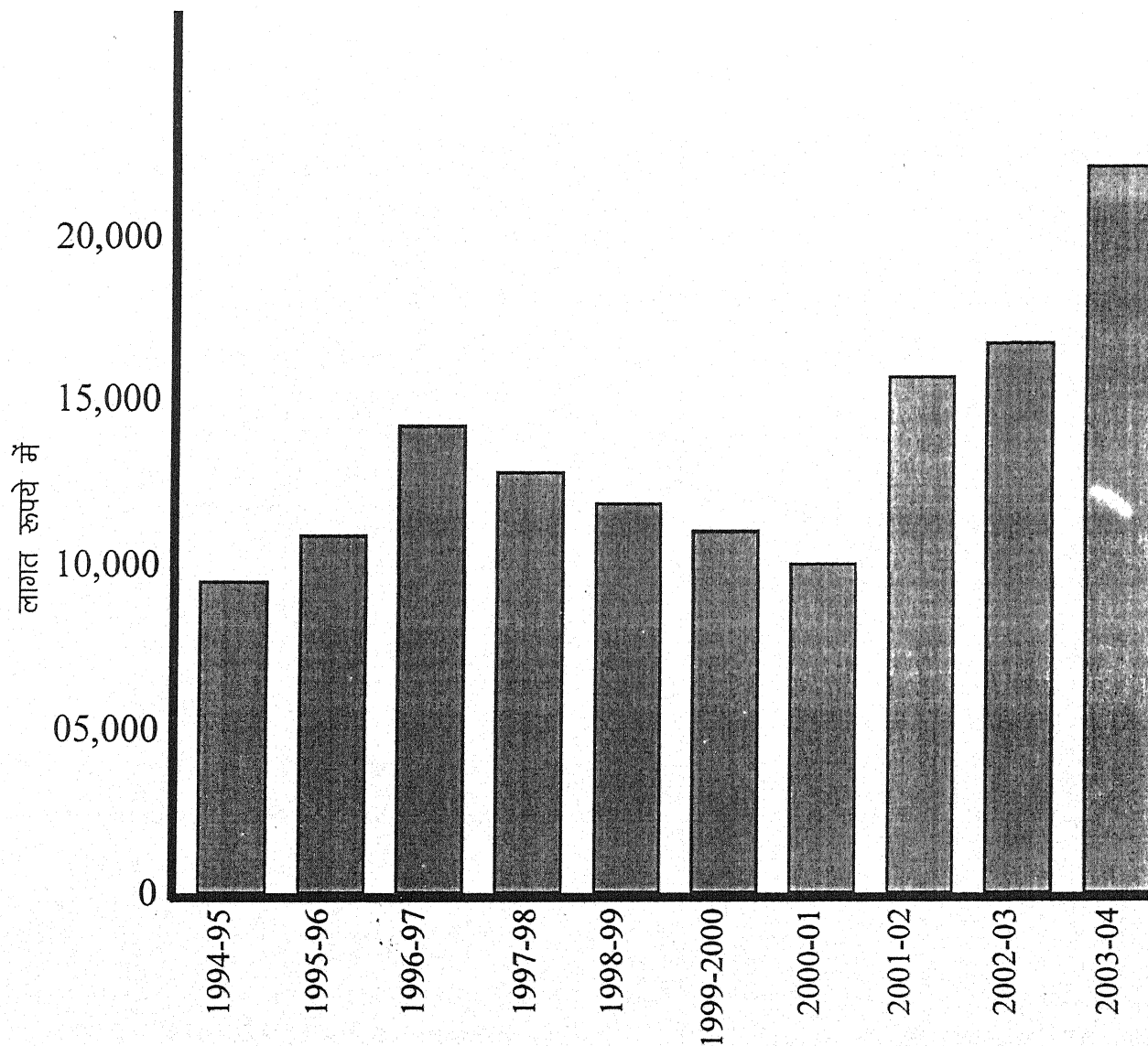
पैमाना 1" = 5000,000 रूपये

तालिका संख्या 6.4

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में कार्यरत 50 मिलों के द्वारा बेचे गये उत्पादन की मात्रा तथा उससे प्राप्त विक्रय मूल्य दस वर्षीय अवधि में (1994-95-2003-04)

क्र.सं. वर्ष	बेंचे गये उत्पाद मात्रा (कुन्तल में)	उत्पाद से प्राप्त विक्रय मूल्य (रू0में)
1. 1994-95	22,500	96,75,000.00
2. 1995-96	23,700	1,01,91,000.00
3. 1996-97	41,900	1,80,17,000.00
4. 1997-98	22,900	98,47,000.00
5. 1998-99	34,200	1,47,06,000.00
6. 1999-2000	24,100	1,03,63,000.00
7. 2000-01	21,700	93,31,000.00
8. 2001-02	22,500	96,75,000.00
9. 2002-03	45,000	1,93,50,000.00
10. 2003-04	21,300	91,59,000.00

स्रोत : साक्षात्कार सूची

उपरोक्त सारिणी 6.4 से स्पष्ट है कि 50 मिलों में सबसे अधिक उत्पादन दसवर्षीय अवधि में सन् 2002-03 में बेचा गया और सबसे अधिक विक्रय मूल्य भी 2002-03 में 19350,000.00 रूपये प्राप्त हुआ और सबसे कम उत्पादन 2003-04 में बेचा गया और सबसे कम विक्रय मूल्य 91,59,000.00 रूपये में प्राप्त हुआ। इस प्रकार स्पष्ट है कि मिलों द्वारा उत्पादित माल को जनपद के अन्दर मण्डियों, बाजारों में तथा जनपद के बाहर अनेक नगरों में बेचा जाता है।

6.4 कृषि आधारित उद्योगों का आगम पक्ष :-

आर्थिक क्रिया में आगम ही उत्पादन का प्रेरक होता है क्योंकि किसी भी उत्पादक का उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना होता है। चूँकि लाभ उत्पादन लागत तथा विक्रय राशि के अन्तर के बराबर होता है इसलिए अधिकतम लाभ इस बात पर निर्भर करेगा कि यथासम्भव लागत कम की जाये तथा बिक्री अधिकतम हो अर्थशास्त्री आगम को तीन अर्थों में प्रयोग करते हैं।

1. कुल आगम
2. औसत आगम
3. सीमान्त आगम

इस उद्योग के सन्दर्भ में मुख्य रूप से कुल आगम को ही लिया जाता है। एक मिल मालिक अपने उत्पादन की निश्चित मात्रा बेचकर जो कुल धनराशि प्राप्त करती है उसे कुल आगम कहते हैं। या कुल आगम को दूसरे शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं यदि वस्तु की प्रति इकाई मूल्य की विक्रय की गई वस्तु की ईकाइयों की संख्या से गुणा कर दिया जाये तो गुणनफल कुल आगम प्रदर्शित करेगा।

कुल आगम - प्रति इकाई मूल्य वस्तु की बेची गयी कुल इकाईयों की संख्या इस गुणनफल को इस प्रकार रखा जा सकता है।

$$SP = Pn \times Qn$$

उपरोक्त समीकरण में SP कुल आगम या बिक्रीगत आय क्योंकि आगम का तात्पर्य ही बिक्रीगत आय होती है। Qn बेंची गई कुल इकाईयों की संख्या और Pn प्रति इकाई मूल्य को प्रदर्शित करता है। यदि प्रति इकाई औसत आगम की गणना की जाय तो वह Pn के तुल्य होगी अर्थात्

$$SPa = Qn.Pn = Pn / Qn$$

लेकिन कुल विक्रय आय SP अथवा औसत आगम SPa की धारणा महत्वपूर्ण

नहीं है जितनी कि कुल विशुद्ध आगम की धारणा यहाँ उल्लेखनीय है कि विशुद्ध आगम के परिकलन में कुल आगम में से मिलो द्वारा दी जाने वाली कर राशि घटा दी जायेगी अर्थात् -

NSP = Qn.Pn-t

उपरोक्त समीकरण में NSP कुल विशुद्ध आगम है तथा एवं क्रमशः बेची गई इकाईयों की संख्या प्रति इकाई मूल्य तथा कर राशि है।

तालिका संख्या - 6.5

बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों में मिलों को प्राप्त कुल आगम की दस वर्षीय स्थिति (1994-95-2003-04)

क्र.सं.	वर्ष	बेचे गये उत्पादन मात्रा (कु0 में)
1.	1994-95	9675000
2.	1995-96	10191000
3.	1996-97	18017000
4.	1997-98	9847000
5.	1998-99	14706000
6.	1999-2000	10363000
7.	2000-2001	9331000
8.	2001-2002	9675000
9.	2002-2003	19350000
10.	2003-2004	9159000
	समग्र योग	120314000

स्रोत - साक्षात्कार सूची

अध्ययन में प्रस्तुत जनपद में कृषि-आधारित उद्योग में मिलों को प्राप्त कुल आगम की स्थिति को चित्र संख्या 6.14 में प्रदर्शित किया गया है।

रेखाचित्र संख्या - 6.15

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योगों में मिलों को प्राप्त कुल आगम
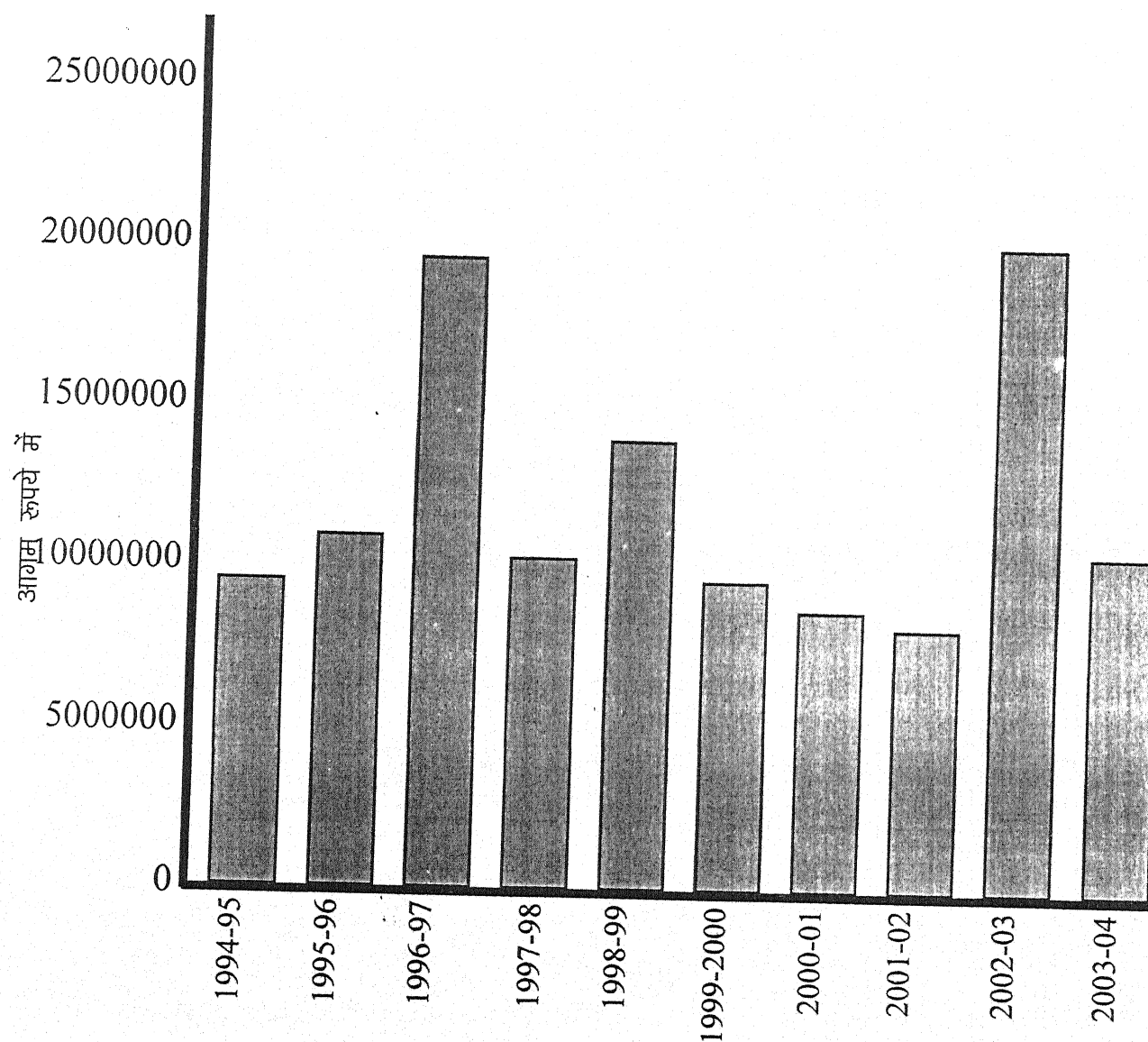
पैमाना 1" = 5000,000 रूपये

टिप्पणी कुल आगम – प्रति इकाई मूल्य X वस्तु की बेची गयी कुल इकाइयों की संख्या

चित्र संख्या 6.4 बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग में मिलों में प्राप्त कुल आगम।

सन्दर्भ तालिका संख्या – 6.5 के अनुसार बाँदा जनपद के कृषि-आधारित उद्योगों में 50 मिलों की 2003-04 अवधि में क्रमशः 1996, 1997, 1999, 2003 में कुल आगम बढ़ रही है। तथा 1998,2000, 2001, 2002, 2003 में आगम घट रहा है। कृषि आधारित उद्योग की 50 मिलों में प्रत्येक को औसतन 22500 रू0 का आगम प्रतिवर्ष प्राप्त हुआ है। जो लागत की तुलना में अधिक है।

अतः सम्पूर्ण सारिणी पर दृष्टिपात करने से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योग के उत्पादक वर्ग की आय मध्यम स्तरीय है।

सीमान्त आगम :-

किसी उद्योग में फर्म द्वारा प्रति इकाई में वृद्धि के परिणामस्वरूप कुल आगम में होने वाली वृद्धि को सीमान्त आगम कहते है।

अतः आगम की धारणा से स्पष्ट होता है कि जनपद में कृषि आधारित उद्योग लगाना लाभकारी है।

6.5 कृषि आधारित उद्योगों का प्रतिफल पक्ष :-

राष्ट्रीय आय का वह भाग जो वितरण की प्रक्रिया में साहसियों को प्राप्त होता है। लाभ स्वभाव में अवशेष होता है। अर्थात् अन्य सभी साधनों को पुरस्कार देने के बाद कृषि आधारित उद्योग में कार्यरत मिल के मालिकों को जो शेष बचता है वह लाभ है। लाभ को दो अर्थो में प्रयोग करते हैं।

1. आर्थिक या विशुद्ध लाभ

2. कुल लाभ।

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योगों में दस वर्षीय (1994-95 से 2003-2004) लाभ पक्ष का विश्लेषण -

बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग के सम्बन्ध में इस पक्ष पर विचार कर लेना उचित होगा कि उत्पादन लागत के बावजूद भी इस उद्योग में लाभ की स्थिति क्या है।

लाभ की धारणा का एक अर्थ शास्त्रीय धारणा है। इसकी एक सैद्धान्तिक व्यवस्था है सन्दर्भवश यह कहा जा सकता है कि फर्म के संतुलन विश्लेषण में लाभ कुल आगम और कुल लागत का अन्तर है। लाभ एक उद्योगपति या साहसी को उत्पादन के क्षेत्र में जोखिम उठाने और अनिश्चितता वहन करने के लिए प्राप्त होने वाला प्रतिफल है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में लाभ मापन उसके प्रकृति विश्लेषण की उपरोक्त व्याख्या से नहीं ली गयी है। वरन व्यवहारिक रूप से बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योग के अन्तर्गत कुल विशुद्ध विक्रयगत आय तथा कुल परिव्यय का अन्तर ही लाभ का मापन होगा।

उपरोक्त दृष्टिकोण से इस उद्योग में प्राप्त होने वाले लाभ की मात्रा दसवर्षीय 1994-95 से 2003-2004 अवधि में निम्नवत रही है। जिसे सारिणी संख्या 6.6 व चित्र संख्या 8.5 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या 6.6
बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में लाभ की परिगणना - 1994-95 से 2003-2004

क्रम संख्या	वर्ष	लाभ (रू0 में)
1.	1994-95	428200
2.	1995-96	877800
3.	1996-97	2329400
4.	1997-98	-----
5.	1998-99	1574800
6.	1999-2000	585000
7.	2000-2001	325800

8.	2001-2002	428200
9.	2002-2003	2633200
10.	2003-2004	-----
	समग्र योग	127224400

स्रोत : साक्षात्कार अनुसूची

टिप्पणी - लाभ - कुल विशुद्ध विक्रयगत आय-कुल परिव्यय

जिन वर्षों में खाने खाली हैं उसमें हानि हो रही है।

उपरोक्त सारिणी संख्या 6.5 से सुस्पष्ट है कि बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योग एक लाभप्रद उद्योग है जनपद में दसवर्षीय 1994-04 अवधि में लाभ की मात्रा सन् 1997, 1999, 2000,2001 में घट रही है। सर्वाधिक लाभ की मात्रा 2002-03 में है रू0 26,33,200.00 का। 1998-2004 में हानि हो रही है। 1997-98 में रू0 4,72,600.00 की तथा 2003-04 में रू0 80,09,400.00 हानि हुयी है।

निश्चित रूप से बाँदा जनपद में इस उद्योग के विकास अथवा उत्पादन में लाभोत्पादन की व्यापक सम्भावनाएँ सन्निहित हैं।

किसी भी उद्योग में लाभ के साथ हानि भी होती है। किन्तु बाँदा जनपद के कृषि आधारित उद्योग में किसी प्रकार की हानि होती ही नहीं है। इस प्रकार यहाँ लाभ की अवधारणा को स्पष्ट करते हैं।

रेखाचित्र संख्या 6.16

बाँदा जनपद में संचालित कृषि-आधारित उद्योग में मिलों में लाभ की परिगणना (1994-2004)

टिप्पणी - जो वर्ष खाली हैं उसमें हानि हो रही है। हानि के वक्र को ऋणात्मक रूप में दिखाया गया है।

पैमाना 1" = 5000,000 रूपये

सप्तम अध्याय
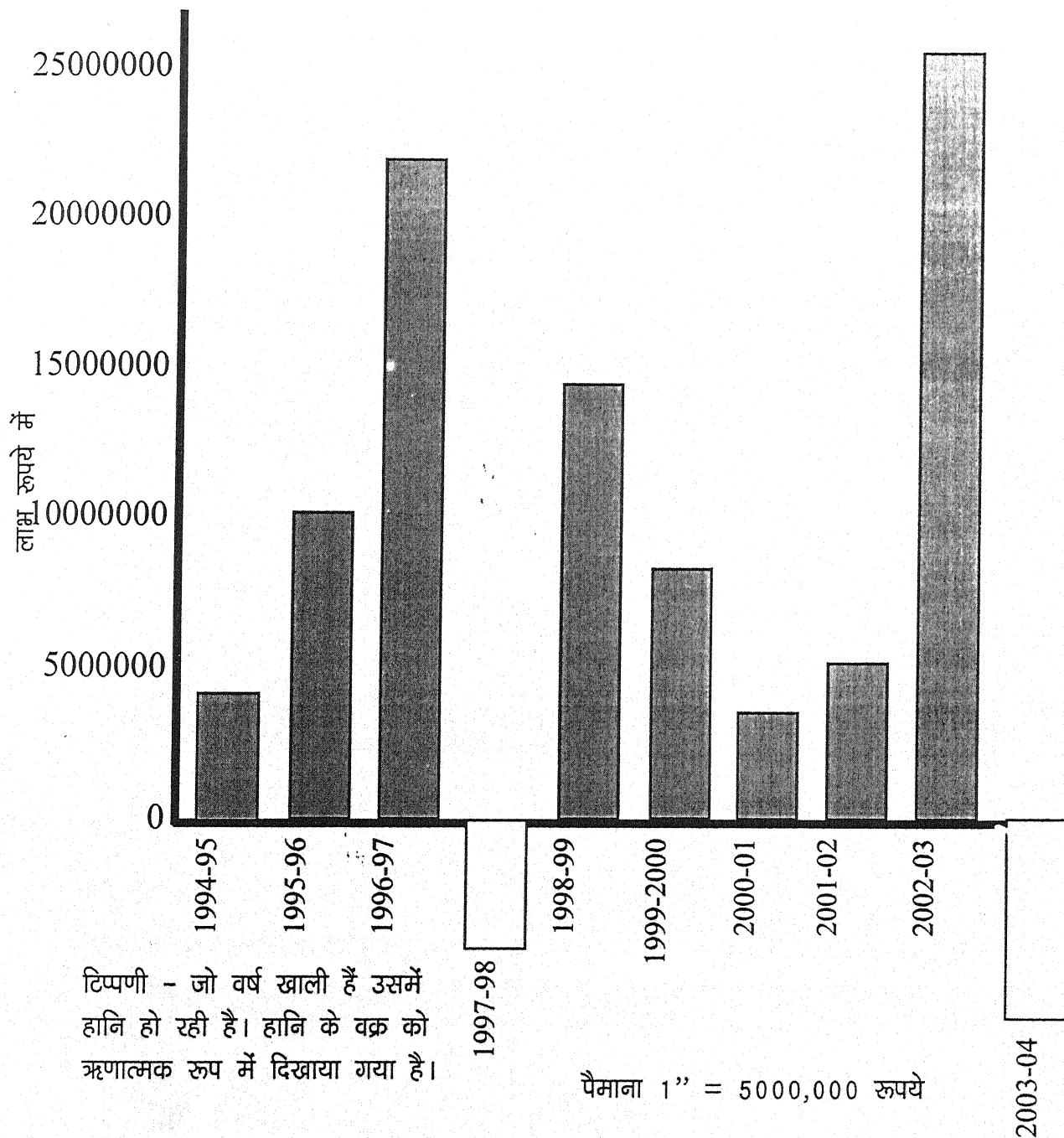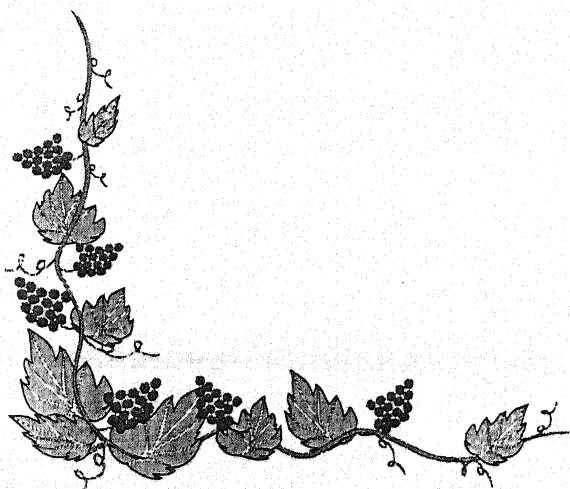
सप्तम अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों का समस्यात्मक पक्ष

7.1 कृषि-आधारित उद्योगों की वित्त पोषण पक्ष की समस्यायें।

7.2 कृषि-आधारित उद्योगों की प्रशासनिक पक्ष की समस्यायें।

7.3 कृषि-आधारित उद्योगों की कच्चा माल एवं श्रम आपूर्ति पक्ष की समस्यायें।

7.4 कृषि-आधारित उद्योग की शक्ति के साधनों की समस्यायें।

7.5 कृषि-आधारित उद्योगों की प्रबंधकीय समस्यायें।

स्प्तम अनुक्रम

बाँदा जनपद में कृषि- आधारित उद्योगों का समस्यात्मक पक्ष

"If is in the agriculture sector that the battle for long term economic development will be won or lost."

- Gunnar Mysdel

बाँदा जनपद में संचालित उद्योग अनेक समस्याओं से घिरे हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से बाँदा जनपद की उद्योग की समस्याओं को निम्न भागों में विभाजित कर सकतें हैं।

1. कृषि आधारित उद्योगों की वित्त पोषण पक्ष की समस्यायें।
2. कृषि आधारित उद्योगों की प्रशासनिक पक्ष की समस्यायें।
3. कृषि आधारित उद्योगों की कच्चा माल एवं श्रम आपूर्ति पक्ष की समस्यायें।
4. कृषि आधारित उद्योगों की शक्ति के साधन की समस्यायें।
5. कृषि आधारित उद्योगों की प्रबन्धकीय समस्यायें।

7.1 कृषि आधारित उद्योगों की वित्त पोषण पक्ष की समस्यायें:-

1. बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों में मालिकों या प्रबंधकों के पास वित्त की समुचित व्यवस्था नहीं है। नई विधि से उत्पादन करने के लिए आवश्यकतानुसार पूंजी न होने के कारण अधिकांश फर्म के प्रबंधक धनाभाव के कारण मिलों में पुरानी मशीनों एवं विधियों का प्रयोग करते हैं। जिससे फर्म की उत्पादन क्षमता घट जाती है।
2. सरकार की ओर से इन उद्योगों में लगे व्यक्तियों के लिए अनुदान या कम ब्याज पर धन की व्यवस्था नहीं है। जिसके कारण फर्म के प्रबन्धकों को वित्त सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
3. यदि सरकार वित्त की कोई व्यवस्था करती भी है तो स्थानीय बैंकों की

ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया लम्बी होती है जिससे इन उद्योगों के प्रबन्ध
क इस सुविधा का लाभ सही समय पर नहीं उठा पाते हैं।

4. इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा प्रदत्त वित्तीय सहायता उचित व्यक्तियों को नहीं मिल पाती है यह लाभ उन व्यक्तियों को प्राप्त होता है, जिनकी बैंक के अधिकारियों एवं अनुदान प्रदान करने वाले अधिकारियों के पास पहुँच है।

6. सरकार द्वारा वित्तीय सहायता न मिलने के कारण उद्योगों के प्रबधंक महाजनो एवं साहूकारों से ऋण या वित्त प्राप्त करते हैं इसलिए उत्पादक अच्छी प्रकार से विकास नहीं कर पाते हैं।

7.2 कृषि- आधारित उद्योगों की प्रशासनिक पक्ष की समस्यायें -

बाँदा जनपद के कृषि- आधारित उद्योग में निम्नलिखित प्रशासनिक समस्यायें होती है।

1. जिला उद्योग केन्द्र से रजिस्ट्रेशन कराने में असुविधा होती है।
2. प्रशासन की ओर से कृषि- आधारित उद्योगों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।
3. सरकार की ओर से इन उद्योगों के सबंध में कोई नीति नहीं बनाई गई जिसका लाभ इन उद्योगों को मिल सके।
4. जिला उद्योग केन्द्र द्वारा इन कृषि- आधारित उद्योगों के मालिकों को किसी प्रकार की सुविधा नहीं मिल पाती है। किसी काम के लिए मिल मालिकों को जिला उद्योग केन्द्र के चक्कर लगाने पड़ते हैं।

7.3 कृषि- आधारित उद्योगों की कच्चे माल एवं श्रम आपूर्ति पक्ष की समस्यायें :-

बाँदा जनपद के कृषि आधारित उद्योगों में कच्चा माल एवं श्रम आपूर्ति पक्ष

सम्बन्धी निम्नलिखित समस्यायें हैं-

1. इन उद्योगों में प्रयुक्त कच्चा माल पर्याप्त मात्रा में जनपद में उपलब्ध न होने के कारण उत्पादकों या प्रबन्धकों को कच्चा माल अन्य नगरो से मंगाना पड़ता है। जिससे उत्पादकों को कच्चा माल मँगाने में अधिक लागत और अधिक समय लग जाता है। अतः नये उद्यमी हतोत्साहित होते हैं।
2. सरकार कच्चा माल सस्ती दर पर उपलब्ध भी कराती है तो इसकी सुविधा प्रत्येक मिल मालिकों को नहीं मिल पाती है।
3. कच्चा माल लाने के लिए उचित परिवहन का साधन नहीं है।
4. इन उद्योगो के लिए अगर जनपद के अन्दर कच्चा माल मिल भी गया तो वह भी अच्छी किस्म का नहीं होता है। जिससे उत्पादन विधायन में असुविधा होती है।
5. जनपद में प्रशिक्षित श्रमिकों की कमी है इन उद्योगों में मजदूरी कम होने पर शिक्षित बेरोजगार रूचि नही लेते है।
6. इन उद्योगों में श्रमिकों के हितो का ध्यान नहीं रखा जाता है कम मजदूरी पर अधिक काम लिया जाता है।
7. इन उद्योगों में श्रमिकों को आवास की सुविधा भी नहीं दी जाती है।
8. इन उद्योगों में श्रमिकों का वेतन भी छुट्टी लेने पर काट लिया जाता है।

7.4 कृषि- आधारित उद्योगों की शक्ति के साधनों की समस्यायें :-

बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों के समक्ष शक्ति के साधनों की समस्यायें भी अपना मुहँ बाये खड़ी है शक्ति के साधनों से संबन्धी समस्यायें निम्नलिखित है-

1. विद्युत आपूर्ति बीच-बीच में बन्द हो जाने से मशीन सुचारू रूप से नहीं चल पाती है जिससे उत्पादन कम होता है।

2. जल की आपूर्ति भी इन उद्योगों को बराबर नही मिल पाती है जिससे समस्या उत्पन्न होती है।

3. कुछ मशीने जो इन उद्योगों में उपयोग की जाती है वह डीजल से चलती है उनके लिए पर्याप्त मात्रा में डीजल नहीं मिल पाता है।

4. सरकार विद्युत की आपूर्ति में ध्यान नहीं दे रही है दिन व रात किसी समय भी जनपद में विद्युत की कटौती होती रहती है जिसका प्रभाव उत्पादन में पड़ता है।

5. मशीनों को सुचारू रूप चलाने के लिए जनपद के अन्दर तकनीकी सुविधायें भी उपलब्ध नहीं है।

7.5-कृषि - आधारित उद्योगों की प्रबन्धकीय समस्यायें -

बाँदा जनपद में कृषि- आधारित उद्योगों की निम्नलिखित प्रबन्धकीय समस्यायें हैं जो इस प्रकार है-

1. इन उद्योगों का प्रबंध ठीक से नहीं किया जाता है जिससे उद्योग को चलाने में असुविधा होती है।

2. ये उद्योग अधिकतर निजी व्यक्तियों द्वारा चलाये जाते हैं इसलिये निजी स्वामित्व होता है।

3. सरकार इन उद्योगों में कोई विशेष ध्यान नही दे रही है।

4. जनपद में इन उद्योगों में दो या चार ब्यक्ति होते हैं जो पूरी फर्म को चलाते है किसी-किसी फर्म में केवल मालिक एवं एक श्रमिक होता है जिससे उत्पादन सुचारू रूप से नहीं हो पाता है इस ओर सरकार का ध्यान नहीं जा रहा है।

5. प्रबंध में श्रमिकों की संख्या कम होती है जिससे उनसे अधिक काम लिया जाता है और काम न करने पर निकाल दिया जाता है।

6. प्रबंध व्यवस्था को चलाने में इन उद्योगों के प्रबंधकों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अन्य समस्यायें-

बाँदा जनपद में इन उद्योगों में अन्य समस्यायें निम्नलिखित है।

1. परिवहन के साधन पर्याप्त मात्रा में न होने से कच्चा माल लाने में असुविधा होती है।
2. जनपद में प्रशिक्षण की सुविधा न होने से श्रमिकों को असुविधा होती है।
3. जनपद के कृषि- आधारित उद्योगों को विकसित करने के लिये शोध कार्य की आवश्यकता है सरकार द्वारा शोधार्थियों को कोई सुविधा नहीं दी जाती है।

उपरोक्त समस्याओं के संदर्भ में शोधार्थिनी द्वारा साक्षात्कार अनुसूची द्वारा उद्योगों के प्रबन्धकों से उनकी जानकारी प्राप्त की गई है। तालिका संख्या 7.1 एवं चित्र संख्या 7.1 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या -7.1

बाँदा जनपद में संचालित कृषि- आधारित उद्योगों के प्रबंधकों द्वारा अनुमानित कठिनाईयाँ

क्र. सं.	सौविध्य	हॉ	नहीं
1.	कच्चे माल की समस्या	20	30
2	श्रमिक समस्या	05	45
3	प्रशासनिक समस्या	10	40
4	वित्तीय समस्यें	30	20
5	विद्युत आपूर्ति की समस्यायें	40	10
6	अन्य समस्यायें	02	04

स्रोत-साक्षात्कार अनुसूची

रेखाचित्र संख्या 7.1 जनपद के केन्द्र आधारित उद्योगों, फर्मो द्वारा अनुमानित कठिनाईयाँ सारणी संख्या 7.1 में जनपद की 50 मिलों में समस्याओं को हॉ/नहीं में व्यक्त किया गया है। जनपद में कृषि आधारित उद्योगों में सर्वाधिक 40 मिलों को विद्युत की समस्या है।

रेखाचित्र संख्या 7.1
बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योग
फर्मो द्वारा अनुमानित कठिनाइयाँ
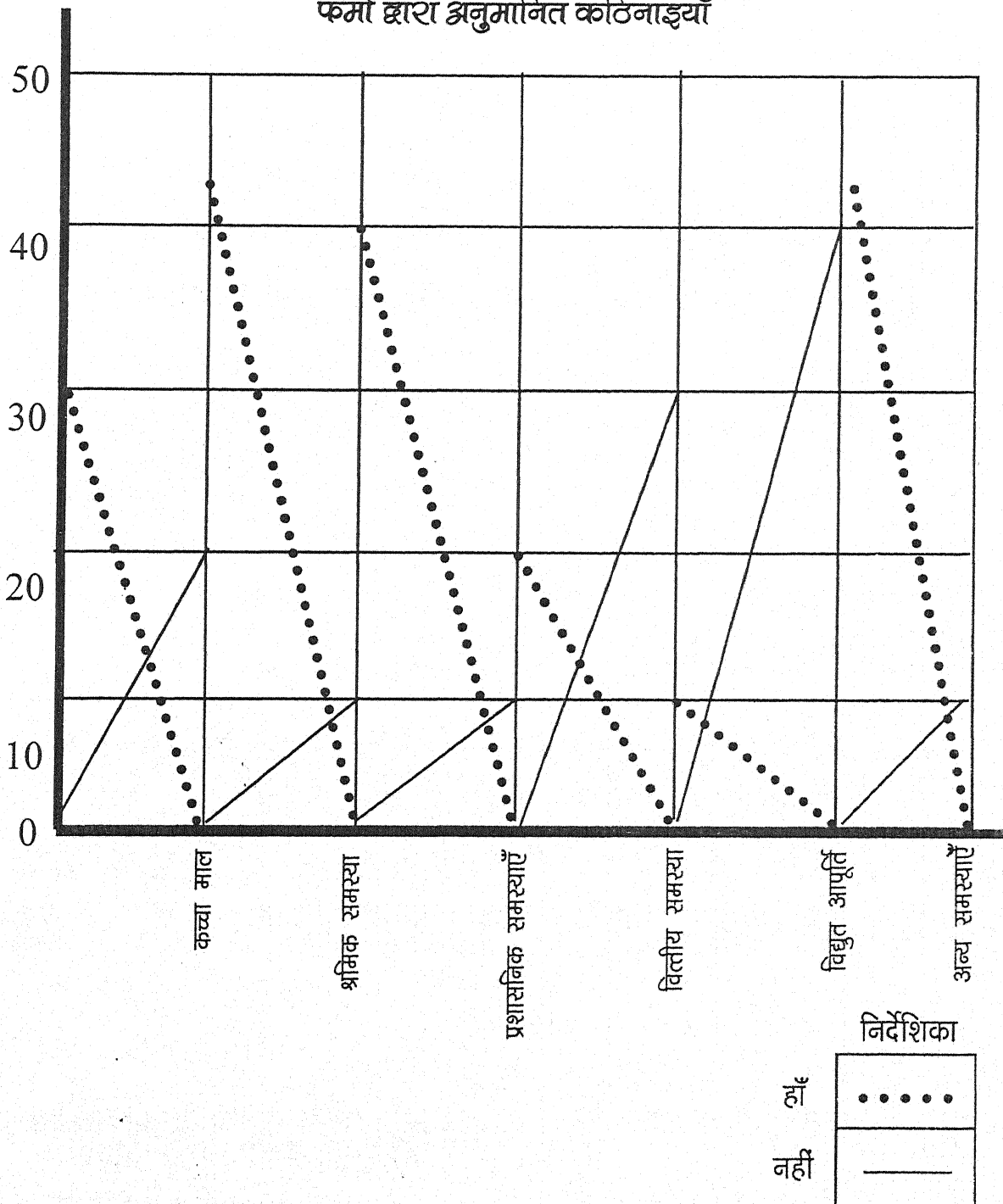
अष्टम अध्याय

अष्टम अनुक्रम

निष्कर्ष एवं सुझाव

8.1 निष्पादन एवं समस्याओं का मूल्यांकन

8.2 संकल्पनाओं का सत्यापन

8.3 अध्ययनगत निष्कर्ष बिन्दु

8.4 कतिपय सम्भावित कृषि-आधारित उद्योगों के नियोजन हेतु सुझाव

8.5 आगामी शोध की दिशायें

अष्टम अनुक्रम

निष्कर्ष एवं सुझाव

"Since verbal science has no final end, since life is short and obstacles impend, let central facts be picked and fixed as always the milk with water mixed."

- The Panchtantra

बाँदा जनपद में संचालित उद्योगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है किसी भी अनुसंधान में समस्याओं का मूल्याकंन व समीक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि मूल्याकंन के माध्यम से ज्ञात हो सकता है कि मिल मालिको द्वारा बतायी गयी समस्यायें वास्तविकता में है, कि केवल दिखावटी रूप में है। और कौन सी समस्यायें वास्तविक में हैं और कौन सी समस्यों उद्योग के उत्पादन में अधक बाधक हो रही हैं। तथा किन समस्यारओं द्वारा उत्पादन ऋणात्मक हो रहा है। अतः मिल मालिको द्वारा बतायी गयी समस्याओं का मूल्याकंन इस प्रकार से करते हैं और उन समस्याओं के संबध में सुझाव भी प्रस्तुत है।

8.1 निष्पादन एवं समस्याओं का मूल्याकंन :-

1. बाँदा जनपद में संचालित कृषि-उद्योगों में कार्यरत मालिकों से ज्ञात हुआ कि उनकी प्रमुख समस्या कच्चे माल की है। उनको कच्चा माल आसानी से उपलब्ध नहीं हो रहा है यह समस्या मिल मालिकों के समक्ष वास्तविक रूप में है क्योंकि पहले जनपद में कृषि आधारित उद्योग कम थे तो कच्चा माल आसानी से मिल जाता था परन्तु अब इनकी संख्या बढ़ जाने से कच्चा माल मिलने में कठिनाई हो रही है कच्चा माल न मिलने से मिलों का उत्पादन घट रहा है।

   कच्चे माल की समस्या को अन्य पास के नगरों से कच्चा माल मँगाकर दूर किया जाये तथा कृषकों को चावल दाल तथा लाही उत्पादन

बढ़ाना चाहिए जिससे मिल मालिकों को कच्चा माल मिल सके।

2. बाँदा जनपद में कृषि– आधारित उद्योगों के अर्न्तगत कार्यरत मालिकों को वित्त की समस्या का सामना करना पड़ता है। वित्त की समस्या इन उद्योगों के लिये वास्तविक समस्या नहीं है। क्योंकि आजकल उद्योगों के लिये सरकार ने वित्तीय व्यवस्था के लिये इतनी योजनाएँ शुरू कर दी है जिनके माध्यम से ऋण प्राप्त करके वित्त की समस्या को दूर किया जा सकता है। यह समस्या अब इन उद्योगों में कम हो रही है।

3. बाँदा जनपद में इन उद्योगों के अन्तर्गत कार्यरत मिल मालिकों के समक्ष श्रम आपूर्ति की समस्या है जो श्रमिक मिलते भी हैं वो निरक्षर होते हैं अतः उत्पादन कार्य को ठीक से नहीं कर पाते हैं। उनको इन मिलों में उपयोग होने वाली मशीनों को चलाने में परेशानी होती है। क्योंकि उनको तकनीकी ज्ञान नहीं होता है। यह समस्या वास्तविकता में इन उद्योगों के समक्ष है क्योंकि इस जनपद के अन्दर जो श्रमिक मिलते भी है वे पूर्ण रूप से निरक्षर होते हैं। इसका प्रभाव उत्पादन पर भी पड़ता है। वैसे अब यह समस्या कम हो रही है क्योंकि आजकल धीरे–धीरे शिक्षित श्रमिक आसानी से कम मजदूरी पर मिलने लगे हैं।

इस समस्या को श्रमिकों को प्रशिक्षित करके दूर कर सकतें है तथा श्रमिकों को उनके अनुसार मजदूरी देकर आवास की सुविधा देकर इससे छुट्कारा पाया जा सकता है।

4. इन उद्योगों में कार्यरत मिल मालिकों द्वारा ज्ञात हुआ है कि उनके समक्ष शक्ति के साधनों की समस्या है। क्योंकि विद्युत आपूर्ति जनपद के अन्दर बीच–बीच में बन्द हो जाती है यह समस्यायें वास्तविक रूप में मिल मालिकों के समक्ष है, क्योंकि जनपद में विद्युत आपूर्ति ठीक नहीं हैं और

विद्युत के बिना मशीन नहीं चल पाती है और उत्पादन कार्य रुक जाता है जल आपूर्ति भी ठीक न होने से उत्पादन कार्य सुचार रूप से नहीं हो पाता है। वैसे अब यह समस्या कम हो रही है क्योंकि अधिकतर मिल मालिक जनरेटर द्वारा विद्युत की आपूर्ति कर रहे हैं। वैसे इस समस्या को बड़े हार्स पावर का जनरेटर लगा कर दूर किया जा सकता है।

5. इस उद्योग के अन्तर्गत कार्यरत मिल मालिकों के समक्ष प्रशासनिक समस्यायें भी उत्पन्न हो जाती है जैसे जिला उद्योग केन्द्र में रजिस्ट्रेशन कराने में असुविधा होती है। तथा वित्तीय सहायता प्राप्त करने में जिला केन्द्र के अधिकारी मदद नहीं करते है तथा ठीक से परामर्श नहीं देते हैं तथा इनको रजिस्ट्रेशन कराने में असुविधा होती है।

इस समस्या की ओर सरकार को ध्यान देना चाहिये तथा प्रशासनिक व्यवस्था ठीक करना चाहिये तथा इन उद्योगों के सम्बन्ध में कोई नीति बनानी चाहिए।

6. इन उद्योगों में कार्यरत मालिकों के समक्ष प्रबंधकीय समस्यायें भी होती है इन उद्योगों में प्रबंध व्यवस्था ठीक है। राज्य में अधिकतर मिलें निजी स्वामित्व में चल रही हैं। जनपद के अन्दर सभी मिलें निजी स्वामित्व में चल रही हैं कोई भी सरकार के हस्ताक्षेप में नहीं है एक मवई कताई मिल सरकारी थी जो अब बन्द चल रही है।

अतः निजी सवामित्व में चलने के कारण मिल मालिक स्वयं प्रबन्ध का कार्य करते हैं । और अपने हिसाब से मिलों की प्रबंध व्यवस्था चलाते है जिससे उत्पादन कार्य ठीक है सभी कार्य स्वयं देखते है इसी कारण श्रमिक भी असंतुष्ट रहते हैं क्योंकि मिल मालिक उनको कार्य के अनुसार वेतन भी नहीं देते है यह समस्या वास्तविक नहीं है। इस समस्या का

समाधान मिल मालिक अपनी प्रबंध व्यवस्था ठीक करके कर सकते हैं।

7. इसके अतिरिक्त मिल मालिकों को परिवाहन और विपणन की समस्या है परिवहन के लिए उपयुक्त साधन न होने से कच्चा माल लाने व तैयार माल बेचने में कठिनाई होती है। यह समस्या वास्तविक रूप में है।

अतः सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिये तहसीलों व विकास खण्डों में मण्डियों की व्यवस्था करनी चाहिये जिससे तैयार माल वहाँ बेचा जा सके और उत्पादकों को नगर से दूर न जाना पर्डे तथा परिवाहन के लिये तहसीलों व विकास खण्ड़ों से नगर तक उपयुक्त साधन की व्यवस्था करनी चाहिये।

इस प्रकार बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों के समक्ष उपस्थित समस्यायें ऋणात्मक है जो दिनो दिन कम हो रही है। कच्चे माल की समस्या विद्युत समस्या, प्रशासनिक समस्यायें,श्रम आपूर्ति समस्यायें वास्तविकता में इन मिल मालिकों के समक्ष है। इन समस्यायों की ओर सरकार को भी ध्यान देना चाहिए।

8.2 संकल्पनाओं का सत्यापन :-

संकल्पनाओं का सत्यापन शोध-प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण अंग है। संकल्पनाओं के सत्यापन हेतु अनेक सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है, लेकिन प्रस्तुत शोध ा-प्रबन्ध में संकल्पनाओं के सत्यापन हेतु मतुख्यतः सांख्यिकीय विधि काई वर्ग परीक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। काई वर्ग परीक्षण का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है :-

काई वर्ग जो कि वास्तविक एवं प्रत्याशित आवृत्तियों के अन्तर का एक माप है, का मुख्य उद्देश्य वास्तव में दो गुणों की स्वतंत्रता की जाँच करना है। इस सांख्यिकीय तकनीक का सर्वप्रथम प्रयोग प्रो0 हेममर्ट द्वारा किया गया था। लेकिन इसको विधिवत ढ़ंग से विश्लेषित करने का श्रेय प्रो0 कार्ल पियर्सन महोदय को है जिन्होंने सन् 1900 में इसका सफल परीक्षण भी किया था। काई वर्ग जाँच से इस बात की जानकारी होती है कि समग्र विशेष में अवलोकन व प्रत्याशा का अन्तर क्या हमारी आधारभूत

परिकल्पनाओं के गलत होने के कारण है, अथवा यह मात्र किसी संयोग अर्थात् दैव का परिणाम है।

स्वतंत्र जाँच की विधि :-

स्वतंत्र जाँच की विधि इस प्रकार है :-

1. शून्य परिकल्पना :-

सर्वप्रथम यह परिकल्पना की जाती है कि अमुक दोनों गुण पूर्णतः स्वतंत्र है अर्थात् उनकी वास्तविक एवं प्रत्याशित आवृत्तियों का अन्तर शून्य है। वास्तव में, इस मान्यता को शून्य परिकल्पना कहा जाता है।

2. काई वर्ग का परिकलन :-

ज्ञात अर्थात वास्तविक आवृत्तियों (fo) की सहायता से प्रत्याशित (fo) आवृत्तियाँ निकालकर और काई वर्ग का मूल्य (x2) ज्ञात कर लिया जाता है।

3. स्वातन्त्रय संख्या :-

आसंग सारिणी में कुछ ऐसे कोष्ठ ऐसे होते हैं जिनकी आवृत्तियों को निकालने की की जरूरत नहीं होती अर्थात् इन आवृत्तियों को निकालने की जरूरत नहीं होती। यदि न्यूनतम आवृत्तियाँ हमें ज्ञात हों तो शेष आवृत्तियाँ इनके ऊपर आधारित की जा सकती हैं अर्थात् क्षैतिज जोड़ या उदग्र जोड़ में से घटाकर उन्हें मालूम किया जा सकता है स्वतंत्र आवृत्तियों की संख्या ही वास्तव में, स्वातन्त्रय संख्या का स्वातंत्रयांक कहलाती है जिसका सूत्र इस प्रकार है -

d.f = (e-1) (y-1)

4. काई वर्ग तालिका का प्रयोग :-

काई वर्ग और स्वातंत्रयांश को ज्ञात करने के बाद तालिका में से एक निश्चित सार्थकता स्तर पर और स्वातंन्त्य संख्या से सम्बन्धित काई वर्ग का मूल्य (Y^2 Value) देख लिया जाता है।

5. परिकल्पना परीक्षण :-

परीक्षण अर्थात् निष्कर्ष की दृष्टि से जब परिकलित मूल्य इसके सारिणी मूल्य से अधिक होता है तो शून्य परिकल्पना गलत हो जाती है अर्थात् उक्त दोनों गुण स्वतंत्र न होकर परस्पर आश्रित या सम्बन्धित होते हैं इसके विपरीत यदि परिकल्पित मूल्य सारिणी मूल्य से कम होता है तो शून्य परिकल्पना ठीक मान ली जाती है। जिसका अर्थ यह हुआ कि दोनों गुण स्वतंत्र है अर्थात् उनमें गुण साहचर्य नहीं है।

इस शोध-प्रबंध में अध्याय प्रथम में संरचित संकल्पनाओं का सत्यापन निम्नवत् है-

प्रथम संकल्पना सत्य परिलक्षित हुई है। बाँदा जनपद मूलतः प्राथमिक एवं कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था है। लघु एवं वृहत उद्योगों की 'शून्यता' की परिस्थिति में इस अर्थव्यवस्था के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास में कृषि-आधारित उद्योगों की स्पष्ट भूमिका है।

द्वितीय संकल्पना सत्य पायी गई है। वस्तुतः इस जनपद में कृषि-आधारित उद्योग इसलिए विशेष लाभदायक अनुभवित नहीं हुए है क्योंकि वे लागत-लाभ विश्लेषण एवं विवेकपूर्ण नियोजन पर आधारित नहीं है।

तृतीय यह संकल्पना असत्य पायी गई है कि जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों के लिए परिवहन के पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं है। इस जनपद में ट्रैक्टर और ट्रक की भरमार है। ये सभी माल ढुलाई में प्रयुक्त होते हैं।

चतुर्थ यह संकल्पना भी असत्य पाई गयी है कि बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों के स्वरूप और संरचना में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है। कारण यह है कि प्रौद्योगिकीय परिवर्तन को अपनाने में यह जनपद अन्य जनपदों की तुलना में अत्यधिक पीछे है। इसलिए जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों की संरचना में मात्र स्थैतिक परिवर्तन लक्षित होता है।

पंचम यह सामान्य संकल्पना है जो कि सभी कृषि-अर्थव्यवस्थाओं में सत्य पायी गई है। बाँदा जनपद की अर्थव्यवस्था कृषि-प्रधान है और यही कारण है कि यहाँ कृषि-आधारित औद्योगिक केन्द्रीयकरण हुआ है।

छठी संकल्पना एक सामान्य संकल्पना और सत्य है। बाँदा जनपद के ग्रामीण आर्थिक विकास को उर्ध्वमुखी गति देने में इन उद्योगों की महती भूमिका है। यह गहन पूँजी विनियोजन वाले लघु और बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना के विकल्प भी हैं।

सातवीं सकल्पना एक सामान्य संकल्पना और सत्य है। कृषि और उद्योग एक दूसरे के ऊपर निर्भर हैं। विधायन आधारित कृषि-औद्योगिकरण कृषि क्षेत्र को उद्योग का दर्जा दिलाने में सक्षम है।

आठ्वी संकल्पना एक सामान्य और सत्य संकल्पना है। बाँदा जनपद की अर्थव्यवस्था के कृषि-आधारित औद्योगिकरण से यह प्रतिफलन उत्पन्न हुआ है कि यहाँ वेतन/मजदूरियों का एक ढ़ाँचा उत्पन्न हुआ है जो कि इस अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करता है।

नवीं संकल्पना असत्य प्रतीत हुई है। जनपद में कृषि-आधारित औद्योगिकरण से ग्रामीण रोजगार उत्पन्न तो हुआ है लेकिन जनपद की 70 प्रतिशत जनसंख्या को मात्र कृषि-आधारित औद्योगिकरण से रोजगार प्राप्त हुआ है, यह नहीं कहा जा सकता। तथ्य और कथ्य उपरोक्त की पुष्टि नहीं करते।

दसवीं संकल्पना नितान्त सत्य है कि जनपदीय कृषि-आधारित उद्योगों की प्रवृत्ति नगरोन्मुखी के बजाय ग्रामीण अर्थव्यवस्थोन्मुखी है।

ग्यारहवीं संकल्पना भी सत्य है। सम्पूर्ण कृषि-आधारित जनपदीय अर्थव्यवस्था के अध्ययन से यह निहितार्थ प्राप्त हुआ है कि यदि इन उद्योगों की अधोसंरचनात्मक समस्याओं को हल कर लिया जाये तो ये उद्योग समान्य पूँजी स्टाक और रोजगार-जनन के अच्छे स्रोत हो सकते हैं।

बारहवीं संकल्पना असत्य है क्योंकि इन उद्योगों के कार्य-निष्पादन हेतु कच्चामाल एवं मशीने अन्य नगरों से पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकती है। समस्या वस्तुतः पर्याप्त वित्त की है।

तेरहवी और अंतिम संकल्पना तो इन उद्योगों के लिए वित्त प्रबंधन से ही सम्बन्धित है। कृषि-क्षेत्र में फसलगत उच्चावचन से इन उद्योगों का कार्य-निष्पादन एवं लाभदायकता प्रभावित होती है। बढ़ती हुई उत्पादन लागत, करारोपण, विद्युत भार के शुल्क में निरन्तर वृद्धि से जब इन उद्योगों को घाटे का अनुभव होता है तब 'क्षतिपूर्ति वित्त' यदि उपलब्ध हो जाय तो ये उद्योग जनपदीय औद्योगिक संरचना को सर्वदा सबल दिशायें दे सकते हैं। यह संकल्पना सबसे सबल, व्यवाहारिक, सार्थक एवं सत्य संकल्पना है।

इस प्रकार इस अध्ययन की कुल तेरह संकल्पनाओं में से दस सकल्पनाओं की सत्यता परीक्षण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह शोध-प्रबन्ध घटनात्मक एवं निष्कर्षात्मक है।

8.3- अध्ययनगत निष्कर्ष बिन्दु -

किसी अध्ययन का महत्व उसके मूल निष्कर्षो में निहित होता है। किसी भी अनुसंधान अध्ययन का अन्तिम चरण निष्कर्ष एवं सुझावों से अभिव्यक्त होता है किसी भी अनुसंधान का निष्कर्ष होना उसकी सफलता की सवार्धिक महत्वपूर्ण कसौटी है। अन्य व्यवसायों और क्षेत्रों की भाँति बाँदा जनपद में भी कृषि आधारित उद्योगों की कार्यरत ईकाईयाँ है। जो उत्पादन कार्यो के संदर्भ में विशेष रूप से लाभान्वित है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध भी एक निष्कर्षात्मक अध्ययन है पूर्व वर्णित अध्यायों के आधार पर "बाँदा जनपद की कृषि- आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण'' अनुसंधान समस्या से उद्भूत प्रमुख निष्कर्षो को निम्नवत संजोया जा सकता है-

1. बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों को कच्चा माल आसानी से जनपद

के अन्दर अब नहीं उपलब्ध हो रहा है इस लिए अधिकतर दाल,चावल मिलें अब बन्द हो रही है। क्योंकि मिल मालिकों को कच्चा माल जनपद के बाहर आसपास के नगरों से मंगाना पड़ता है। जिससे उत्पादक वर्ग को यातायात में अतिरिक्त धन तथा समय दोनो की हानि होती है।

2. कृषि आधारित उद्योगों के उत्पादन निष्पादन में कोई खास वृद्धि नहीं हुयी है दस वर्षो में एक दो वर्षो को छोड़कर उत्पादन घट रहा है। उत्पादन कम होने का कारण प्रबंध ही न होना तथा वित्तीय व्यवस्था सही न होना है।

3. बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों में वेतन मजदूरी कम मिलने के कारण श्रमिक वर्ग इस उद्योग की अपेक्षा अन्य उद्योगों में कार्य करना अधिक उचित समझतें है। जिसमें उनको कृषि आधारित उद्योगों की तुलना में अधिक श्रम मूल्य प्राप्त होता है।

4. बाँदा जनपद के कृषि आधारित उद्योगों में उत्पादकों को उत्पादन की लागत की अपेक्षा या तुलना में प्राप्त आगम की मात्रा लागत से कुछ ही अधिक है क्योंकि उत्पादक को कच्चा माल बाहर से उपलब्ध होने के कारण उत्पादन के लिए लागत अधिक लगानी पड़ती है। जबकि बिक्री से उसको आगम की प्राप्ति कम होती है।

5. बाँदा ज़नपद में बेरोजगारी,गरीबी,कुपोषण एवं भुखमरी जैसी ज्वलन्त समस्यायें विद्यमान है। इन समस्यायों का समाधान करने में कृषि आधारित उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है।

6. बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों की मिलों में आज भी पुरानी घटिया किस्म की मशीनों का प्रयोग हो रहा है। जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ता है।

7. समान्यतः जनपद के कृषि- आधारित उद्योगों में कार्यरत श्रमिक एवं उत्पादक मालिकों में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि इस लघु उद्योग में उत्पादक स्वयं ही अधिकतर कार्य करते हैं।
8. बाँदा जनपद में कृषि - अधारित उद्योग में कार्यरत मिल मालिकों को वित्तीय सहायता नहीं हो पाती है। अतः उनके पास वित्त व पूंजी का अभाव रहता है।
9. इन उद्योगों में कार्य करने वाले श्रमिक अशिक्षित होते हैं। जो उत्पादन कार्य को ठीक ढ़ंग से नहीं कर पाते है।
10. बाँदा जनपद के अधिकतर श्रमिक इन उद्योगों में रोजगार में लगे है।
11. बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों में मितव्यितायें अधिक है क्योंकि निकलते कचड़े का वैकल्पिक प्रयोग हो जाता है जैसे दाल की भूसी जानवर खाते हैं।
12. बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों में कार्यरत मालिकों को उत्पादन कार्य में लागत अधिक लगाने एवं प्राप्त आगम की मात्रा कम होने के कारण केवल सामान्य लाभ ही प्राप्त हो रहा है।
13. अन्त में कृषि- आधारित उद्योग जनपद के आर्थिक विकास में सहायक है।

8.4-कतिपय सम्भावित कृषि-आधारित उद्योगों के नियोजन हेतु सुझावः-

बाँदा जनपद में कृषि पर आधारित और भी उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं ये जानकारी शोधार्थीनी द्वारा कृषि आधारित मिलों के मालिकों से जानकारी प्राप्त कर की गयी कृषि पर आधारित कई उद्योग स्थापित किये जा सकते है जैसे- बेसन मिल, आँवले के प्रोडक्ट्स,सोयाबीन प्रोडक्ट्स बेकरी/ब्रेड, टमाटर के पेस्ट केचअप, आम की खटाई बनाना, आयुर्वेदिक दवायें बनाना, बांस के सजावटी समान,पिसे मसाले,कालीन

बनाना, अदरक की प्रोसेसिंग,बांस की डलिया बनाना, खाण्डसारी,मशरूम उगाना आदि। इन उद्योगों के द्वारा जनपद का आर्थिक विकास किया जा सकता है। साथ ही इन उद्योगों की स्थापना से जनपद में बेरोजगारी की समस्या को दूर किया जा सकता है,कतिपय सम्भावित कृषि- आधारित उद्योगों के नियोजन हेतु सुझाव इस प्रकार है।

1. कृषि आधारित उद्योगों के स्थापित करने के लिये सर्वप्रथम भूमि की व्यवस्था करनी चाहिये।
2. उद्योग की परियोजना का अस्थायी पंजीकरण जिला उद्योग के माध्यम से कराना चाहिये।
3. कृषि-आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये कार्यशील पूंजी के लिये बैंकों में आवेदन करना चाहिये।
4. कृषि- आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये वित्तीय सहायता के लिये उत्तर प्रदेश वित्तीय निगम तथा बैंकों में जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से आवेदन करें।
5. इन उद्योगों की स्थापना करने के लिये पावर कनेक्शन के लिये आवेदन करें।
6. कृषि- आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये कच्चे माल की आपूर्ति की व्यवस्था सर्वप्रथम करें।
7. कृषि आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये जल आपूर्ति व्यवस्था करनी चाहिये।
8. कृषि- आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये अच्छे किस्म की मशीनें मंगानी चाहिये।
9. कृषि- आधारित सम्भावित उद्योग स्थापित करने के लिये प्रोद्योगिकी/ प्रक्रिया से सम्बन्धित विशेष जानकारी एवं प्रोजेक्ट रिर्पोट केन्द्रीय प्रोद्योगिक

अनुसंधान संस्थान लखनऊ से प्राप्त करें।

10. इन उद्योगों में कुशल श्रमिकों की भर्ती करनी चाहिये जो उत्पादन कार्य ठीक से कर सके।

11. इन उद्योगों के लिये वैधानिक लाइसेन्स क्लीयरेंस प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड व अन्य संम्बन्धित विभाग से प्राप्त कर लें।

अतः उपरोक्त नियोजन सुझावों को ध्यान में रख कर उपरोक्त बताये गये उद्योग स्थापित किये जाने चाहिये।

8.5 प्रवर्तमान स्थिति हेतु सुझाव -

किसी भी उद्योग की स्थितियों में परिवर्तन करके उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। तकनीकी विकास भी उत्पादन कार्य को श्रेष्ठ एवं कम लागतशील बनाने में अत्यन्त उपयोगी है। तथा वित्तीय व्यवस्था में भी सुधार करना चाहिये। अतः बाँदा जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों की स्थितियों में निम्नलिखित सुझावों द्वारा परिवर्तन लाया जा सकता है।

1. सरकार द्वारा कृषि-आधारित उद्योगों में कार्यरत मिल मालिकों को तकनीकी विकास के लिये अच्छे किस्म की अधिक क्षमता वाली मशीने खरीदने के लिये अतिरिक्त वित्तीय सहायता प्रदान की जाये।
2. मिल मालिकों को नयी तकनीकी वाली मशीनों का प्रयोग करना चाहिये जिससे उत्पादन की क्षमता को बढ़ाया जा सके।
3. जनपद में संचालित कृषि आधारित उद्योगों में कार्यरत मिल मालिकों को समय-समय पर हो रहे तकनीकी परिवर्तन की सूचना एवं ज्ञान की जानकारी दी जाये।
4. इन उद्योगों के लिये कच्चा माल कम लागत पर सरकार को उपलब्ध कराना चाहिये।

5. बाँदा जनपद में श्रमिकों को मशीनों को चलाने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये। इसके लिये जिले में प्रशिक्षण केन्द्र खोले जायें।
6. मिल मालिकों को अपनी मिलों में अच्छे किस्म व अधिक क्षमता वाली मशीनें लगाना चाहिये जिससे उत्पादन क्षमता बढ़ सके।
7. मिल मालिकों को अपनी उत्पादन प्रक्रिया में परिवर्तन करना चाहिये।
8. मिल मालिकों को अपनी प्रबंध व्यवस्था भी ठीक रूप में चलानी चाहिये।
9. जनपद के अन्दर कुशल इंजीनियरों की व्यवस्था सरकार को करनी चाहिये जिससे मशीने खराब हो जाने पर जनपद के अन्दर मिल मालिक मशीनें ठीक करा सकें।

उपरोक्त बताये गये सुझावों के द्वारा स्थितियों में परिवर्तन करके उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।

8.6 अग्रगामी शोध की दिशायें :-

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध बाँदा जनपद की कृषि आधारित अर्थ व्यवस्था का औद्योगीकरण कृषि आधारित उद्योगों की अवस्थिति निष्पादन समस्याओं का सर्वेक्षण तथा विश्लेषण किया गया है। जिसमें इन उद्योगों की उत्पादन स्थिति, वित्तीय पक्ष,प्रबंध श्रम संरचना,लाभ हानि,लागत आगम, का विश्लेषण अध्ययन किया गया है। इसके आगे भी इस विषय से संबन्धित विषयों पर शोध कार्य किया जा सकता है। अग्रगामी शोध के विषय निम्नलिखित हो सकते है।

1. बाँदा जनपद के कृषि- आधारित औद्योगीकरण का लागत आगम का विश्लेषणात्मक अध्ययन।
2. बाँदा जनपद के कृषि- आधारित औद्योगीकरण का वित्तीय पक्ष का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन।
3. बाँदा जनपद के कृषि-आधारित औद्योगीकरण का लाभ-हानि का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन।
4. बाँदा जनपद में दाल मिलों की समस्याओं का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन।

इस प्रकार उपरोक्त पर शोध कार्य किया जा सकता है। परन्तु शोध कार्य करने से पूर्व अवश्य देख लेना चाहिये कि शोध विषय से सम्बंधित पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है या नहीं और उपरोक्त विषयों पर शोध करके कृषि आधारित उद्योगों को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया जा सकता है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट

अ. उ0प्र0 सरकार की औद्योगिक नीति

ब. जिला उद्योग केन्द्र एवं कृषि-आधारित उद्योग

स. कृषि-आधारित उद्योगों में शोध एवं अनुसंधान

द. कृषि-आधारित उद्योग एवं पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण

य. कतिपय महत्वपूर्ण तालिकायें

परिशिष्ट

अ. उ0प्र0 सरकार की औद्योगिक नीति

ब. जिला उद्योग केन्द्र एवं कृषि-आधारित उद्योग

स. कृषि आधारित उद्योग में शोध एवं अनुसंधान

द. कृषि आधारित उद्योग एवं पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण

य. कतिपय महत्वपूर्ण तालिकाएँ

(अ) उ0प्र0 सरकार द्वारा लागू की गयी औद्योगिक नीति इस प्रकार है।

1. लघु रुग्ण इकाईयों के पुनर्जीवित करने हेतु राज्य स्तरीय पुनर्वासन बोर्ड गठित करने की घोषणा।
2. 100 बैटरी चलित तिपहिया वाहनों की बिक्री पर व्यापार कर छूट।
3. सूचना प्रोद्योगिक के विकास हेतु साफ्टवेयर उद्योग में महिला कर्मचारियों को 5 बजे के बाद काम करने की अनुमति।
4. फ्रशर समाधान योजना फ्रशर स्वामी द्वारा अब केवल एक बार स्वेच्छा से मंडी शुल्क लेने का निर्णय।
5. राज्य वित्तीय निगम के अधिनियम की धारा 29 के अन्तर्गत अधिग्रहीत ईकाइयों की बिक्री करने के वास्तविक विक्रय पर ही स्टैम्प शुल्क लिये जाने का निर्णय।
6. उद्योगों के आवेदन पर एक सप्ताह के अन्दर विद्युत भार स्वीकृत सम्बन्धी निर्णय अनिवार्य रूप से लिये जाने की व्यवस्था के निर्देश।
7. निर्यातक ईकाइयों को पूरा सरंक्षण और प्रोत्साहन।
8. वर्ष 1994 से जिन चावल उद्योगों के विरूद्ध मण्डी परिषद द्वारा कार्यवाही प्रारम्भ की गई है उसे तत्काल प्रभाव से वापस किये जाने की घोषणा।
9. नये उद्योगों को त्वरित गति से विद्युत भार स्वीकृत किये जाने के अधिकारों को तत्काल प्रभाव से आसान स्तरों पर प्रतिनिधायन का निर्णय।

10. कृषि उद्योग पार्क विकसित किये जाने के पश्चात खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के क्षेत्र में आवश्यक तकनीकी सुधार के मार्ग खुलेगें तथा उत्पादित सामग्री के निर्यात की व्यवस्था भी अधिकाधिक हो सकेगी।
11. उद्योग विभाग द्वारा चयनित 17 जनपदो में स्थापित औद्योगिक क्षेत्रों जिनमें 32 के.बी.ए. से आपूर्ति की जा रही है। उनमें 24 घण्टे विद्युत आपूर्ति।
12. फीड़रों,विद्युत सब स्टेशनों के निर्माण के लिये सुपर विजन चार्ज 36.5 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर, नई औद्योगिक विकास नीति के क्रियान्वयन हेतु 12 प्रतिशत की औद्योगिक विकास दर प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

ब- जिला उद्योग केन्द्र एवं कृषि-आधारित उद्योग -

वर्तमान बदलते हुये आर्थिक परिवेश एवं जनसंख्या के निरन्तर बढ़ते हुये दबाव में सभी को नौकरी उपलब्ध कराना सम्भव नहीं है। जिला उद्योग केन्द्र युवकों को रोजगार उपलब्ध कराने तथा कृषि आधारित उद्योग स्थापित करने में परामर्श देता है कृषि- आधारित उद्योगों को जो सहयोग जिला उद्योग केन्द्र से दिया जाता है वह इस प्रकार है-

1. जिला उद्योग केन्द्र द्वारा कृषि- आधारित उद्योंगों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।
2. जिला उद्योग केन्द्र द्वारा कृषि आधारित उद्योगों को पंजीकरण कराने की सुविधा रहती है।
3. कृषि- आधारित उद्योग लगाने में आवश्यक 100 अश्व शक्ति तक के विद्युत भार की जिला स्तर पर जिला उद्योग बन्धु के माध्यम से स्वीकृति की जाती है।
4. उद्यमियों की कृषि-आधारित उद्योग लगाने के लिये जिला उद्योग केन्द्र परामर्श देती है।
5. कृषि आधारित उद्योग स्थापित करने के लिये उद्यमी को जिला केन्द्र द्वारा भूमि

की भी व्यवस्था करायी जाती है।

6. युवा वर्ग,प्रशिक्षित वर्ग एवं प्रबंधकीय योग्यता रखने वाले व्यक्तियों को इन उद्योगों की ओर वित्तीय एवं गैर वित्तीय सुविधाओं के द्वारा उद्योग केन्द्र द्वारा आकर्षित किया जाता है।

स- कृषि- आधारित उद्योगों में शोध एवं अनुसंधान -

किसी भी विषय पर जब अधिक शोध एवं अनुसंधान होता है तभी इस बात की जानकारी होती है कि उस विषय के सम्बन्ध में क्या समस्यायें क्या कमियाँ है जिसे दूर किया जा सके। बाँदा जनपद में कृषि आधारित उद्योगों के सम्बन्ध में अभी तक कोई शोध एवं अनुसंधान नहीं हुये है। हुये भी है तो सूक्ष्म के बराबर है। इस लिये इन कृषि आधारित उद्योगों का जनपद में अधिक विकास नहीं हुआ है। जो उद्योग है भी उनकी उत्पादन क्षमता बहुत कम है उनकी नयी तकनीकी क्षमता बहुत कम है उनकी नई तकनीकी की कोई जानकारी नहीं है।

अतः कृषि-आधारित उद्योगों के संबध में शोध एवं अनुसंधान की आवश्यकता है। जिससे इन उद्योगों का विकास हो सके।

द- कृषि- आधारित उद्योग एवं पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण :-

आज विकासशील राष्ट्रों के समक्ष प्रमुख समस्या पर्यावरण प्रदूषण की है ओजोन पर्त के निरतंर क्षरण से कल कारखानों से उढ़ते हुये धुयें से इनसे निकले हुये अवशिष्ट विषैले पदार्थो के नदियों में प्रवाहित होने के कारण वनों का निंरतर कटाव एवं भूमि क्षरण से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या बढ़ रही है।

हमें विकास चाहिये औद्योगिकरण चाहिये लेकिन हमे मानव और पर्यावरण साहचर्यवादी न्यूनतम प्रदूषण जनित वैकल्पिक औद्योगिकरण की प्रक्रिया चाहिये।

कृषि आधारित औद्योगिकरण में पर्यावरण प्रदूषण कम फैलता है क्योंकि जो अवशिष्ट पदार्थ निकलता है उसका उपयोग हो जाता है। अतः कचरे इत्यादि के नदी जल

में विलय की संभावनायें कम होती है। और इन उद्योगों में धूम्र जनन अल्प होता है और बाँदा जनपद में अधिकतर कृषि- आधारित उद्योगों में (मिलों में) प्रदूषण नियंत्रण सयन्त्र लगे हैं।

निष्कर्षतः इस प्रकार कृषि- आधारित उद्योगों से प्रदूषण और पर्यावरण असंतुलन की संभावनायें अल्प होती है। अतः इन उद्योगों के द्वारा पर्यावरण प्रदूषण नियत्रित रहता है।

(य) कतिपय महत्व पूर्ण तालिकाएँ

बाँदा जनपद में कृषि-आधारित उद्योगों में स्वामित्व के प्रकार

क्रम संख्या	स्वामित्व के प्रकार	फर्मो की संख्या
1	सोलप्रोपाइटर	42 (84.00प्रतिशत)
2	पार्टनरशिप	08 (16.00 प्रतिशत)
	समग्र योग	50 (100.00 प्रतिशत)

स्रोत-साक्षात्कार अनुसूची

टिप्पणी :- लघु कोष्ठ में प्रदर्शित संख्या सम्बन्धित कालम का प्रतिशतांश है।

जनपद में विकास-खण्डवार जनसंख्या का आर्थिक वर्गीकरण

क.सं.	वर्ष	कृषक	कृषि श्रमिक	उद्योग खान खोदना
1	1981	226650	126376	93
2	1991	383790	130959	417
3	2001	772550	335736	2094

स्रोत : सांख्यकीय पत्रिका, जनपद - बाँदा -1998

बाँदा जनपद की कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था का औद्योगिकरण

संरचित साक्षात्कार अनुसूची (गोपनीय)

शोध -निर्देशक

डा0 एस0 के त्रिपाठी

रीडर एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग
पं0 जे0एन0पी0जी0कालेज, बाँदा (उ0प्र0)

सर्वेक्षिका

अर्चना उपाध्याय

एम0ए0, एम0एड0

सामान्य सूचनायें:-

1. फर्म का पूरा नाम व पता।
2. यह फर्म किस वर्ष स्थापित की गयी ?
3. आपका उद्योग कहां स्थापित है, तहसील/विकास खण्ड/जनपद का नाम
4. इस उद्योग की स्थापित करने में कितनी पूँजी लगी थी, स्थिर पूंजी/ प्राथमिक लागत (रू0 में)
5. आपका उद्योग किस श्रेणी में आता है? कुटीर उद्योग/लघु उद्योग?
6. फर्म के स्वमित्व में पार्टनर शिप भी है ? हां/नहीं

   अवस्थापन-पक्ष (सौविध्य दशाऐं)

अ- कच्चा माल

7. इस उद्योग की स्थापना संभावित कच्चे माल मिलने की सुविधा के कारण की गयी है ?हां/नहीं
8. इस फर्म के लिये कच्चा माल कहां से आता है?
9. क्या कच्चा माल लाने के लिये उचित साधन है? हां/नहीं
10. यदि हां तो किस साधन का प्रयोग करते हैं?
11. प्रति वर्ष कितना कच्चा माल मंगाते है? (कुन्तल में)
12. प्रति माह कितना कच्चा माल मंगाना पड़ता है?

ब-विद्युत-आपूर्ति

13. इस मिल के लिये विद्युत आपूर्ति कहां से की जाती है? जनरेटर/शहर के पावर हाऊस से-
14. यदि जनरेटर के द्वारा की जाती है तो जनरेटर कितने वाट का है।
15. क्या जनरेटर फर्म का पूरा लोड़ ले सकता है? हाँ/नहीं
16. आपके फर्म मे लगे जनरेटर की क्षमता कितनी है? (किलोवाट में)

स-श्रम अनुपयोग ढ़ांचा-

17. इस फर्म में कुल कितने श्रमिक कार्य करते है?
18. फर्म में प्रयुक्त श्रमिक किस प्रकार के है? शिक्षित/अशिक्षित।
19. आपके फर्म में स्थानीय श्रमिकों की संख्या कितनी है?
20. क्या आपके फर्म में शिफ्ट में काम होता हे?हां/नहीं
21. प्रत्येक शिफ्ट में कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या कितनी है?
22. आपके फर्म में कुल कितने घण्टे काम होता है?
23. इस फर्म में मासिक वेतन पर काम करने वाले श्रमिको की संख्या कितनी है?
24. इस फर्म में दैनिक वेतन पर कार्य करने वाले श्रमिकों की संख्या कितनी है?
25. इस फर्म में श्रमिकों का मासिक वेतन (रू0 में)
26. इस फर्म में श्रमिकों का दैनिक वेतन (रू0 में)
27. यदि श्रमिक छुट्टी लेता है तो उसका वेतन काट लिया जाता है?हां/नहीं।
28. यदि हां तो वेतन में कटौती किस हिसाब से होती है?
29. श्रमिकों के दुर्घटना ग्रस्त होने पर क्या श्रमिक परिवार को क्षति पूर्ति व्यय दिया जाता है?
30. यदि हां तो कितना दिया जाता है (रू0 में) ?
31. क्या आपकी फर्म में महिला श्रमिक भी है?

32. क्या आपकी फर्म में बाल श्रमिक भी है?

33. यदि हां तो उनको कितना वेतन दिया जाता है? (रू0 में)

34. क्या आपकी फर्म में मजदूरों की छटनी की जाती हे?

35 .यदि हां तो किस आधार पर की जाती है?

(द)-ऋण प्राप्ति एवं स्थिति-

36. क्या वित्तीय प्रबंध स्वयं करते है? हां/नहीं

37. क्या वित्तीय समस्याओं को पूरा करने के लिये ऋण लेने पड़ते है? हां/नहीं

38. यदि हां तो किस बैंक द्वारा ऋण प्राप्त किये जाते हैं?

39. ऋण कितनी ब्याज दर पर प्राप्त किये जाते है? (प्रतिशत बतलायें)

(य)- प्रबंधकीय पक्ष :-

40. इस फर्म के मालिक का नाम ?

41. क्या फर्म कई विभागों में बटी है?

42. प्रत्येक विभाग में कितने कर्मचारी कार्यरत है?

(२) उत्पादन एवं विधायन- पक्ष -

43. इस फर्म का उत्पादन किस श्रेणी में आता है? प्राथमिक/अन्तिम।

44. प्रतिमाह कुल कितना उत्पादन होता है? (कुन्तल में)

45. उत्पादन की औसत मासिक वृद्धि दर? (कुन्तल में)

46. पिछले 10 वर्षो में कितना उत्पादन (कुन्टल में) हुआ?

1994-95 | 1999-2000

1995-96 | 2000-2001

1996-97 | 2001-2002

1996-97 | 2002-2003

1998-99 | 2003-2004

47. क्या प्रति माह बेचने वाली अप्रयुक्त सामाग्री का वैकल्पिक प्रयोग किया जाता है? हां/नहीं

48. यदि हां तो बैकल्पिक प्रयोग किस रूप में किया जाता है?

(ल)-लागत एवं आगम पक्ष -

(1) लागत

49. प्रतिमाह कच्चा माल खरीदने में कितनी लागत आती है ? (रू0 में)

50 प्रतिमाह बिजली पर होने वाला व्यय (रू0 में)

51. प्रतिमाह परिवाहन पर होने वाला व्यय (रू0 में)

52. क्या मशीने बाहरसे मगांई जाती है? हां/नहीं?

53. यदि हां तो मंगाने में कितनी लागत आती है?

54. मशीनो पर होने वाला प्रतिमाह घिसाई व्यय (रू0 में)

55. पिछले 10 वर्षो में उत्पादन में आयी कुल लागत (रू0 में)

1994-95	1999-2000
1995-96	2000-2001
1996-97	2001-2002
1997-98	2002-2003
1998-99	2003-2004

56. प्रतिमाह उत्पादन में कितनी स्थिर लागत आती है? (रू0 में)

57. प्रतिमाह उत्पांदन में कितनी सीमान्त लागत आती है? (रू0 में)

(2) आगम-

58- प्रतिमाह उत्पादन बेचने से कितनी आय प्राप्त होती है? (रू0 में)

59. पिछले दस वर्षो में उत्पादन से प्राप्त होने वाली आय (रू0 में)

1994-95 1995-96 1996-97

1997-98	1998-99	1999-2000
2000-2001	2001-02	2002-03
2003-2004		

60. प्रति माह फर्म को कितनी औसत अय प्राप्त होती है?(रू0 में)

61. प्रति माह फर्म को कितनी सीमान्त आय प्राप्त होती है? (रू0 में)

62. फर्म को एक वर्ष में कुल कितनी आय प्राप्त होती है? (रू0 में)

(व) लाभ/हानि पक्षः-

63. फर्म को एक वर्ष में कुल कितना लाभ प्राप्त हुआ? (रू0 में)

64. पिछ्ले 10 वर्षो में फर्म को लाभ (रू0 में)

	1996-97	1999-2000	2002-03
1994-95	1997-98	2000-01	2003-04
1995-96	1998-99	2002-02	

65. फर्म को क्या हानि हो रही है?हां/नहीं

66. यदि हां तो फर्म को एक वर्ष में कुल हानि कितनी हुई ? (रू0 में)

(व)- तकनीकी पक्ष :-

67. क्या आपके फर्म की तकनीकी सुविधायें उपलब्ध है/हां/नहीं

68. क्या आप अपनी फर्म में भारत से बनी मशीनों का उपयोग करते है? हां/नहीं

69. यदि नहीं तो किस देश से मशीनें मगांते है?

70. क्या मशीने बनवाने के लिये इन्जीनियर बाहर से बुलाने पड़ते है?

71 यदि हाँ तो इन्जीनियर बुलाने में कितनी लागत आती है? (रू0 में)

(थ) विपणन पक्ष

72. तैयार माल बेचने के लिये क्या पास में विपणन की सुविधा है? हां/नहीं

73. यदि हां तो माल कहां बेचते है? बाजार में/मण्डी समिति में?

74. यदि बाजार में तो बाजार का नाम बताइयें?

75. तैयार माल किस साधन तक बाजार में पहुंचाया जाता है?

(क) पर्यावरण पक्ष :-

76. क्या आपकी फर्म द्वारा प्रदूषण फैलता है? हां नहीं

77. फर्म के द्वारा निकाला कचड़ा कहां फेकते है?

78. क्या आपकी फर्म में प्रदूषण रहित यंत्र लगे हैं? हां/नहीं

(ख)- विशिष्ट समस्यायें-

79. क्या आपकी फर्म में श्रमिकों को वेतन समय पर मिल जाता है?

80. यदि नहीं तो इसको लेकर श्रमिक हड़तालें करते है?हां/नहीं

81. क्या आपकी फर्म में श्रमिकों को आवास की सुविधा प्राप्त है?हां/नहीं

82. अगर आपकी फर्म में श्रमिक हड़ताल करते है तो उसका निवारण आप किस प्रकार करते है?

83 यदि जल का साधन खराब हो जाता है तो फर्म में जल कहां से आता है?

84. क्या विद्युत आपूर्ति अनवरतन बनी रहती है?हां/नहीं

85. यदि नहीं तो क्या विकल्प है?

86. जनरेटर खराब हो जाने पर क्या करते है?

87. क्या कच्चा माल मंगाने में कठिनाई होती है?हां/नहीं

88. यदि हां तो किस प्रकार की कठिनाई होती है?वित्त/परिवहन

(ग) कृषि- आधारित औद्योगिकरण का विकासात्मक पक्ष :-

89. आपने ऐसा ही उद्योग क्यों चुना जो कृषि पर आधारित है?

90. क्या वहां पर कृषि आधारित कच्चा माल ज्यादा मात्रा में उपलब्ध है ?

91. क्या आपकी फर्म जनपद के विकास में सहायक है ?हां/नहीं

92. आपकी फर्म से जनपद के कितने प्रतिशत लोगों को रोजगार प्राप्त है ?

93. क्या आपकी फर्म आय वृद्धि में सहायक है ?हां/नहीं

94. क्या आपकी फर्म द्वारा कार्य नियमित किया जाता है ?हां/नहीं

95. क्या कृषि-आधारित उद्योग लगाने में लाभ अधिक है ?हां/नहीं

(घ)-सरकारी नीति :-

96. क्या इस संबध में उ0प्र0 सरकार ने (कृषि-आधारित औद्योगिकरण) कोई नीति बनाई है ? हां नहीं

97. यदि हां तो इस नीति का नाम है ?

98. क्या उस नीति का लाभ आपकी फर्म को भी प्राप्त है ?हां/नहीं।

99. क्या उस नीति के द्वारा इस तरह के उद्योग लगाने में सहायता प्राप्त होगी ?हां/नहीं

(ङ)- उद्योग को रुग्णता से बचाने एवं स्वस्थ बिक्री हेतु-सुझाव

1. उद्योग को रुग्णता से बचाने के लिये हमें वित्त प्रबन्ध सुचारू मात्रा में करना चाहिये।
2. मशीनें उच्च कोटि की मंगानी चाहिये।
3. जल व विद्युत की सुचारू व्यवस्था होनी चाहिये।
4. उद्योग के पावर कनेक्शन के लिये आवेदन करना चाहिये-
5. उद्योग में कच्चा माल मंगवाने की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिये जिससे उद्योग को सुचारू रूप से चलाया जा सके।
6. श्रमिक को उनकी मेहनत के अनुसार वेतन प्रदान करना चाहिये।
7. बिक्री की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिये।

8. उत्तर प्रदेश सरकार ने रुग्ण ईकाइयों के पुर्नवास के लिये एक योजना लागू की है जिसका नाम है ईकाइयों का पुर्नवासन इसके अन्तर्गत रुग्ण ईकाइयों के पुर्नवासन की व्यवस्था करायी जाने का प्रविधान है। पूर्व में स्थापित इकाईयाँ जिनके ऋण खाते का मूलधन/ब्याज दो वर्ष से अधिक अवधि से अतिरिक्त हो अथवा इकाई के अधिकतम वास्तविक मूल्य का 50 प्रतिशत या अधिक अपक्षरण हुआ हो। वे ईकाइयां इस सुविधा का लाभ उठा सकती है।

सन्दर्भ कोष

सन्दर्भ कोष

- सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- शोध लेख एवं पत्र
- समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ

BIBLIOGRAPHY

A. Books :-

A. Vaidyanathan : Bovine Economy in India, Oxford and IBH Pub. Company, New Delhi, 1988.

Alok Ghosh : Indian Economy, Its nature and problems, The world press, Calcutta, 1980.

Ashok Rudra : Indian Agriculture Economics – Myths and Realities.

Ashok Mehta : Economic planning in India, New Delhi, 1970.

A.M. Khusro and A.N. Agrawal : The problem of Cooperative farming in India, Asia Publishing House Bombay, 1961.

A.M. Khusro : Unfinished Agenda, India and the world economy, New Age International Limited, New Delhi.

A.N. Agrawal : Indian Agriculture, Vikas Publishing House, New Delhi, 1984.

A.N. Agrawal : Indian Economy, Wishwa Prakashan, New Delhi, 1995.

A.K.Desai : Rural Sociology in India, Popular Prakashan, Bombay, 1984.

A.K. Desai : India's path of Development, Popular Prakashan, Bombay 1984.

A.D.Sharma and Geetika : GATT and WTO, Kitab Mahal, Allahabad, 1995.

Allen Mounder and Kazushi Obkawa : Growth and equity in Agricultural

Development, proceeding of Eighteenth International conference of Agriculture Economics.

B.P. Sinha : Glimpses of Cooperation in Indian Context, Himalaya Publishing House, Bombay, 1991.

B.C. Tondon : Economic Planning Theory and Practice, Chaitrya Publishing House, Allahabad, 1972.

Bipin Behari : Rural Industrialization in India, Vikas Publishing house, New Delhi, 1976.

B.R.Ambedkar : The Evolution of Provincial Finance in British India, P.S.King and Son Limited, London. 1925.

B.R.Ambedkar : The problem of the Rupee, P.S.King and Son Limited, London, 1923.

B.S.Minhas : Planning and the Poor, S.Chand & Company, New Delhi, 1974.

B.L.Raina : Population policy, B.R.Publishing corporation, New Delhi, 1988.

Biplab Das Gupta : The New Agrarian Technology and India.

C.N.Vakil : Poverty, Planning and inflation, Allied Publishers, Bombay, 1978.

C.N. Vakil : Janata Economics Policy, The Macmillan Company of India, New Delhi, 1979.

C.H.Shah (ed) : Agricultural Development of India, Policy and Problems, Orient Longman, Bombay,

1979.

C.D.Wadhva (ed) : Some Problems of India's Economic Policies, Tata Mc Graw Hill Publishing Company, New Delhi, 1977.

C.H.Hanumantha Rao : Technological change and the distribution of Gains in Indian Agriculture, Macmillan, New Delhi, 1975.

C.H.Hanumantha Rao : Agricultural Growth, Rural Poverty and Environmental Degradation in India, Oxford University Press, Delhi, 1994.

C.T.Kurien : Poverty planning and social Transformation, Allied publishers, New Delhi, 1978.

D.P.Dhar : Planning and social change, Arnold Heinmann, New Delhi, 1976.

D.N.Dwivedi : Readings in Indian Public Finance, Chankya Publication, Delhi, 1981.

D.L. Narayana, L.K. Deshpandey & R.K.Sinha : Planning for Employment, Sterling Publishers, New Delhi, 1980.

Dada Bhai Naroji : Poverty and Un-British Rule in India, London, 1901.

E.F.Schumecher : Small is beautiful, Blend and Briggs Limited, Great Britain, 1973.

Fairfield Oshorn : Our Plundered Plannet, 1948.

G.P. Mishra : Some aspects of change in Agrarian Structure, Sterling Publishers, New Delhi, 1977.

Gunnar Myrdal : Asian Drama, An Enquiry into the Poverty of Nations, 1968.

Gerald M. Meier (ed) : Leading issues in Economic Development, Oxford University Press, New York, 1964.

H.D. Malviya : Land Reforms in India, New Delhi, 1955.

I.C.A.R. : Handbook of Agriculture, Indian Council of Agricultural Research, New Delhi, 1980.

I.C.S.S.R. : A Survey of Researches in Economics, Vol. II Allied Pub., New Delhi, 1975.

I.C.S.S.R. : A Survey of Researches in Economics, Vol. IVAllied Pub., New Delhi, 1975.

I.S.A.E. : Agricultural Development in India -- the next stage, Himalaya Publishing House Bombay, 1988.

John W. Mellor : Economics of Agricultural Development, Vora & Company, Bombay, 1969.

J.J. Anjaria : Essay in Planning and Growth, Vora & Company, Bombay, 1972.

J.H.Boeke : Economics and Economic Policy of Dual Societies, Newyork, 1953.

J.K. Mehta : Economics of Development, Principles and Policies, Allahabad, 1971.

J.K. Gailbraith : Money : Whence it came, where it went, Indian Book Company, New Delhi, 1975.

J.K. Gailbraith : The Affluent Society, Penguin Book, 1958.

R.N. Bhargavas : Essay on Indian Economic Problems, Chugh Publications, Allagabad, 1980.

R.N. Bhargavas : Theory and working of Union Public Finance in India.

J.N.Bhagwati : Economics of Under-Development Countries, London, 1966.

J.N.Mongia : India's Economic Policies, Allied Publishers, New Delhi, 1980.

K.L. Sharma : Social Stratification in India, Manohar Publishers, New Delhi, 1992.

K.T.Shah : Federal Finance in India, Bombay, 1929.

L.K. Jha : Economic Development : Ends and Means, Bombay, 1973.

M.B.Nanavati and J.J. Anjaria : The Indian Rural Problem, The Indian Society of Agricultural Economics, Bombay, 1970.

Muchkund Dubey : An Unequal Treaty, World Trading Order, GATT, New Age International Publishers, New Delhi, 1996.

M.N.Srinivas : Indian Social Structure, Hindustan Publishing Corporation, Delhi 1991.

M.L.Dantwala (ed) : Indian Agriculture Development Sice Independence, Oxford and I.B.H. Publishing Company, Private Limited, 1991.

Mahesh Chand & V.K.Puri : Regional Planning in India, Allied Publishers Private Limited, New Delhi, 1993.

Madhav Godgil and Ram Chand : The Fissured Land, An Ecological

Nabagopal Das : The Runaway Rupee, The world Press Private Limited, Calcutta 1925.

N.I.R.D. : Rural Transformation Readings, N.I.R.D. Hyderabad.

N.I.R.D. : Two Blades of the Grass, N.I.R.D. Hyderabad.

M.S.Randhawa : A History of Agriculture in India, Indian Council of Agriculture Research, Vol. I,II,III and VI, New Delhi, 1980.

ISAE : Livestock Economy of India, Oxford and

IBH Company Private Ltd. New Delhi. 1989.

P.R. Brahmananda : Planning for Futureless Economy, Himalaya Publishing House, Bombay, 1978.

P.R. Brahmananda : Growthless inflation by means of stockless money, Himalata Publishing House, Bombay.

Pramit Chaudhary : The Indian Economy, Vikas Publishing House, New Delhi, 1978.

P.C. Joshi : Land Reforms in India, New Delhi, 1975.

P.C. Joshi : International Aspects of Agricultural Development, New Delhi, 1987.

P.K.Bardhan : Land, Labour and Rural Poverty, New Delhi, 1984.

P.C. Baasil : Agrivultural Problems of India, I.B.H. and Oxford,Publishing Company, New Delhi, 1981.

I.S.A.E. : Agricultural Development in India - The Next Stage, Himalaya Publishing House, Bombay, 1988.

John W. Mellor : Economics of Agricultural Development, Vora and Company, Bombay, 1969.

J.K. Mehta : Economics of Development, Principles and Policies, Allahabad, 1971.

M.L. Dantwala (ed): Indian Agricultural Development since Independence, Oxford and I.B.H. Publishing Company, Private Limited, 1991.

R.K. Govil & B.B. Tripathi : Agricultural Economy of India, Kitab Mahal, Allahabad, 1996

R.K. Govil : Mobilisation of Resources Through Agricultural Taxation in Uttar Pradesh, Orient Publication Allahabad, 1975.

S.C. Dubey : Indian Village, Cornell University Press, Ithaca, 1955

Srinivas Thakur : Indian Economic Development, sterling Publishing House, New Delhi, 1982.

Tara Shukla : Capital Formation in Indian Agriculture, Vora Company, Bombay, 1965.

Uma Kapila (ed) : Indian Economy since Independence, Academic Foundation, New Delhi, 1993

V.S. mahajan : Indian Agriculture and Rural Development, Deep and Deep Pub,. New Delhi.

V.K.R.V. Rao : India's National Income 1950-1980, Sage Publication, New Delhi, 1983

Vadilal Dagli : Infrastructure for Indian Economy, Vora and Company, Bombay, 1970

Witfreed Malenbaum : Prospects for India's Development, George Allen and unwin, 1962

W. Arthur Lewis : Economic Development with Unlimited Supplies of Labour, The Manchester School, May 1954.

Ved P. Gandhi : Some Aspects of India's Tax Structure – An Economic Analysis, Vora and company, Bombay, 1972.

B. Reports :

- Report on the Improvement of the Indian Agriculture (J.A. Voelcker Committee) Govt. of India, Delhi, 1901.
- Report of the Committee on Cooperation (Maclagan Committee) Government of India, New Delhi, 1915.
- Report of the Food-Grains Policy Committee (Sir Theodore Gregory Committee) Govt. of India, Delhi 1943.
- Report of Grow more food Enquiry Committee, Government of India, New Delhi, 1952.
- Report of village and small industries Committee (Karve Committee) Government of India, New Delhi 1955.
- Agricultural Labour in India, Labour Bureau Pamphlet Series 7, Government of India, 1964.
- Report of the Jha Committee on Foodgrain Prices for 1964-65. Government of India, New Delhi 1965.
- Report of the Foodgrain Policy Committee, Government of India, New Delhi 1966
- Report of National Commission on Labour, Government of India, New Delhi 1969.
- Report of the working group on Rural Banks (Chairman M. Narasimham) Government of India, New Delhi 1975
- Report of the Review Committee on Regional Rural Banks (Chairman M.L. Dantwala) R.B.I. Bombay, 1978
- Report of the working group on District Planning (Chairman C.H. Hanumantha Rao) Planning Commission, New Delhi, 1985.

- Report of the Committee to Review the Exisiting Administrative Arrangmaents for Rural Development and Poverty Elleviation Programme, CAARD (G.V.K. Rao Committee) Government of India, New Delhi 1985.
- Report of the working Group on Regional Rural Banks (Chairman S.M. Kelkar) Government of India, New Delhi 1986
- World Resources, World Resource Institute, Washington, D.C., 1977.
- India Development Region, 1977 Indira Gandhi Institute of Development Research, Mumbai, 1997

C. JOURNALS :

- Agricultural Situation in India, Directorate of Economics and Statistics, Ministry of Agriculture, Government of India, New Delhi .
- Economic and Political Weekly, Bombay.
- Indian Economic Review, Delhi School of Economics.
- Indian Economic Journal, Indian Economic Association.
- Indian Journal of Agricultural Economics, Indian Society of Agricultural Economics.
- Indian Journal of Labour Economics, Indian Society of Labour Economics.
- Indian Farming, Indian Council of Agricultural Research, New Delhi.
- Kurukshetra, Ministry of Rural Development, Governement of India.
- Khadi Gramodyog, Khadi and Village Industries Commission, Bombay.
- Margin, National Council of Applied Economic Research, New Delhi.
- New Agriculturist, Bioved Research Society, Allahabad.
- Seminar, Malhotra Buildings, Janpath, New Delhi.
- State Bank of India, Monthly Review, State Bank of India Central Office, Bombay.
- The Hindu Survey of Indian Agriculture, Madras.
- Varta, Bhartiya Arthik Sodh Sansthan, Allahabad.
- World Focus, South Extension II, New Delhi.
- Yojana, Yojana Bhavan, New Delhi.

समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ

समाचार पत्र :-

1. द इकोनोमिक एण्ड पालिटिकल वीकली (पिछले कई वर्षो की)
2. द इकोनोमिक टाइम्स (पिछले कई वर्षो की)
3. टाइम्स आफ इण्डिया (पिछले कई वर्षो की)
4. न्यू भारत टाइम्स, लखनऊ (पिछले कई वर्षो की)
5. दैनिक जागरण, बाँदा (पिछले कई वर्षो की)
6. दैनिक जागरण, बाँदा (पिछले दो वर्षो का)
7. अमर उजाला, कानपुर (पिछले दो वर्षो का)
8. जनसत्ता, नई दिल्ली (पिछले दो वर्षो का)
9. स्थानीय समाचार पत्र (पिछले दो वर्षो का)
10. नव भारत टाइम्स (पिछले दो वर्षो का)

पत्रिकायें :-

1. इण्डिया टुडे (पिछले कई वर्षो की)
2. ओरियन्टल (पिछले दो वर्षो की)
3. कोलीग (पिछले कई वर्षो की)
4. योजना, 542, योजनाभवन, नई दिल्ली (पिछले कई वर्षो की)
5. कुरुक्षेत्र (पिछले कई वर्षो की)
   सं0 कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467 कृषि भवन, नई दिल्ली (विभिन्न अंक)
6. सांख्यिकी डायरी (पिछले कई वर्षो की)
   अर्थ एवं संख्या प्रभाग, कानपुर (विभिन्न अंक)
7. उत्तर प्रदेश वार्षिकी (पिछले कई वर्षो की)
   निदेशालय सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, लखनऊ (विभिन्न अंक)